हमारे युग का एक नायक

लेर्मोन्तोव

अनु. नीलाभ

लेर्मोन्तोव ने गहराई से तत्कालीन रूसी समाज
और अपनी पीढ़ी के बारे में सोचा और उ
शक्तियों को पहचानने की कोशिश की, जो एव
पूरी-की-पूरी पीढ़ी को विकसित होने से रोक रह
थीं। जैसा कि 'हमारे युग का एक नायक' क
भूमिका में उन्होंने लिखा :

"प्यारे दोस्तो, 'हमारे युग का एव
नायक' एक चित्र ज़रूर है, मगर किसी एव
व्यक्ति का नहीं; यह हमारी पूरी पीढ़ी की, बहा
पर आयी हुई, पूरी तरह विकसित, सारी बुराइय
के आधार पर तैयार की गयी तस्वीर है। शाय
आप फिर कह उठेंगे कि कोई भी आदमी इस ह
तक गिरा हुआ और चरित्रहीन नहीं हो सकता; मेर
उत्तर है कि अगर आप दुखान्त नाटकों औ
रोमानी कथाओं के उन सारे के सारे खलनायक
के अस्तित्व में विश्वास कर सकते हैं, तो इसी बा
का यक़ीन क्यों नहीं कर पाते कि कोई पेचोरिन भ
था। अगर आप इससे अधिक भयंकर औ
कुत्सित पात्रों की सराहना कर सकते हैं तो फि
इसी पात्र के प्रति आप कुछ और दयालु क्यों नह
हो पाते, भले ही वह काल्पनिक हो? क्या इसक
कारण यह नहीं है कि आपकी अपेक्षाओं औ
कामनाओं से कहीं अधिक सच्चाई इस पात्र
है?...लोगों को इस कदर मिठाइयाँ खिलायी गय
हैं कि उनका हाज़मा बुरी तरह बिगड़ चुका है
अब कड़वी दवाइयों और तेज़ाबी सच्चाइयों क
ज़रूरत है।"

'हमारे युग का एक नायक' इन्ह

तेज़ाबी सच्चाइयों का एक चित्र है।

हमारे युग
का
एक नायक

हमारे युग का एक नायक
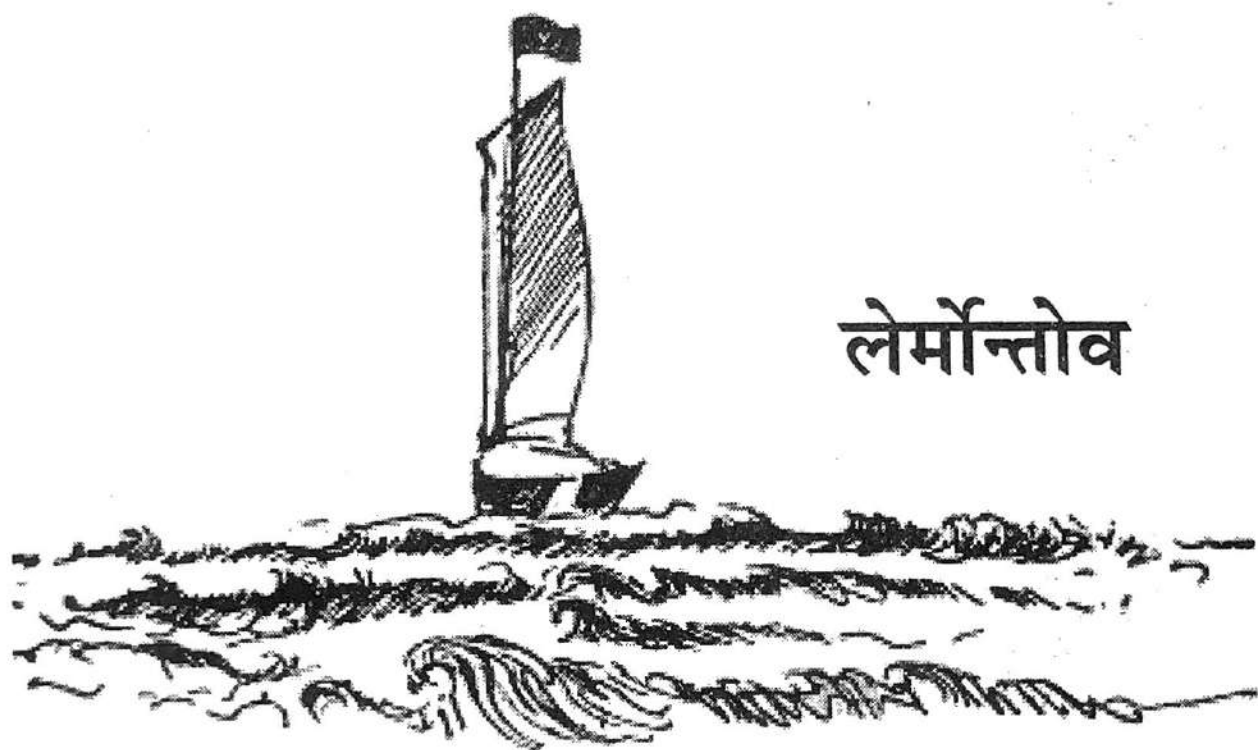
लेर्मोन्तोव

अनुवाद
नीलाभ

उत्सवा प्रकाशन
इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : 2012

कापीराइट © : प्रकाशकाधीन

मूल्य : 275.00

प्रकाशक : उत्सवा प्रकाशन,
5–ए/8 ख़ुसरोबाग़
रोड, इलाहाबाद

कम्प्यूटर कम्पोजिंग : एस.के.कम्प्यूटर्स,
इलाहाबाद

मुद्रक : केशव प्रकाशन,
इलाहाबाद
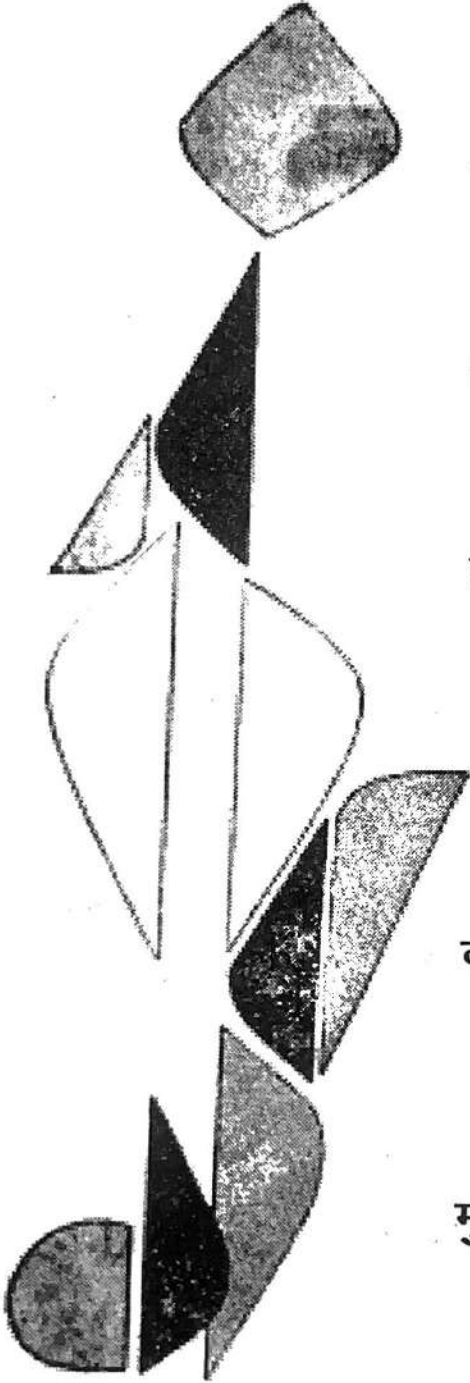
अनुक्रम
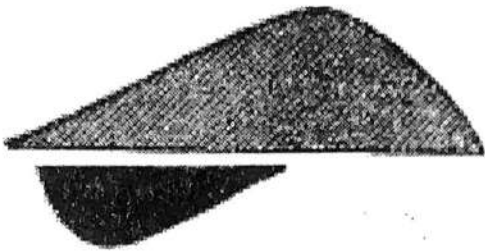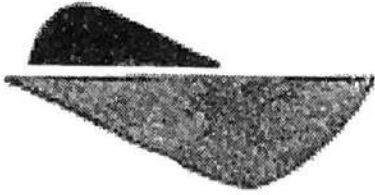
भूमिका

किसी भी लेखक की कृतियों का सही मूल्यांकन करने के लिए, उसकी कला और उसके कथ्य को सम्पूर्णता में समझने के लिए और परवर्ती लेखकों पर ही नहीं, परवर्ती समाज पर भी उसका प्रभाव रेखांकित करने के लिए, उस लेखक के युग को जानना बहुत ज़रूरी है। तभी उसकी कृतियों की मुख्य प्रवृत्तियों के साथ-साथ हम उन सूक्ष्म अन्तरधाराओं को समझ सकते हैं, जो लेखक के चाहे-अनचाहे, उसके युग की ध्वनि के रूप में, उसकी कृतियों में समाहित हो जाती हैं और जो किसी रचनाकार को अपने पूर्ववर्ती, समकालीन तथा परवर्ती रचनाकारों से जोड़ने के साथ-साथ, उन से अलग भी करती हैं। लेखक के जीवन और समाज तथा उसके कृतित्व में परम्परा की यही खोज और उसका रेखांकन लेखक के युग तथा उसके प्रति लेखक के रुख़ की तलाश किसी भी सच्ची और संवेदना-भरी समीक्षा का आधार है, जिसके बिना रचनाकार महज़ एक विशिष्ट, दैवी और दुर्बोध अस्तित्व बन कर रह जाता है। लेर्मोन्तोव के इस उपन्यास 'हमारे युग का एक नायक' के बारे में कुछ भी कहते वक्त उपरोक्त आधार इसलिए भी एक विशेष महत्व ग्रहण कर लेता है, क्योंकि कृति का नाम (भले ही व्यंग्य में) लेखक की दृष्टि को उसके उद्देश्य और उसके लक्ष्य को पाठकों के सामने स्पष्ट कर देता है। लेकिन किसी पाठक के मन में कोई भ्रम न रह जाय, इसलिए अपनी अत्यन्त संक्षिप्त, किन्तु मार्मिक, भूमिका में लेर्मोन्तोव ने यह साफ़ कर दिया है कि :

" 'हमारे युग का एक नायक' एक चित्र ज़रूर है, पर किसी एक व्यक्ति का नहीं, यह हमारी पूरी पीढ़ी की बहार पर आयी हुई, पूरी तरह विकसित सारी बुराइयों के आधार पर तैयार की गयी तस्वीर है।"

इसलिए इस कृति पर कुछ भी कहने से पहले, उस 'आधार' को समझना ज़रूरी होगा, जिस पर कि लेर्मोन्तोव ने अपनी इस महान 'तस्वीर' की रचना की।

हालाँकि लेर्मोन्तोव के महान पूर्ववर्ती और समकालीन – पुश्किन – से पहले, रूसी साहित्य – विशेषकर काव्य – की एक सुनिश्चित परम्परा मिलती है, लेकिन दरअसल आधुनिक रूसी साहित्य की शुरुआत पुश्किन ही से होती है। यह शुरुआत १८१२ में रूस पर नेपोलियन के आक्रमण से गहरे स्तर पर जुड़ी हुई है, जब पहली बार फ्रांसीसी आक्रमण के प्रतिरोध की प्रक्रिया में रूसी जनता अपने राष्ट्रीय गौरव और अपने विशाल देश की अपरिमित शक्ति के प्रति जागरुक हुई थी। पहले से चली आने वाली काव्य-धारा को पुश्किन ने उपलब्धि के उच्चतम शिखरों पर तो पहुँचाया, साथ ही एक ऐसे पुष्ट कथा-साहित्य की दाग़-बेल भी डाली, जो लेर्मोन्तोव के हाथों से होती हुई, आगे चल कर, गोगोल, तॉल्स्तोय, दॉस्तोयेव्स्की, तुर्गनेव, चेख़व और गोर्की जैसे महान रचनाकारों की अविस्मरणीय कृतियों में विकसित हुई।

रूसी साहित्य में लेर्मोन्तोव का उल्लेख, उनके पूर्ववर्ती – पुश्किन – के साथ-साथ ही होता है और ये दोनों नाम कुछ इस तरह एक के बाद एक आते हैं, जैसे प्रारम्भ के बाद विकास, बीज के बाद कोंपल! एक रूसी आलोचक ने पुश्किन से लेर्मोन्तोव की तुलना करते हुए लिखा है :

"हमारे पुरखे जब इन नामों की तुलना या उल्लेख करते तो वे इनकी मिसाल सूरज और चाँद से दिया करते थे। इन पुराने प्रतीकों में ग़ज़ब की सच्ची अन्तर्दृष्टि है। चाँद की ज्योत्स्ना महज़ सूर्य के प्रकाश का परावर्तन ही नहीं, वरन उसका रूपान्तरण भी है। पुश्किन के बिना हम लेर्मोन्तोव को नहीं देख सकते वह महज़ पुश्किन का परवर्ती ही नहीं, उसका उत्तराधिकारी भी है। लेकिन लेर्मोन्तोव का कृतित्व अपने आप में मूल्यवान और महत्वपूर्ण है -- मौलिक और अननुकरणीय; वह रूसी कला के विकास में एक नये कदम को रेखांकित करता है।"

हालाँकि १८४१ में अपनी अकाल-मृत्यु से पहले लेर्मोन्तोव का साहित्यिक जीवन सिर्फ़ दस-बारह वर्षों का है, जिस अवधि में उन्होंने दो-ढाई सौ कविताएँ, कुछ कहानियाँ और नाटक, और सिर्फ़ एक उपन्यास 'हमारे युग का एक नायक' लिखा, लेकिन यह युग रूसी साहित्य और इतिहास का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण दौर है, जब एक ओर रूस की सामन्ती शासन-प्रणाली और उसके आधार भू-दासता के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द हुई और दूसरी ओर कथा और उपन्यास ने आगे बढ़ कर साहित्य में काव्य के एकाधिकार को समाप्त कर दिया और यों रूसी साहित्य के स्वर्ण-काल का प्रारम्भ हुआ। यह आकस्मिक नहीं है कि कवियों के रूप में साहित्यिक जीवन शुरू करके पुश्किन और लेर्मोन्तोव, दोनों ही, अन्त में गद्य विशेषकर कथा-साहित्य की ओर उन्मुख हुए और उन्होंने कविता और कहानी दोनों विधाओं को अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा से समृद्ध किया। हालाँकि कविता में

पुश्किन का स्थान अद्वितीय बना रहा, लेकिन यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि गद्य में लेर्मोन्तोव ने पुश्किन को कहीं पीछे छोड़ दिया।

पुश्किन (जन्म १७९९) और लेर्मोन्तोव (जन्म १८१४) के बीच फ़ासला महज़ पन्द्रह वर्षों का है, एक ही परिवार के दो भाइयों के बीच अक्सर उमर का इससे भी ज़्यादा अन्तर सम्भव है। लेकिन यहाँ ये पन्द्रह वर्ष, उमर के दो पड़ावों का नहीं, बल्कि युगों का, और दो व्यक्तियों के जीवन का नहीं, वरन दो पीढ़ियों के जीवन का, अन्तर द्योतित करते हैं।

o

कवि, व्यक्ति और सांस्कृतिक व्यक्तित्व के रूप में पुश्किन का विकास उन वर्षों में हुआ, जब रूस अपने राष्ट्रीय गौरव के प्रति सहसा जागरुक हुआ था। नेपोलियन के आक्रमण का प्रतिरोध, फ्रांसीसी सेना का सामना और अन्ततः उसे रूसी धरती से खदेड़ देने की प्रक्रिया ने सभी रूस-वासियों को अपने देश की रक्षा में एकजुट होने की प्रेरणा दी थी और साथ ही रूसी जनता के मन में अर्से से सँजोयी अनेक आकांक्षाएँ फिर से जगा दी थीं। जनता की बढ़ती हुई जागरुकता ने, विदेशी आक्रमण के ख़तरे से जूझने की प्रक्रिया से जुड़ कर, रूसी समाज और राजनीतिक ढाँचे की आन्तरिक व्यवस्था में परिवर्तन की माँग बुलन्द करना शुरू कर दिया था। रूस भूदास-प्रथा पर आधारित एक सामन्ती देश था एक तानाशाह द्वारा शासित! बाग़ी दिमाग़ों में भूदासों की मुक्ति और तानाशाही का ख़ात्मा, एक-दूसरे से जुड़े हुए थे। ये दोनों लक्ष्य, उस संक्षिप्त, किन्तु महान शब्द 'स्वाधीनता' में अत्यन्त व्यावहारिक और वास्तविक अर्थ भरते थे और यह शब्द उस युग के सभी प्रगति-कामी लोगों की ज़बान पर था।

पुश्किन इस स्वाधीनता के अमर गायक थे और उस युग के सभी विद्रोहियों की आशाओं-आकांक्षाओं में पगी उनकी कला, इन आशाओं-आकांक्षाओं को न केवल प्रतिध्वनित करती थी, वरन उन्हें आगे भी बढ़ाती थी। इन आशाओं-आकांक्षाओं की राजनीतिक अभिव्यक्ति १४ दिसम्बर १८२५ को हुई, जब सेना के अभिजात-वर्गीय अफ़सरों की कुछ टुकड़ियों ने ज़ार के ख़िलाफ़ विद्रोह कर दिया। रूस के तख़्त पर अपने भाई, ज़ार अलेक्ज़ान्द्र के बाद ज़ार निकोलस प्रथम बैठा था और उसने बेहद सख़्ती से इन 'दिसम्बरवादियों' का दमन किया, पाँच विद्रोहियों को फाँसी दे दी और बाकियों को कारागार या साइबेरियाई खदानों में भेज दिया। इन विद्रोहियों की विफलता का मुख्य कारण था -- व्यापक जन-सहयोग का अभाव! अत्यन्त ऊँचे उद्देश्यों के लिए उन्होंने जनता के नाम में, लेकिन जन-सहयोग के बिना, कार्य किया। और यूँ इन युवा विद्रोहियों

की निःस्वार्थ भावना इसी एकाकी दुस्साहस के कारण प्रशंसनीय तो सिद्ध हुई, लेकिन दुख और उत्पीड़न की छाया को और भी गहरा बना गयी।

इस पर भी, मुक्ति का यह आन्दोलन अपनी वास्तविक अभिव्यक्ति से कहीं अधिक व्यापक था। अभिजात-वर्गीय परिवारों में से बहुत कम ऐसे थे, जिनके निकट या दूर के सम्बन्धी इस विद्रोह से न जुड़े रहे हों। निष्फलता और दमन के बावजूद इन विद्रोहियों को भरपूर सहानुभूति मिली थी और यद्यपि पुश्किन निकोलस के दमन का शिकार होने के बच गये थे, लेकिन उसकी सन्देह-भरी नज़रों से नहीं बच पाये थे। वस्तुतः वे इस पूरे आन्दोलन के गायक और प्रेरणादायक थे। उनके काव्य में 'दिसम्बरवादियों' के विचार ही नहीं, उनकी जीवन-दृष्टि भी झलकती थी और यह जीवन-दृष्टि उनके सपनों जैसी ही पारदर्शी और मस्ती से भरपूर थी – सिर घुमा देने वाली शराब की तरह तेज़ और चमकती हुई – उनकी आकांक्षाओं की तरह युवा और सक्रिय!

'स्वाधीनता,' 'गौरव' और 'प्रेम' जैसे शब्दों की मादक ध्वनि इन विद्रोही, अभिजात-वर्गीय युवकों के बीच निरन्तर गूँजती रहती।

ऐसा था पुश्किन का युग और स्वयं कवि की मनःस्थिति, जब किशोर लेर्मोन्तोव अपने महान पूर्ववर्ती की रचनाओं को बार-बार पढ़ कर उन्हें कण्ठस्थ कर रहे थे।

०

लेकिन लेर्मोन्तोव का जीवन और जीवन-दर्शन बिलकुल दूसरे की नक्षत्रों की छाया में, बदली हुई परिस्थितियों में विकसित हुआ। ज़िन्दगी के प्रति उनके रवैये पर पुश्किन से कतई भिन्न प्रभावों और भावनाओं का रंग चढ़ा था। इसका कारण महज़ उनका अपना अलग व्यक्तित्व ही नहीं, वरन बदले हुए हालात भी थे। जैसा कि लेर्मोन्तोव के समकालीन क्रान्तिकारी विचारक हर्ज़ेन ने लिखा :

"१८२५ के तुरन्त बाद के कुछ वर्ष भयानक थे। इस वास्तविकता से उबरने में लोगों को कम-से-कम दस वर्ष लगे कि सब कुछ के बाद भी वे ग़ुलाम और उत्पीड़ित थे। उस काल की प्रमुख भावना गहरी हताशा और व्यापक अवसाद की थी। उच्च-वर्गीय समाज ने घृणित और घटिया उत्साह के साथ सभी मानवीय भावनाओं, सभी मानवतावादी विचारों को दबा देने की जल्दबाज़ी दिखायी। शायद ही कोई अभिजात-वर्गीय परिवार था, जिसका कोई-न-कोई रिश्तेदार निर्वासित विद्रोहियों में न हो, लेकिन मातमी लिबास पहनने या किसी और तरीके से अपने दुख को व्यक्त करने का साहस किसी में नहीं था। जब वे ग़ुलामी के इस उदास कर देने वाले परिदृश्य का कोई सार्थक विकल्प तलाश करते जब वे किसी शकुन या आशा की

खोज करने के प्रयत्न में गहराई से इस सब पर सोचते तो वे ख़ुद को दिल-दहलाने वाले, भयावह विचारों के रू-ब-रू पाते।"

तानाशाही के ख़िलाफ़ उठाये गये इस कदम, इसके दमन और बाद के वर्षों के व्यापक नैराश्य तथा अवसाद का गहरा प्रभाव लेर्मोन्तोव पर पड़ा, क्योंकि उन्होंने इन्हीं वर्षों में बचपन से किशोरावस्था और किशोरावस्था से युवावस्था में कदम रखा। लेकिन उनके सार्वजनिक जीवन की त्रासदी, उनकी निजी ज़िन्दगी के दुख से कुछ इस तरह जुड़ी हुई थी कि दोनों को अलग करना सम्भव नहीं था। उनकी संक्षिप्त-सी ज़िन्दगी में – मौत के समय वे मुश्किल से सत्ताईस वर्ष के थे – इतनी दुखद घटनाएँ एक साथ समायी हुई थीं, जो इससे चार गुनी उम्र को कटु बनाने के लिए पर्याप्त थीं।

o

मिखाइल यूरेविच लेर्मोन्तोव का जन्म २/३ अक्टूबर १८१४ की रात मॉस्को में हुआ। पिता एक ग़रीब सैनिक अफ़सर थे और माँ बेहद अमीर घराने की एकमात्र वारिस। अभी लेर्मोन्तोव पालने में ही थे कि उसकी ज़िन्दगी में एक ऐसा पारिवारिक नाटक शुरू हो गया, जिसके परिणाम बेहद अप्रिय और बच्चे की ज़िन्दगी को बहुत दूर तक प्रभावित करने वाले थे। लेर्मोन्तोव ने मुश्किल से दो वर्ष पूरे किये थे कि उनकी माँ का देहान्त हो गया और बच्चे की देख-रेख और शिक्षा-दीक्षा उनकी नानी के ज़िम्मे आ पड़ी जो ख़ुद एक शक्तिशाली व्यक्तित्व की मालिक और तानाशाह की तरह निरंकुश थीं। दबंग और रोबदार नानी अपने मातृहीन नाती को तो बेहद प्यार करती थीं, लेकिन अपने दामाद के प्रति उनके मन में उपेक्षा और नफ़रत के अतिरिक्त और कुछ न था। लेर्मोन्तोव की शिक्षा-दीक्षा और लालन-पालन में वे उसके पिता का रत्ती भर हस्तक्षेप बरदाश्त करने को तैयार न थीं। बच्चा अपनी माँ की सम्पत्ति से वंचित न हो जाय, इस ख़याल से उसके पिता को लाचार हो कर अपनी दबंग सास के आगे घुटने टेकने पड़े और यूँ बालक लेर्मोन्तोव बड़े-बुज़ुर्गों की भावनाओं और आवेगों का खिलौना बन कर रह गये और उनका पूरा बचपन कटु, पारिवारिक झगड़ों की काली, दुख-भरी छाया-तले गुज़रा।

बचपन ही से लेर्मोन्तोव के मन-मस्तिष्क पर रूस की सामन्ती व्यवस्था और भूदास-प्रथा की गहरी और बेचैन कर देने वाली छाप पड़ी थी। ऐसी ही स्थितियों में पले अभिजात-वर्ग के हज़ारों बच्चे इन दृश्यों को सामान्य रूप से ग्रहण करते और इन्हें सदा-सर्वदा के लिए स्थापित उस व्यवस्था का एक अंग भर मानते थे। इन्हीं विचारों की छाया में बचपन पार करके, वे युवावस्था और अन्ततः बुढ़ापे में प्रवेश करते और ख़ुद भी उस घृणित दास-प्रथा में योग देते हुए दासों के स्वामी बनते। लेकिन लेर्मोन्तोव ने बचपन में अपने निजी पारिवारिक जीवन में जो कड़वाहट भोगी थी, उसने उन्हें दूसरों के दुखों के

प्रति अतिरिक्त संवेदनशील बना दिया था। और जहाँ उनके समकालीनों को सुख नज़र आता, वहाँ लेर्मोन्तोव को दुख-तकलीफ़, व्यथा और उत्पीड़न के दर्शन होते। सम्पन्नता और ग़रीबी, निरंकुश शक्ति और अधिकारों के नितान्त अभाव के बीच जो अन्तर्विरोध थे, उन्हें लेर्मोन्तोव बचपन ही से, अपने सहज ज्ञान द्वारा समझने और महसूस करने लगे थे और इन अन्तर्विरोधों के कारण उस छोटी-सी उम्र में ही उनका हृदय आहत होता रहता।

इस बीच, एक नन्हे नवाबज़ादे की तरह लेर्मोन्तोव का लालन-पालन हुआ; अपने तिरस्कृत पिता से भेंट-मुलाकात करने की इच्छा के सिवा उनकी हर इच्छा पूरी की जाती। लेकिन यह क्रम उतनी ही देर जारी रहा, जब तक लेर्मोन्तोव अपनी नानी की छत्र-छाया में पलते रहे और हर सम्भव इच्छा पूरी होने की यह स्वतन्त्रता - जिसे सैंकड़ों लोगों को ग़ुलाम बना कर हासिल किया गया था, जो उसकी निरंकुश नानी की सम्पन्नता का आधार थे - जल्द ही समाप्त हो गयी, क्योंकि घर की चार-दीवारी के बाहर एक क्रूर और निर्दय संसार उस किशोर की प्रतीक्षा कर रहा था - एक ऐसा संसार, जो किसी भी रूप में अपने बने-बनाये नियमों का विरोध करने वाले की हर इच्छा या रुचि को कुचलने के लिए तैयार खड़ा था। परिस्थितियों के विरुद्ध इस संघर्ष में विजयी होने और अवश्वम्भावी के आगे घुटने न टेकने के लिए काफ़ी दिमाग़ी ताकत और आन्तरिक दृढ़ता की ज़रूरत रही होगी।

इस शत्रुता-भरे, प्रतिकूल संसार में निश्चय ही लेर्मोन्तोव गर्व से सिर ऊँचा उठाये, उन सारी घटिया और टुच्ची स्थितियों का सामना करते रहे, जो उस घृणित व्यवस्था की उपज थीं जब तक कि उस संसार ने, लेर्मोन्तोव को एक दुर्दम प्रतिद्वन्द्वी के रूप में स्वीकार करते हुए, रास्ते से हटाने की योजना न बना ली। लेकिन इस घटना के घटित होने में अभी पन्द्रह वर्ष बाकी थे और इस बीच किशोर लेर्मोन्तोव जवानी की दहलीज़ें पार करते हुए, एक पक्का-पुख़्ता आदमी बन गये।

इन बारह-पन्द्रह वर्षों की कहानी सीधी-सादी और मुख़्तसर-सी है। चौदह बरस की उमर में लेर्मोन्तोव मॉस्को विश्वविद्यालय से सम्बन्धित एक ऐसे विद्यालय में दाख़िल हुए, जहाँ अमूमन अभिजात-वर्गीय छात्र ही भरती होते थे और दो वर्ष बाद उन्होंने मॉस्को विश्वविद्यालय में पढ़ाई शुरू की। १८३२ में अपने वर्ग तथा सामाजिक परिवेश के अन्य युवकों की तरह सैनिक जीवन में प्रवेश करने का विकल्प चुनते हुए, लेर्मोन्तोव अफ़सरों के एक विद्यालय में दाख़िल हो गये। यह विद्यालय पीटर्सबर्ग में था और इस विद्यालय में प्रशिक्षण प्राप्त करने के दौरान लेर्मोन्तोव तत्कालीन रूस की इस राजधानी के उच्च-वर्गीय समाज में उठने-बैठने लगे - उस उच्च-वर्गीय समाज में, जिससे वे

इतनी नफ़रत करते थे और जो उलट कर उसके ख़िलाफ़ बाकायदा युद्ध छेड़ देने वाला था। १८३४ में बीस वर्ष की आयु में लेर्मोन्तोव सैनिक विद्यालय से अफ़सरों का पहला ओहदा पा कर निकले और इम्पीरियल गार्ड्ज़ की हुस्सार रेजिमेण्ट में नियुक्त हो गये।

०

यह था उनके जीवन के उन वर्षों का सामान्य, प्रभाव-रहित बाहरी पहलू, जिससे वस्तुतः उनकी आन्तरिक ज़िन्दगी के बारे में कुछ पता नहीं चलता – उस ज़िन्दगी के बारे में, जो विचारों, आवेगों, उत्कण्ठाओं और हर तरह की मानसिक उथल-पुथल से भरपूर थी। इस दौरान लेर्मोन्तोव ने प्रेम किया, तकलीफ़ पायी, बहुत कुछ सोचा और महसूस किया, बहुत कुछ खोया और पाया। और अपनी समस्त भावनाओं और विचारों की सम्पन्नता को उन्होंने कविता में उँडेल दिया। इन्हीं वर्षों में दरअसल कविता के प्रति लेर्मोन्तोव की समर्पित निष्ठा खोजी जा सकती है। कविता लिखने के उनके पहले-पहले प्रयास १८२८ तक ढूँढे जा सकते हैं और १८३२ तक वे लगभग दो सौ गीत, दस लम्बी कविताएँ और तीन नाटक लिख चुके थे। निश्चय ही यह रचनात्मक प्रतिभा का एक प्रबल ज्वार-सा था और इन प्रारम्भिक प्रयासों में उनकी बाद की सशक्त कृतियों के स्रोत स्पष्ट दिखायी देते हैं।

बहुत छोटी उमर से ही लेर्मोन्तोव ख़ुद को पूरी गम्भीरता से कवि मान कर चलने लगे थे और कविता के अतिरिक्त उन्हें अपना भविष्य कहीं और नज़र न आता था। यहाँ तक कि उन्होंने अपनी सख़्त और अत्यन्त व्यावहारिक नानी को भी अपने इन विचारों के प्रति सहमत कर लिया था। सैनिक-छात्र और अफ़सर के रूप में जो वर्दी वे पहनते थे, वह तो सरकारी व्यवस्था से उनके सम्पर्क का बाहरी ढाँचा मात्र थी; समाज से उनके निजी सूत्र तो विश्वविद्यालय और सेना की गतिविधियों के बावजूद कविता के माध्यम से बने थे। और इसीलिए सैनिक-विद्यालय और फ़ौजी जीवन उन्हें अपने इस वास्तविक कार्य-क्षेत्र से डिगा नहीं पाये। इन वर्षों ने उनके लिए अनुभवों और अनुभूतियों और चारों ओर के समाज की दबी-छिपी और स्पष्ट रूप से नज़र आती प्रवृत्तियों का ऐसा महत्वपूर्ण ख़ज़ाना मुहैया कर दिया, जिसे उन्होंने अपनी अद्वितीय प्रतिभा से कविताओं, कहानियों और उपन्यास में अभिव्यक्त किया। 'वादिम' और 'राजकुमारी लिगोव्स्काया' जैसी कहानियाँ और 'मास्करेड' जैसा नाटक इन्हीं दिनों की रचनाएँ हैं।

०

१८३७ का साल लेर्मोन्तोव के संक्षिप्त से जीवन में एक अनोखा महत्व रखता है। यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी ज़िन्दगी का रूप क्या होता, अगर पिस्तौल का वह

धमाका न हुआ होता, जिसकी गूँज रूस के ओर-छोर तक सुनायी दी। १८३७ में रूस के महान कवि पुश्किन द्वन्द्व-युद्ध में मारे गये। पुश्किन की मृत्यु महज़ एक ऐसे कलाकार की ट्रैजिडी नहीं थी, जो राज-दरबार की शक्तियों से अपनी असमान लड़ाई में समाप्त हो गया; न ही वह उस साहित्य की ट्रैजिडी थी, जो अपने नेता से वंचित हो गया था - यह पूरे राष्ट्र की ट्रैजिडी थी, समूची जनता की ट्रैजिडी! ख़ासकर इसलिए कि यह बात छिपी नहीं थी कि वह द्वन्द्व-युद्ध एक साज़िश था और पुश्किन का उसमें मारा जाना एक हत्या थी। पुश्किन की मृत्यु के साथ ही ऐसा प्रतीत हुआ कि आज़ादी के आकांक्षिओं की आख़िरी उम्मीदें भी ख़त्म हो गयीं। पुश्किन पर चलायी गयी गोली के धमाके ने उन बन्दूकों की आवाज़ ताज़ा कर दी, जो 'दिसम्बरवादियों' के ख़िलाफ़ चलायी गयी थीं। पुश्किन की मृत्यु के साथ आज़ादी पर तानाशाही की, जनता पर सामन्तशाही की, प्रगतिशीलता पर प्रतिक्रियावादी शक्तियों की और रोशनी पर अन्धकार की विजय हुई। लेकिन यह विजय संक्षिप्त थी।

आज़ादी के उस महान कवि के हाथों के गिरती हुई मशाल को एक अपेक्षाकृत अल्प-ख्यात कवि ने आगे बढ़ कर थाम लिया। पुश्किन की मौत के सदमे से बचैन हो कर लेर्मोन्तोव ने उस अवसर पर एक कविता लिखी, जो न केवल हत्यारे के ख़िलाफ़, वरन उन तमाम लोगों के ख़िलाफ़ एक प्रबल प्रत्युत्तर था, जिन्होंने पुश्किन के हत्यारे को उस दुष्कृत्य के लिए प्रेरणा या समर्थन दिया था। उस समय के जागृत परिवर्तनकामी समाज ने लेर्मोन्तोव की कविता का जोशीला स्वागत किया और इस कविता से उन्होंने अपने समर्थकों ही में नहीं, वरन विरोधियों में भी तीव्र हलचल मचा दी। जंगल की आग की तरह यह कविता उस समय के समाज में फैल गयी और लेर्मोन्तोव का नाम, जो तब तक उनके मित्र-परिचितों के छोटे-से दायरे ही में जाना जाता था, सहसा घर-घर और जन-जन की ज़बान पर चढ़ गया और रूस के कोने-कोने में लोग इस नाम को आशा और कृतज्ञता के मिले-जुले भावों से दुहराने लगे। जनता की इस प्रतिक्रिया ने ज़ार निकोलस प्रथम को विचलित कर दिया। वह लौ, जिसे अभी हाल तानाशाही के बूटों-तले कुचला गया था, दुगुनी तीव्रता से फिर लहक उठी। लेर्मोन्तोव को उनकी हुस्सार रेजिमेण्ट से स्थानान्तरित कर, पीटर्सबर्ग से कॉकेशिया भेज दिया गया, जहाँ घमासान लड़ाई चल रही थी। यह कवि का पहला निर्वासन था।

पुश्किन की स्मृति से अपने नाम के जुड़ते ही लेर्मोन्तोव के काव्य-नक्षत्र चमक उठे और जीवन के शेष चार-साढ़े चार वर्षों में उन्होंने अपनी महानतम रचनाएँ लिखीं। यूँ पुश्किन की मृत्यु से पहले ही व्यक्तिगत तौर पर लेर्मोन्तोव को अपनी जन्म-जात रचनात्मक प्रतिभा का ज्ञान था। बस उसे स्पन्दित करने के लिए किसी बड़े नैतिक आघात

की ज़रूरत थी और यह आघात उन्हें पुश्किन की मृत्यु से मिला।

इसके साथ ही एक नया एहसास भी जागा। पुश्किन से लेर्मोन्तोव का व्यक्तिगत परिचय नहीं था, लेकिन इस एहसास ने कि वह महान कवि ज़िन्दा था, विचारशील था और उसी समाज में कार्यरत था, लेर्मोन्तोव को अनेक सन्देहों और चिन्ताओं से मुक्त रखा था। अब, पुश्किन की मौत के बाद, वह आलोक-स्तम्भ बुझ चुका था, जिसकी ओर लोग प्रकाश के लिए निहारा करत थे। लेर्मोन्तोव को लगा कि उन पर एक ज़िम्मेदारी आ पड़ी है और अगर १८३७ तक लेर्मोन्तोव की गिनती प्रथम श्रेणी के कवियों में होती थी तो १८३७ के बाद उन्होंने एक महान कवि के रूप में अपनी काव्यात्मक प्रतिभा प्रकट की।

o

कॉकेशया में निर्वासित होने पर लेर्मोन्तोव ने आम फ़ौजियों और पहाड़ी लोगों की ज़िन्दगी को नज़दीक से जाना और सहसा उन्होंने ख़ुद को वास्तविकता के रू-ब-रू पाया। उच्च-वर्गीय समाज के निष्प्राण वातावरण से निकल आने पर लेर्मोन्तोव ने देखा कि जीवन के बारे में पीटर्सबर्ग के सभागारों में प्रचलित धारणाओं से आम रूसी जनता के जीवन की कितनी कम समानता थी। उच्च-वर्गीय सामन्ती समाज ने रूसी जनता के सहज-सरल जीवन को किस तरह विरूप बना दिया था – यह भी उन्होंने देखा और इस आम रूसी जीवन की सहज-स्वाभाविक कविता को आत्मसात किया। उनकी कृतियों में मानवतावादी भावनाएँ और विचार विकसित हुए और यह उनकी प्रतिभा का एक अविस्मरणीय गुण है।

लेर्मोन्तोव ख़ुद को अब एक ऐसी पीढ़ी के प्रतिनिधि के रूप में देखते, जिसके भाग्य में प्रवाह-रहित जल की तरह सड़ना लिखा था और इस विचार ने उन्हें अपने सभी समकालीन युवकों की कटु और ट्रैजिक जीवन-धारा में वे सारे तत्व खोजने के लिए बाध्य किया, जिनकी वजह से ये सारे-के-सारे प्रतिभाशाली युवक एक दिशाहीन जीवन जीने के लिए मजबूर हुए थे। लेर्मोन्तोव ने गहराई से तत्कालीन रूसी समाज और अपनी पीढ़ी के बारे में सोचा और उन शक्तियों को पहचानने की कोशिश की, जो एक पूरी-की-पूरी पीढ़ी को विकसित होने से रोक रही थीं। जैसा कि 'हमारे युग का एक नायक' में पेचोरिन कहता है :

"मैं अपने दिमाग़ में अपने जीवन के बीते हुए समय से हो कर गुज़रता हूँ और अनायास ख़ुद से पूछता हूँ – मैं क्योंकर ज़िन्दा रहा? मेरे जन्म लेने का उद्देश्य क्या था? इतना तो मैं ज़रूर कहूँगा मैं अपने भीतर की अदम्य, अप्रयुक्त शक्तियों से अच्छी तरह

परिचित हूँ..."

अपनी अदम्य अप्रयुक्त शक्तियों और गुणों से परिचित हो कर भी कुछ न कर पाने, ज़िन्दगी में अपना उद्देश्य न खोज पाने को अभिशप्त, इस पीढ़ी के इन्हीं, बेचैन कर देने वाले, प्रश्नों का उत्तर खोजने के क्रम में लेर्मोन्तोव अपने समाज में गहरे डूबे और जो कुछ वे उपलब्ध कर सके, उसे अपनी कविताओं और विशेष रूप से अपने उपन्यास 'हमारे युग का एक नायक' में उन्होंने अभिव्यक्त किया।

रूमानी ऊँचाइयों से धरती के यथार्थ पर उतरने की इस प्रक्रिया में लेर्मोन्तोव की कृतियाँ वैचारिकता और गम्भीरता से पुष्ट हुईं। प्रकृति के तूफ़ानों, आवेगों, और भावनाओं की आन्तरिक झंझाओं से उबरकर, लेर्मोन्तोव ने ऐतिहासिक प्रक्रिया को गम्भीरता और गहराई से जाना, समझा और अभिव्यक्त किया। इन नये सिद्धान्तों के आधार पर उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में प्रकाशित होने वाले पहले और एकमात्र कविता-संग्रह की कविताओं का चयन किया। १८४० में यह कविता संग्रह उनके उपन्यास 'हमारे युग का एक नायक' के साथ ही प्रकाशित हुआ और रूसी कथा-साहित्य की यात्रा में एक नयी मंज़िल जुड़ गयी। दोनों पुस्तकों ने लेर्मोन्तोव को अपने समय और समाज के द्रष्टा और एक सधे हुए कलाकार के रूप में उच्चतम धरातल पर स्थापित कर दिया।

इन वर्षों में कवि की ज़िन्दगी तूफ़ानों से भरपूर थी तरह-तरह के प्रभावों और घटनाओं से परिपूर्ण! अपनी प्रभावशाली नानी के प्रयत्नों से लेर्मोन्तोव को पीटर्सबर्ग लौटने की अनुमति तो मिल गयी, लेकिन वहाँ वे उच्च-वर्गीय समाज से उनकी लड़ाई बाकायदा ज़ारी रही। ज़्यादा दिन नहीं बीते थे कि उन्हें लोगों ने फ्रांसीसी राजदूत के पुत्र को द्वन्द्व-युद्ध के लिए चुनौती देने के लिए मजबूर कर दिया। इस घटना से पीटर्सबर्ग के अधिकारियों को फिर एक बार कवि को गिरफ़्तार करके निर्वासित करने का - और यूँ उसकी अदम्य शक्ति को कुचलने की कोशिश करके एक दानवी सुख प्राप्त करने का- मौक़ा मिल गया। यह महज़ बहाना ही था, क्योंकि वह द्वन्द्व-युद्ध तो एक बना-बनाया, पूर्व-नियोजित मामला था। निकोलस प्रथम की दृष्टि में लेर्मोन्तोव एक ख़तरनाक व्यक्ति थे, एक ऐसा काँटा, जिसे दूर ही रखना ठीक था। इस बार उन्हें एक ऐसी टुकड़ी में स्थानान्तरित कर दिया गया, जो कॉकेशिया में निरन्तर युद्ध में संलग्न थी। लेर्मोन्तोव ने अपने अद्वितीय साहस के कारण फ़ौरन ही अपने साथी अफ़सरों की निगाह में एक ऊँची जगह बना ली। लेकिन ज़ार की निगाह में वे एक ऐसे स्वतन्त्र-चेता विद्रोही विचारक बने रहे, जिन्हें किसी भी दशा में पदोन्नति और तमग़ों, छुट्टी और प्रशंसा से वंचित रखा

जाना था।

ज़ार निकोलस द्वारा लेर्मोन्तोव को निरुत्साह करने के सारे प्रयत्नों के बावजूद, तत्कालीन सामन्ती व्यवस्था उन वारों को रोक नहीं पायी, जो लेर्मोन्तोव अथक रूप से अपनी कविताओं और अन्य कृतियों द्वारा उस व्यवस्था और उसके सबल स्तम्भों पर बरसा रहे थे। सैनिक जीवन के प्रभाव इस दौरान की रचनाओं पर स्पष्ट रूप से दिखते हैं और ये रचनाएँ पढ़ने वाले को चीज़ों और स्थितियों के बारे में गहराई से सोचने के लिए विवश करती हैं। रूसी सामन्तशाही के लिए तो उस समय इनका प्रभाव घातक सिद्ध हो रहा था। वैलेरिक की लड़ाई (जिसमें स्वयं कवि ने भाग लिया था) के बाद लिखी गयी कविता 'वैलेरिक' में लड़ाई का अविस्मरणीय चित्रण करने के बाद लेर्मोन्तोव ने लिखा :

''और एक ख़ामोश, दिल में दबी उदासी के साथ
मैंने सोचा : कितना दयनीय है आदमी,
किस बात की है उसे कमी!...
साफ़ चमकता है आकाश,
सितारों के नीचे काफ़ी जगह है सभी मनुष्यों के लिए,
इस पर भी निरन्तर
वह करता है निष्फल युद्ध क्यों, काहे के लिए?''

इस कविता में लेर्मोन्तोव ने युद्ध की निष्फलता दिखाते हुए उसकी जो भर्त्सना की है, वह केवल युद्ध की भर्त्सना नहीं है, वरन आदमी-आदमी के बीच तमाम संघर्ष, दुश्मनी, छीना-झपटी और मार-धाड़ की भी भर्त्सना है। अगर लेर्मोन्तोव की इस कविता को उसके व्यापक अर्थों में लिया जाय (और उन्हीं अर्थों में दरअसल इसे लिया भी जा सकता है) तो हम देखेंगे कि कविता के अन्त में लेर्मोन्तोव द्वारा उठाया गया सवाल कितनी व्यापकता से समूचे मानव-अस्तित्व को स्पर्श करता है। यह आकस्मिक नहीं है कि तॉल्स्तोय ने अपनी महानतम कृति - 'युद्ध और शान्ति' - इन्हीं शब्दों से प्रेरित हो कर लिखी और यह भी आकस्मिक नहीं है कि तॉल्स्तोय ने लेर्मोन्तोव के इस व्यापक और शाश्वत प्रश्न का ज़िक्र करते हुए यह दावा किया कि सारी-की-सारी १८वीं शताब्दी इस प्रश्न का उत्तर खोज पाने में विफल रही थी। लेर्मोन्तोव के इस जलते-सुगलते सवाल की आँच और शक्ति, उनके साहित्य के साथ-साथ, परवर्ती रूसी साहित्य और दर्शन में अग्रणी दस्ते की जुझारू सरगर्मी की तरह दाख़िल हुई और आज, जब रूसी साहित्य में पुश्किन की विरासत के साथ, उनके सबसे सशक्त उत्तराधिकारी - लेर्मोन्तोव - की विरासत का उल्लेख किया जाता है तो इसी कारण कि पुश्किन ने 'स्वाधीनता' की जिस

मशाल को प्रज्ज्वलित किया, उसे पुश्किन की मृत्यु के बाद आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने का काम लेर्मोन्तोव ने किया। इस दौरान लिखी गयी लेर्मोन्तोव की कविताओं की गूँज, सामन्तशाही के ख़िलाफ़ किये गये वारों की गूँज के समान, रूस भर में सुनायी दी। पीटर्सबर्ग और मॉस्को की एक संक्षिप्त-सी यात्र के दौरान लेर्मोन्तोव ने अपनी नवीनतम कृतियों के प्रकाशन की व्यवस्था की, पर उन्हें ज़्यादा दिन तक इन शहरों में नहीं रहने दिया गया। जल्द ही उन्हें फिर कॉकेशिया वापस भेज दिया गया और अब की बार वे दो परस्पर-विरोधी भावनाओं में फँसे हुए कॉकेशिया लौटे। सैनिक जीवन से अवकाश लेने, साहित्य को पूरी तरह अपनी ज़िन्दगी समर्पित करने, नयी रचनाएँ लिखने और एक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन तथा प्रकाशन करने की आकांक्षाएँ – मृत्यु के मुँह में धकेले जा रहे आदमी की गम्भीर उदासी और विषाद के रू-ब-रू खड़ी थीं। मृत्यु तो उनके भाग्य में बदी ही थी, क्योंकि लेर्मोन्तोव की मृत्यु, उनके ख़िलाफ़ रचा गया एक सुनियोजित षड्यंत्र था – उन उच्च-वर्गीय अधिकारियों का, जो उस समाज का अभिन्न अंग थे, जिसके ख़िलाफ़ लेर्मोन्तोव ने हथियार उठाये थे। उनकी अविजित, अपराजेय आवाज़ को शान्त करने का सिर्फ़ एक ही रास्ता उस समाज के सामने बचा था और वह था – लेर्मोन्तोव को सदा-सदा के लिए ख़ामोश कर देना।

लेर्मोन्तोव को निरन्तर उन स्थलों पर तैनात किया जाता रहा, जहाँ भीषण युद्ध चल रहा था और जो कॉकेशियाई मोर्चे के सबसे ख़तरनाक स्थल थे। लेकिन उन पहाड़ी लोगों की गोलियों के सामने जैसे लेर्मोन्तोव को एक अभिमंत्रित कवच प्राप्त था। तब एक घृणित साज़िश की गयी, और हथियार के रूप में एक ऐसे कल्पना-विहीन जड़-बुद्धि व्यक्ति को इस्तेमाल किया गया, जिसके अन्दर सिर्फ़ यही विशेषता थी कि वह रूसी साहित्य की नवोदित आशा को द्वन्द्व-युद्ध में ख़त्म कर सके। पुश्किन की तरह एक व्यक्तिगत झगड़े में लेर्मोन्तोव की मृत्यु भी दरअसल उस व्यवस्था ही का दुष्कृत्य थी, जो अपने आलोचकों को ख़ामोश करने की प्रणाली में पूर्णतः निर्मम थी। और जुलाई १८४१ के एक अत्यन्त दुख-भरे दिन लेर्मोन्तोव अपने सीने में अपने प्रतिद्वन्द्वी की गोली लिये, पथरीली ज़मीन पर लोट गये। अभी उन्होंने सत्ताइसवाँ वर्ष पूरा नहीं किया था।

०

लेर्मोन्तोव के संक्षिप्त-से जीवन को देखते हुए उनके कृतित्व की व्यापक उपलब्धियाँ चकित कर देने वाली हैं। लेर्मोन्तोव के बारे में सोचते हुए यही पहला ख़याल दिमाग़ में आता है कि इतनी छोटी उमर में भी कितना कुछ वे रच गये हैं कितना कुछ कविता, कहानी, उपन्यास और नाटक! और इन सभी विधाओं में उन्होंने उत्कृष्ट रचनाएँ दी हैं।

पाठक न केवल उन्हें पुश्किन के फ़ौरन बाद या उसके समकक्ष रखते हैं, बल्कि ऐसे अनेक पाठक हैं, जिनके हृदयों में लेर्मोन्तोव ने एक विशेष स्थान बना लिया है।

जैसा कि कहा जा चुका है, पुश्किन और लेर्मोन्तोव दोनों ने कविता से अपने-अपने साहित्यिक जीवन को शुरू किया और दोनों ही अन्त में कथा-साहित्य की ओर झुके। कवि के तौर पर हालाँकि पुश्किन अद्वितीय रहे, लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि अपने उपन्यास 'हमारे युग का एक नायक' और अपनी कहानियों में लेर्मोन्तोव पुश्किन की तुलना में कहीं गहरे, सधे हुए और दृष्टि-सम्पन्न कलाकार सिद्ध होते हैं।

'हमारे युग का एक नायक' - जैसा कि इस शीर्षक से ज़ाहिर है और जैसा कि लेर्मोन्तोव ने अपनी भूमिका में लिखा भी है - एक ऐसे आदमी की कहानी है, जो अपने युग का प्रतिनिधि है। यह उपन्यास पाँच अलग-अलग खण्डों में विभाजित है, जिनमें उपन्यास के प्रमुख पात्र ग्रिगोरी अलेक्ज़ान्द्रोविच पेचोरिन के जीवन की पाँच घटनाएँ दी गयी हैं। इनमें से तीन खण्ड 'वतन के लेख' नामक पत्रिका में अलग-अलग प्रकाशित हुए ('बेला' और 'भाग्यवादी' १८३९ में और 'तमन' १८४० में)। शेष दो ('मैक्सिम मैक्सिमिच' तथा 'राजकुमारी मेरी') मई १८४० में उपन्यास के पहले सम्पूर्ण संस्करण में ही प्रकाशित हुए।

लेर्मोन्तोव का यह उपन्यास व्यक्ति-चित्रण की उसी परम्परा को आगे बढ़ाता है, जिसका सूत्रपात रूस में पुश्किन के काव्योपन्यास 'एवेग्नी ओनेगिन' से हुआ था। किसी समकालीन युवक की अच्छाइयों-बुराइयों और समस्याओं के सन्दर्भ में, उसका चित्रण करने की यह परम्परा किसी हद तक यूरोपीय साहित्य में विद्यमान रही है और लेर्मोन्तोव सचेत रूप से पुश्किन के ओनेगिन से एक सम्पर्क स्थापित कर रहे थे, जो नायक के नामकरण से प्रकट होता है। रूस के उत्तर में बहने वाली नदी - 'ओनेगा' - पर पुश्किन ने अपने नायक का नामकरण किया - ओनेगिन! लेर्मोन्तोव ने एक और भी उत्तरी नदी - 'पेचोरा' पर अपने नायक का नाम रख कर अपने चुनाव को स्पष्ट कर दिया। लेकिन लेर्मोन्तोव - की नज़र महज़ अपने उपन्यास अथवा अपने नायक पर ही केन्द्रित नहीं थी, वरन इस व्यक्ति-चित्र के माध्यम से वे अपने पूरे युग, समाज और राजनीतिक व्यवस्था को भी चित्रित करना चाहते थे। और निस्सन्देह वे इस उद्देश्य में पूरी तरह सफल रहे।

'दिसम्बरवादियों' के विफल विद्रोह के बाद दमन का जो सिलसिला ज़ार निकोलस प्रथम ने शुरू किया, उसने एक पूरी-की-पूरी पीढ़ी के विकास पर रोक-सी लगा दी थी। बहती हुई धारा जैसे एक गँदले तालाब में बदल गयी और अनेक प्रतिभाशाली, महत्वाकांक्षी युवक सिर्फ़ इसलिए भटक गये कि उनके सामने विकास की स्पष्ट दिशा नहीं थी, न ही

उनमें इस दिशा को खोजने की इच्छा-शक्ति ही थी। व्यग्रता थी, बेचैनी थी, सामन्ती समाज के सड़ते हुए माहौल के प्रति वितृष्णा थी, लेकिन इसके साथ ही इच्छा-शक्ति का अभाव और दिशाहीनता भी थी।

लेर्मोन्तोव ने इस सबका बड़ी सूक्ष्मता से निरीक्षण किया था। अपनी पीढ़ी की सारी ख़ूबियों और ख़ामियों से वे परिचित थे, क्योंकि कमोबेश ये तत्व ख़ुद उनके अन्दर मौजूद थे और सामन्ती समाज-व्यवस्था से अपनी लड़ाई में उन्होंने पेचोरिन को एक हथियार की तरह गढ़ा। उसे अपने युग के प्रतिनिधि के रूप में पेश करते हुए उन्होंने व्यंग्य के नश्तर से उस समाज पर पनप रहे नासूरों को चीरने की कोशिश की।

पेचोरिन के माध्यम से लेर्मोन्तोव ने अपने इस एकमात्र उपन्यास में अत्यन्त कुशलता से पूरे-के-पूरे समाज पर लिपटे आवरण को अलग कर दिया और जैसा कि उन्होंने अपनी भूमिका में पाठकों से पूछा :

"अगर आप दुखान्त नाटकों और रूमानी कथाओं के उन सारे के सारे खलनायकों के अस्तित्व में विश्वास कर सकते हैं तो इसी बात का यकीन क्यों नहीं कर पाते कि कोई पेचोरिन भी था? अगर आप इससे अधिक भयंकर और कुत्सित पात्रों की सराहना कर सकते हैं तो फिर इसी पात्र के प्रति आप कुछ और दयालु क्यों नहीं हो पाते, भले ही वह काल्पनिक हो? क्या इसका कारण यह नहीं है कि आपकी अपेक्षाओं और कामनाओं से कहीं अधिक सच्चाई इस पात्र में है?"

और जैसा कि लेर्मोन्तोव तथा उनके उपन्यास को बदनाम करने वालों का मुँह-तोड़ जवाब देते हुए लेर्मोन्तोव के समकालीन महान जनवादी आलोचक विसारियन बेलिन्स्की ने पेचोरिन के बारे में लिखा :

"कुछ दकियानूसी नीति-विशेषज्ञ शायद पुकार उठेंगे, 'एक सिद्धान्तहीन दुष्ट मनुष्य, स्वार्थी खलपुरुष, राक्षस!'... हाँ, आप बिलकुल ठीक कहते हैं। लेकिन क्या यही बात है, जिसके लिए आप इतना कोलाहल मचा रहे हैं? क्या सममुच यही बात है, जिस पर आप नाराज़ हो रहे हैं? आप दुराचार के लिए उसकी निन्दा नहीं करते, क्योंकि आप ख़ुद उससे अधिक दुराचारी हैं और आपके दुर्गुण अधिक गन्दे और ज़्यादा शर्मनाक हैं। आप उसे इसलिए कोसते हैं क्योंकि वह निर्भय स्वतन्त्रता और कठोर स्पष्टता के साथ आपके दुराचारों का वर्णन करता है।"

रूसी क्रान्तिकारी-जनवादी आलोचक मण्डलों ने इस उपन्यास को स्वतन्त्र विचारों की प्रभावशाली अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार किया और पेचोरिन के व्यक्तित्व को सर्व-व्यापी सामाजिक प्रक्रिया का प्रतिबिम्ब, सारी पीढ़ी की मानसिक अस्वस्थता का प्रतीक माना।

०

पेचोरिन एक प्रतिभाशाली, महत्वाकांक्षी, इच्छा-शक्ति सम्पन्न, गर्वीला, शारीरिक रूप से शक्तिशाली और सुन्दर व्यक्ति है - एक ऐसा व्यक्ति, जो बड़े काम कर सकता है। वह संवेदनहीन भी नहीं है और समाज के हर स्तर पर लोगों में घुल-मिल कर उसने मानव-स्वभाव की अच्छी-ख़ासी जानकारी भी प्राप्त की है। लेकिन ज़िन्दगी में कोई स्पष्ट लक्ष्य न होने के कारण वह अपनी अदम्य और अप्रयुक्त शक्तियों को उत्कष्ट प्रेम सम्बन्धों में, लड़ाई-झगड़ों में और उन साहसिक कारनामों में ज़ाया कर देता है, जिनका चित्रण लेर्मोन्तोव ने उपन्यास में किया है।

पच्चीस वर्ष की उमर ही में पेचोरिन उन सारी भावनाओं, विचारों और कल्पनाओं को पूरी तरह जी चुका है, जो उसका समाज और उसका वर्ग उसे उपलब्ध करा सकता है; ज़िन्दगी में और कुछ नया न पा कर, वह मोह-भंग से ग्रस्त व्यक्ति की ज़िन्दगी जीने लगता है उस व्यक्ति की तरह, 'जो नाच में बैठा जमुहाइयाँ लेता रहता है, लेकिन सोने के लिए सिर्फ़ इसलिए अपने घर नहीं जाता, क्योंकि उसकी गाड़ी अभी नहीं आयी है।'

पेचोरिन में गहरी अन्तर्दृष्टि है और वह अपने युग की बुराइयों से परिचित भी है जैसा कि राजकुमारी मेरी से उसकी लम्बी बातचीत से और उसकी डायरी में जगह-जगह व्यक्त संशयों और बेचैन ख़यालों से साफ़ ज़ाहिर होता है। दूसरों की भावनाओं को बेदर्दी से रौंदते हुए दूसरों को महज़ अपने सुख, अपने अहं के लिए एक आहार की तरह इस्तेमाल करते हुए वह किसी हद तक निर्मम और कठोर भी हो चुका है। लेकिन बीच-बीच में जब वह अपनी स्थिति पर विचार करता है तो वह पाता है कि उसकी ज़िन्दगी निरर्थक कार्यों में नष्ट हो रही है।

लेर्मोन्तोव ने अपने इस अभागे नायक का चित्रण करते हुए बहुत-सी रेखाएँ और रंग अपनी ज़िन्दगी से भी जुटाये। उपन्यास का शीर्षक भी स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि वे अपने नायक को तत्कालीन समाज से जोड़ कर पेश कर रहे थे और बेलिन्स्की ने उपन्यास की पहली विस्तृत समीक्षा करते हुए यह लिखा कि पेचोरिन-सरीखे पात्र रूसी इतिहास के उस काल में अनिवार्य थे।

"ऐसा ही होगा हमारे युग का नायक," बेलिन्स्की ने लिखा, "वह अपनी स्पष्ट अकर्मण्यता से पहचाना जायेगा, या फिर निरर्थक सक्रियता से।"

अपने नायक की सारी ख़ामियों को बड़ी बेदर्दी से उघाड़ कर सामने रखते हुए भी लेर्मोन्तोव ने उसे अपनी भरपूर सहानुभूति दी है। उन्होंने पेचोरिन की स्थिति को 'बीमारी' का नाम दिया है, जिसका निदान उपन्यास का विषय है और जिसका इलाज उस पूरी-

की–पूरी समाज–व्यवस्था को आमूल–चूल परिवर्तित कर देने पर ही हासिल हो सकता है। पेचोरिन के सम्बन्ध में बेलिन्स्की के मत का उल्लेख करते हुए रूसी आलोचक ई. अन्द्रोन्निकोव ने लिखा है :

पेचोरिन एक संक्रान्ति–काल का वीर था : दिसम्बरवादियों के विप्लव के बाद वह जवान हुआ और बाद की क्रान्तिकारी जनवादी पीढ़ी के उदय से पहले उसका देहान्त हुआ। जब बेलिन्सकी ने पेचोरिन की आत्मा के स्वरूप को परिवर्तनकालीन कहा था, तब उसका यही अभिप्राय था। यह परिवर्तन काल ऐसा था जब पुराने आदर्श नष्ट हो जाते हैं और नये आदर्श तक बने नहीं होते, जिससे मनुष्य के सामने भविष्य में वस्तुतः कुछ प्राप्त होने की महज़ सम्भावना ही होती है और वर्तमान केवल छाया मात्र बन कर रह जाता है। "पेचोरिन अपनी वैयक्तिक मुक्ति के लिए तरस रहा था और विश्वास करता था कि घृणित सामन्ती समाज से दूर हो कर अपने से हीन, लोगों की भीड़ से अलग हो कर यह मुक्ति मिल सकेगी। उसने ख़ुद को एक अभेद्य कवच में छिपा लिया और दुख–भरे अकेलेपन में उसका अन्त हुआ। प्रतिकूल परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए उसके पास कोई हथियार नहीं था। लेर्मोन्तोव के पास ज़रूर ऐसा हथियार था उनकी कविता! अपने समय की समाज–व्यवस्था के नरक को उघाड़ते हुए, उन्होंने जन–जागरण में बहुत सहायता पहुँचाई और मुख्यतया यही 'हमारे युग का एक नायक' का ऐतिहासिक महत्व है।"

o

शिल्प की दृष्टि से भी 'हमारे युग का एक नायक' एक अत्यन्त परिपक्व और महत्वपूर्ण कृति है। दस बरस पहले पुश्किन ने 'एवेग्नी ओनेगिन' लिखा था और उसे 'छन्दों में एक उपन्यास' की संज्ञा दी थी। लेर्मोन्तोव निश्चित रूप से अपने पूर्ववर्ती द्वारा प्रभावित हुए थे। लेकिन गद्य के अपेक्षाकृत अधिक आज़ाद माध्यम को अपना कर उन्होंने पेचोरिन के रूप में ओनेगिन की अपेक्षा एक अधिक संश्लिष्ट, जटिल और पेचीदा पात्र की सृष्टि की और तत्कालीन समाज–व्यवस्था का अधिक व्यापक और गहरा चित्रण किया। उपन्यास के पाँचों खण्ड अपने आप में सम्पूर्ण हैं – पेचोरिन के चरित्र को परत–दर–परत खोलते हुए और अन्त में एक–दूसरे से जुड़ कर उस युग और नायक की पूरी तस्वीर पेश करते हुए। हालाँकि आदि से अन्त तक कोई एक कथानक नहीं है और लेर्मोन्तोव ने इन पाँचों खण्डों को काल–क्रमानुसार नहीं प्रस्तुत किया, फिर भी काल–क्रम के अनुसार उपन्यास के खण्ड इस प्रकार हैं : (१) कॉकेशिया में अपने मुकाम की ओर जाते समय पेचोरिन तमन में ठहरता है ('तमन')। (२) एक सैनिक अभियान में भाग लेने के बाद वह एक

आरोग्यवर्द्धक पर्यटन स्थली में कुछ दिन बिताता है – प्यातिगोर्स्क तथा किस्लोवोद्स्क में ठहरता है और द्वन्द्व-युद्ध में ग्रुश्नीत्स्की को मार डालता है ('राजकुमारी मेरी')। (३) इस द्वन्द्व-युद्ध के लिए दण्डित करके उसे जूनियर कप्तान मैक्सिम मैक्सिमिच के नीचे कॉकेशिया सीमा के बायें मोर्चे पर स्थित किले में तबदील किया जाता है ('बेला')। (४) वहाँ से पेचोरिन एक पखवाड़े के लिए एक कज़्ज़ाक देहात (स्तनित्सा) में जाता है और वहाँ वूलिच के साथ बाज़ी लगाता है ('भाग्यवादी')। (५) पाँच साल बाद फ़ारस जाते समय पेचोरिन, जो कि सेना से निवृत्त हो चुका है, व्लादिकावकाज़ में मैक्सिम मैक्सिमिच से मिलता है ('मैक्सिम मैक्सिमिच')। (६) फ़ारस से लौटते समय पेचोरिन का देहान्त होता है ('पेचोरिन की डायरी : आमुख')।

लेकिन उपन्यास में पेचोरिन के जीवन की इन घटनाओं को काल-क्रमानुसार न दे कर लेर्मोन्तोव ने एक दूसरा ही प्रभाव उत्पन्न किया। वे सीढ़ी-दर-सीढ़ी पाठक को पेचोरिन के चरित्र की जटिलताओं में उतारते चले गये। पहले खण्ड में चेरकस लड़की बेला के अपहरण की कथा है एक भले, ख़ुशदिल सैनिक मैक्सिम मैक्सिमिच की ज़बान से। फिर 'मैक्सिम मैक्सिमिच' में पेचोरिन से संयोगवंश हुई मुलाकात के सन्दर्भ में लेखक पेचोरिन के बारे में अपना अपेक्षाकृत अधिक सूक्ष्म दृष्टिकोण पेश करता है और यह प्रसंग पाठक को उपन्यास के केन्द्र की ओर ले जाता है, जहाँ 'पेचोरिन की डायरी' में लेर्मोन्तोव अपने नायक की ज़बानी उसके चरित्र के विभिन्न पहलुओं को उद्‌घाटित करता है।

ऊपरी तौर से यद्यपि उपन्यास का गठन ढीला-ढाला नज़र आता है, लेकिन शिल्प के क्षेत्र में अपने पूर्ववर्ती पुश्किन से मीलों आगे बढ़ कर लेर्मोन्तोव ने कई प्रयोग किये और पेचोरिन की 'कथा' और अपने 'कथ्य' को सम्पूर्णता में प्रस्तुत करने में पूरी तरह सफल रहे। न सिर्फ़ घटनाओं का विवरण दिल और दिमाग़ को बाँध लेने वाला है, बल्कि जगह-जगह व्यक्त विचार अथवा प्राकृतिक दृश्यों के ब्योरे भी अत्यन्त काव्यात्मक हैं, जो सिद्ध करते हैं कि उपन्यासकार अव्वल दर्जे का क़िस्सा-गो ही नहीं, उच्च कोटि का कवि भी है।

महज़ अपने प्रमुख पात्र के चित्रण ही में नहीं, वरन इस नायक के चरित्र को उभारने के लिए प्रयुक्त गौण पात्रें के चित्रण में भी लेर्मोन्तोव की कलम की शक्ति दिखती है। मैक्सिम मैक्सिमिच हो या बेला, काज़बिच हो या पेचोरिन का ख़िदमतगार, ग्रुश्नीत्स्की हो या घुड़सवार सिपाहियों का कप्तान, वेर्नर हो या वूलिच, राजकुमारी मेरी हो या वेरा या तमन की तस्कर कन्या; या फिर जगह-जगह आये अनेकानेक छोटे-छोटे

है और कथाक्रम के ऊपरी ढीलेपन के बावजूद पूरे उपन्यास में एक ऐसा आन्तरिक कसाव और गठन है, जो आश्चर्य-चकित कर देता है ख़ास तौर पर अगर यह याद रखा जाय कि लेर्मोन्तोव के समय में क़िस्सा-गोई की कोई स्थापित परम्परा नहीं थी। शैली और शिल्प के उन सभी प्रयोगों में लेर्मोन्तोव की दक्षता लक्षित होती है, जिन्हें उन्होंने अपने उपन्यास में प्रस्तुत किया घटनाओं के मित-कथन में, पेचोरिन की डायरी के विश्लेषणात्मक गद्य में, प्रकृति के काव्यात्मक ब्योरों में, संवादों की चुस्ती में, और मैक्सिम मैक्सिमिच के गलचौर में।

०

उपन्यास की घटनाएँ १८३० के आस-पास कॉकेशिया में घटती हैं, जो उस समय रूसी साम्राज्य का एक नया-नया अधिकृत क्षेत्र था और हालाँकि कोहेकाफ़ की मुख्य श्रृंखला के दक्षिण में स्थित ज्यॉर्जिया, १८०१ में ही रूसी साम्राज्य में शामिल कर लिया गया था तो भी उत्तर के पहाड़ी कबीले बलपूर्वक लागू की जा रही इस प्रक्रिया का विरोध कर रहे थे। रूसियों ने इस नये क्षेत्र की सरहद पर चौकियाँ स्थापित कर रखी थीं, जो इस 'मोर्चे' की पूरी लम्बाई में, काले सागर से ले कर कैस्पियन सागर तक, दौड़ती चली गयी थीं। 'बेला' और 'भाग्यवादी' में बाँया मोर्चा और दायाँ मोर्चा जैसे शब्द इन्हीं चौकियों की पूर्वी या पश्चिमी दिशा का संकेत देते हैं।

उपन्यास के क्षेत्र में 'हमारे युग का एक नायक' यद्यपि लेर्मोन्तोव की एकमात्र कृति थी तो भी इसके महत्व का अन्दाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि परवर्ती कथाकारों पर निरपवाद रूप से इसका गहरा प्रभाव पड़ा। लेर्मोन्तोव की विश्लेषणात्मक पद्धति और व्यक्तियों तथा प्रकृति के चित्रण में प्रयुक्त संवेदनशीलता का असर तॉल्स्तोय की मनोवैज्ञानिक पहुँच और ज़िन्दगी के प्रति उनके गहरे लगाव में तथा बुराई की समस्या और मानव-मन की पेचीदगियों के प्रति लेर्मोन्तोव के दृष्टिकोण का असर दॉस्तोयेव्स्की पर खोजा जा सकता है। शैलीकार के रूप में लेर्मोन्तोव चेख़व के पूर्ववर्ती हैं और यह आकस्मिक नहीं है कि चेख़व ने 'तमन' को कहानी-कला का आदर्श माना था।

१९७६

-नीलाभ

हमारे युग
का
एक नायक
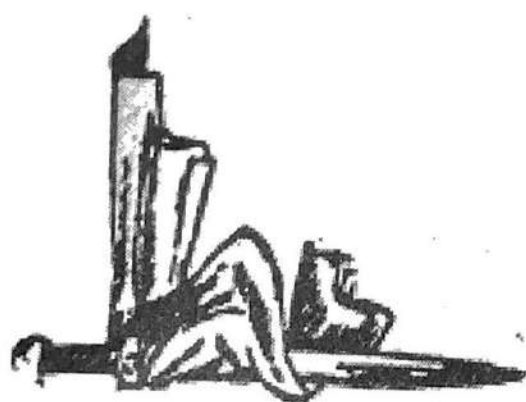
आमुख

आमुख – किसी किताब की पहली, और साथ-ही-साथ आख़िरी, चीज़ होती है; उसका काम या तो कृति के उद्देश्य को समझाना होता है फिर आलोचकों के सामने लेखक की सफ़ाई देना। आम तौर पर पाठकों की दिलचस्पी न तो लेखक के उपदेश में होती है, न उस पर किये गये समीक्षकों के आक्रमणों में; इसलिए वे भूमिकाएँ नहीं पढ़ते। मगर यह खेद का विषय है, ख़ासकर हमारे देश के लिए। हमारी जनता अभी इतनी कच्ची और भोली है कि जब तक उसे किसी कहानी के अन्त में कोई नैतिक उपदेश न मिले, तब तक वह उसे समझ ही नहीं सकती। मज़ाक या व्यंग्य में छिपे हुए गूढ़ अर्थ को वह पकड़ नहीं पाती; यह उसकी शिक्षा-दीक्षा की कमज़ोरी है। उसे अभी तक यही पता नहीं है कि सभ्य समाज और प्रतिष्ठित पुस्तकों में सीधी और स्पष्ट गाली का कोई स्थान नहीं है और न वह यही जानती है कि समकालीन चेतना ने एक ज़्यादा तीखा, लगभग अदृश्य, लेकिन फिर भी निश्चित रूप से अधिक घातक हथियार खोज निकाला है, जो ख़ुशामद और तारीफ़ के बाने में सच्ची और अचूक चोट करता है। हमारी जनता उस गाँववासी के समान है, जो दो विरोधी राज्यों के नुमाइन्दों की बातचीत सुन कर यह धारणा बना लेता है कि वे दोनों आपसी मित्रता के चलते अपनी-अपनी सरकारों को धोखा दे रहे हैं।

हाल के दिनों में, प्रस्तुत पुस्तक का यह दुर्भाग्य रहा कि कुछ पाठकों और यहाँ तक कि कुछ पत्रिकाओं ने भी इसे इसके अभिधार्थ में ही लिया। कुछ तो पूरी गम्भीरता से इस बात पर भड़क उठे कि प्रस्तुत पुस्तक के नायक जैसे सदाचार-निरपेक्ष व्यक्ति को उनके सामने आदर्श के रूप में रखा गया; दूसरों ने बड़ी नफ़ासत और भद्रता से यह संकेत किया कि इसमें लेखक ने अपने और अपने परिचितों के चित्र खींचे हैं...वही घिसा-पिटा नुक्ता। मगर प्रकट ही रूस की बनावट कुछ ऐसे तत्वों से हुई है कि अन्य सभी क्षेत्रों में वह चाहे कितनी ही प्रगति क्यों न कर ले, इस तरह के बेतुकेपन से मुक्त नहीं हो पाता। हमारे यहाँ अत्यन्त काल्पनिक परी-कथाओं का भी इस आरोप से बच

पाना निहायत मुश्किल है कि उनमें किसी-न-किसी की मान-हानि या निन्दा करने की कोशिश की गयी है।

प्यारे दोस्तो, 'हमारे युग का एक नायक' एक चित्र ज़रूर है, मगर किसी एक व्यक्ति का नहीं; यह हमारी पूरी पीढ़ी की, बहार पर आयी हुई, पूरी तरह विकसित, सारी बुराइयों के आधार पर तैयार की गयी तस्वीर है। शायद आप फिर कह उठेंगे कि कोई भी आदमी इस हद तक गिरा हुआ और चरित्रहीन नहीं हो सकता; मेरा उत्तर है कि अगर आप दुखान्त नाटकों और रोमानी कथाओं के उन सारे के सारे खलनायकों के अस्तित्व में विश्वास कर सकते हैं, तो इसी बात का यकीन क्यों नहीं कर पाते कि कोई पेचोरिन भी था। अगर आप इससे अधिक भयंकर और कुत्सित पात्रों की सराहना कर सकते हैं तो फिर इसी पात्र के प्रति आप कुछ और दयालु क्यों नहीं हो पाते, भले ही वह काल्पनिक हो? क्या इसका कारण यह नहीं है कि आपकी अपेक्षाओं और कामनाओं से कहीं अधिक सच्चाई इस पात्र में है?

आप कहेंगे कि इससे नैतिकता को कोई लाभ नहीं होगा। मैं आपकी इस धारणा से विनम्रतापूर्वक असहमत हूँ। लोगों को इस कदर मिठाइयाँ खिलायी गयी हैं कि उनका हाज़मा बुरी तरह बिगड़ चुका है। अब कड़वी दवाइयों और तेज़ाबी सच्चाइयों की ज़रूरत है। लेकिन आप कहीं यह न सोच लीजियेगा कि इस पुस्तक का लेखक इतना महत्वाकांक्षी था कि वह मानवीय बुराइयों के सुधार की अभिलाषा अपने मन में पालता रहा। ऐसी अशिष्टता से उसे भगवान बचाये! उसे तो इसी में सन्तोष और प्रसन्नता मिली कि वह आज के मनुष्य को वैसा ही चित्रित करे, जैसा कि उसने उसे देखा और जैसा कि आपके और अपने दुर्भाग्य से उसने अक्सर उसे वास्तव में पाया भी। इतना काफ़ी है कि रोग का निदान हो चुका है; अब इसका इलाज क्या है, यह भगवान ही जानता है।

पहला खण्ड
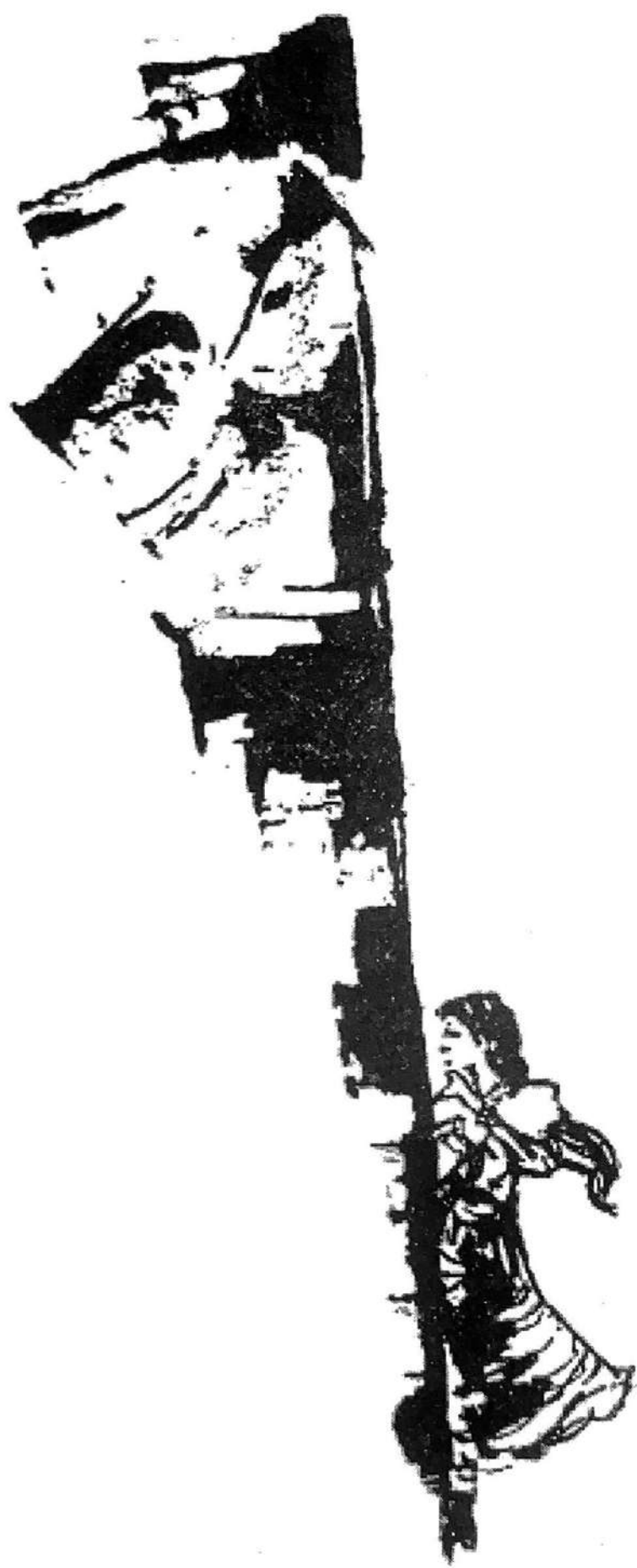
बेला

मैं तिफ़लिस से डाक लाने-ले जाने वाली सड़क पर चला जा रहा था। सामान के नाम पर मेरे पास घोड़ा-गाड़ी में सिर्फ़ ज्यॉर्जिया के यात्रा-विवरणों से आधा भरा एक सूटकेस था। इसे आप अपनी ख़ुशकिस्मती समझिए कि उन विवरणों का ज़्यादातर हिस्सा तब से खो चुका है, हालाँकि मेरे भाग्य से वह सूटकेस और उसमें रखी शेष चीज़ें बच गयी हैं।

जब घोड़ा-गाड़ी कोइशॉर घाटी में दाख़िल हुई तो सूरज बर्फ़ से ढँकी एक पर्वत-श्रेणी के पीछे सरक चला था। रात होने के पहले ही कोइशॉर पहाड़ की चोटी पर पहुँचने के लिए मेरा ओसेतियन कोचवान आवाज़ की पूरी बुलन्दी से गाता हुआ, घोड़ों को निष्ठुरता से लगातार हाँके जा रहा था। कितनी सुन्दर और शानदार है यह घाटी! चारों ओर ऊँचे-ऊँचे भयानक पहाड़ इश्क-पेचाँ की लहराती लताओं की पोशाक पहने और चिनार के वृक्षों का मुकुट सजाये, ऊबड़-खाबड़ सुर्ख़ चट्टानी पहाड़ियाँ; पहाड़ी नालों और मूसलाधार वर्षा से पड़ गयी दरारों वाली पीली, खड़ी चट्टानें, जिनके शिखरों पर बर्फ़ की सुनहरी झालरें जगमगा रही थीं, जबकि उनके ठीक नीचे एक काले, मनहूस-से दर्रे से फूटती हुई पानी की अनजान धार बह रही थी, जिसे अपनी बाँहों में समेटती अराग्वा नदी साँप की परतदार केंचुल जैसी अपनी झिलमिलाती सतह लिये हुए दूर तक एक रूपहले रिबन की तरह दौड़ती चली गयी थी!

कोइशॉर पर्वत की तलहटी में पहुँच कर हम लोग एक दुकान के सामने रुके, जहाँ लगभग बीस ज्यॉर्जियन और पहाड़ी लोग झुण्ड बनाये बैठे ज़ोर-ज़ोर से बातें कर रहे थे; पास ही ऊँटों के एक काफ़िले ने रात भर के लिए पड़ाव डाला हुआ था। चूँकि पतझर शुरू हो चुका था और बर्फ़ की पतली परत से धरती ढँक गयी थी, और अभी क़रीब दो **वर्स्ट** लम्बी चढ़ाई और बाकी थी, इसलिए सिर चकरा देने वाले उस पहाड़ पर गाड़ी को खींच ले जाने के लिए मुझे किराये पर बैल लेने पड़े। छह बैलों और कई

ओसेतियन मज़दूरों को भाड़े पर लेने के अलावा और कोई चारा नहीं था। उनमें से एक ने कन्धे पर मेरा सूटकेस उठा लिया और बाकी लोग बैलों की मदद करने के लिए जुट गये, लेकिन वे चीख़ने-चिल्लाने से ज़्यादा और कुछ नहीं कर रहे थे।

मेरी गाड़ी के पीछे एक और गाड़ी चली आ रही थी। सिर्फ़ चार बैल उसे खींच रहे थे और गाड़ी सामान से ऊपर तक लदी थी, फिर भी ऐसा नहीं लगता था कि बैलों पर बहुत ज़ोर पड़ रहा हो। यह देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। गाड़ी के ठीक पीछे उसका मालिक, कबार्डिया का बना छोटा-सा चाँदी-मढ़ा पाइप फूँकता, चला आ रहा था। बिना झब्बों वाला फ़ौजी कोट और एक झबरी चेरकस टोपी उसने पहनी हुई थी। वह पचास के आस-पास लगता था और उसका सँवलाया चेहरा कॉकेशिया की धूप से उसके लम्बे परिचय की चुग़ली खा रहा था। उसकी मज़बूत हट्टी-कट्टी काठी और पक्के डगों से यही अन्दाज़ा लगता था कि उसकी खिचड़ी मूँछें समय से पहले सफ़ेद हो गयी हैं। मैंने उसके पास जा कर, ज़रा झुकते हुए उसका अभिवादन किया। उसने धुएँ का बड़ा-सा बादल उड़ाते हुए, मौन रूप से मेरे अभिवादन का उत्तर दिया।

"मेरा ख़याल है, हम लोग हमसफ़र हैं।"

वह फिर ज़रा झुका, लेकिन एक शब्द भी नहीं बोला।

"मेरी समझ से आप स्ताव्रोपोल जा रहे हैं।"

"जी हाँ साहब, वहीं... मेरे साथ कुछ सरकारी सामान है।"

"अच्छा, मुझे ज़रा एक बात तो समझाइए; आपकी इस भारी-भरकम गाड़ी को सिर्फ़ चार बैल ही कैसे खींचे ले जा रहे हैं, जबकि इतने ओसेतियन लोगों की मदद के बावजूद, मेरी ख़ाली गाड़ी को घसीटना इन छह जानवरों के लिए भारी पड़ रहा है?"

जाँचने-परखने वाली निगाहों से मुझे तोलते हुए, वह सयानेपन से मुस्कराया।

"मैं समझता हूँ, आप कॉकेशिया में ज़्यादा दिनों से नहीं हैं?"

"क़रीब साल भर से हूँ," मैंने उत्तर दिया।

वह फिर मुस्कराया।

"यह आपने क्यों पूछा?"

"किसी ख़ास वजह से नहीं साहब। ये एशियाई लोग परले दर्जे के बदमाश हैं! क्या आपका ख़याल है, इनकी चीख़-पुकार से कोई लाभ हो रहा है? क्यों? ये कम्बख़्त कह क्या रहे हैं, आप नहीं समझ सकते। लेकिन मज़ा यह है कि बैल इनकी बोली ख़ूब

समझते हैं। भले आप बीस बैल जोत दीजिए, लेकिन जहाँ इन लोगों ने अपनी बोली में ज़रा चीख़ना-चिल्लाना शुरू किया कि बैल सरकेंगे ही नहीं... पक्के ठग हैं ये लोग। और आप इनका कर ही क्या सकते हैं? इनकी आँख तो मुसाफ़िरों की खाल उतारने में लगी रहती है। सिर चढ़ गये हैं ये बदमाश... जी हाँ... आप देखियेगा, ये लोग आपसे ज़बर्दस्ती बख़्शीश भी ले लेंगे। मैं तो इन्हें अब अच्छी तरह जान गया हूँ... अब ये लोग मुझे बेवकूफ़ नहीं बना पाते।"

"इस इलाके में क्या आप काफ़ी दिन काम कर चुके हैं?"

"जी हाँ, अलेक्सी पेत्रोविच जब यहाँ थे, तभी से।" उसने रोब से तनते हुए जवाब दिया, "जब यहाँ मोरचे पर आया, तब मैं सब-लेफ़्टिनेण्ट था, और उन्हीं के अधीन मुझे पहाड़ी कबीलों के ख़िलाफ़ लड़ाई में हिस्सा लेने के दौरान दो-दो तरक्कियाँ मिलीं।"

"और अब?"

"आजकल मैं तीसरे मोरचे की बटैलियन में हूँ। और आप...?"

मैंने उसे बता दिया।

इसके बाद बातचीत बन्द हो गयी और हम लोग ख़ामोशी से साथ-साथ चलते रहे। पहाड़ की चोटी पर पहुँच कर हमें बर्फ़ पर चलना पड़ा। जैसा कि दक्षिणी इलाके में आम होता है, सूरज डूबने के साथ ही, किसी अन्तराल के बिना, दिन के पीछे-पीछे रात चली आयी। फिर भी झिलमिलाती बर्फ़ की मदद से हम रास्ते को आसानी से देख सकते थे, जो अब भी चढ़ता चला जा रहा था, हालाँकि चढ़ाई पहले से कम हो गयी थी। मैंने सूटकेस को गाड़ी में रखने और बैलों की जगह घोड़े जोतने का हुक्म दिया, फिर दूर नीचे तक फैली घाटी पर एक आख़िरी नज़र डालने के लिए मुड़ा; लेकिन घने कोहरे ने, जो लहर-दर-लहर दर्रों से निकला चला जा रहा था, एक विशाल चादर की तरह घाटी को बिलकुल ढँक लिया था और उसकी गहराइयों से ज़रा-सी आवाज़ भी हम तक नहीं पहुँच रही थी। ओसेतियन मज़दूरों ने ज़ोर-ज़ोर से हल्ला करते हुए मुझे चारों ओर से घेर लिया और **वोद्का** के लिए बख़्शीश माँगने लगे। लेकिन मेरे साथी कप्तान ने उन्हें इतनी ज़ोर से डाँटा कि वे पल भर में तितर-बितर हो गये।

"देखा आपने, ये कैसे हरामी हैं!" उसने कुड़बुड़ाते हुए कहा, "रोटी का एक टुकड़ा माँगने लायक रूसी भाषा नहीं जानते, लेकिन बख़्शीश माँगना इन्होंने ख़ूब सीख

लिय। है – 'सरकार, वोदका के लिए पैसा!' इनसे तो तातारी ही अच्छे हैं। कम-से-कम ताड़ी-शराब तो नहीं पीते..."

डाक-बँगले तक पहुँचने में अब एक वर्स्ट और बचा था। चारों तरफ़ निस्तब्धता थी, ऐसी निस्तब्धता कि मच्छर की भनभनाहट से उसके उड़ने की दिशा जानी जा सकती थी। बायीं तरफ़ एक गहरा खड्ड अपना काला मुँह फाड़े जँभाई ले रहा था। उसके पार और हमसे ज़रा आगे, झुटपुटे की आख़िरी झिलमिलाहट सँजोये विवर्ण क्षितिज के सामने, दर्रों और नालों से बनी झुर्रियों वाले, गहरे-नीले हिम-मण्डित शिखर, अस्पष्ट-से झूम रहे थे। काले आसमान में तारे टिमटिमाने लगे थे और यह अजीब बात थी कि हमारे उत्तरी इलाके के आसमान की तुलना में यहाँ वे कहीं ज़्यादा ऊँचाई पर लगते थे। रास्ते के दोनों ओर नंगी, काली चट्टानें धरती से बाहर निकली हुई थीं; जहाँ-तहाँ कुछ झाड़ियाँ बर्फ़ के नीचे से झाँक रही थीं। एक सूखा पत्ता भी नहीं खड़क रहा था और प्रकृति की इस निःस्वन, निस्तब्ध तन्द्रा में थके हुए घोड़ों के ज़ोर-ज़ोर से साँस लेने की आवाज़ और रूसी गाड़ी की घण्टियों की क्रमहीन टुनटुन बड़ी भली लग रही थी।

"कल का दिन बहुत बढ़िया रहेगा!" मैंने कहा; लेकिन कप्तान ने उत्तर में कुछ नहीं कहा, बल्कि, हमारे सामने सीधे खड़े एक ऊँचे पहाड़ की ओर उँगली उठा कर इशारा कर दिया। "यह क्या है?"

"गुड-गोरा।"

"हाँ, हाँ। तो क्या हुआ?"

"देखिए, कैसे धुआँ छोड़ रहा है।"

सचमुच गुड-गोरा पहाड़ धुआँ छोड़ रहा था। कोहरे के हल्के-हल्के लच्छे उसकी ढलानों में रेंग रहे थे और एक काला बादल चोटी पर टिका था इतना काला कि काले आकाश में भी गहरे धब्बे-सा अलग दिखायी देता था।

अभी से ही हमें दूर फ़ासले पर डाक-बँगला और उसके इर्द-गिर्द खड़ी झोंपड़ियों की छतें दिखायी देने लगीं; और हमारा स्वागत करती हुई-सी रोशनियाँ अभी हमारे सामने नाच ही रही थीं, जब दर्रे से तेज़ रूखी हवा के सनसनाते सर्द झकोरे सीटियाँ बजाते चलने लगे और फुहार पड़ने लगी। मैंने मुश्किल से नमदे का अपना लबादा कन्धों पर डाला ही था कि बर्फ़ गिरनी शुरू हो गयी। अब मैंने कप्तान को ज़रा आदर से देखा...

"हमें यहाँ रात भर ठहरना पड़ेगा।" उसने खीझते हुए कहा, "ऐसे बर्फ़ीले तूफ़ान में पहाड़ों पर सफ़र करना असम्भव है।" फिर उसने एक कोचवान से पूछा, "क्यों, क्रेस्तोवाया पहाड़ पर बर्फ़ तो नहीं खिसकती दीख पड़ती?"

"नहीं, सरकार।" ओसेतियन कोचवान ने उत्तर दिया, "लेकिन एक बड़ा भारी ढेर नीचे गिरने की राह देख ही रहा है।"

डाक-बँगले में चूँकि मुसाफ़िरों के लिए कोई जगह नहीं थी, इसलिए हमें एक धुँआती झोंपड़ी ठहरने के लिए दे दी गयी। मैंने अपने सह-यात्री को चाय पर साथ देने का न्योता दिया, कि मेरे पास एक लोहे की केतली थी – मेरी कॉकेशियाई यात्राओं के दौरान मेरा एकमात्र सुख! हमारी झोंपड़ी एक खड़े कगार के सहारे बनी थी। तीन भीगी हुई चिकनी, फिसलनी सीढ़ियाँ दरवाज़े तक चढ़ती थीं। मैं रास्ता टटोलता अन्दर दाख़िल हुआ और एक गाय से टकरा कर लड़खड़ा गया, क्योंकि इन लोगों के यहाँ दालान के नाम पर गाय बाँधने का ओसारा ही होता है। मेरी समझ में नहीं आया कि अब किधर जाऊँ। एक तरफ़ भेड़ें मिमियाँ रही थीं और दूसरी तरफ़ एक कुत्ता ग़ुर्रा रहा था। भाग्य से तभी रोशनी की एक हल्की-सी टिमटिमाहट उस अँधेरे में दिखायी दी, जिसने मुझे दरवाज़ा-सी लगने वाली एक और फाँक का रास्ता दिखा दिया। यहाँ मुझे एक दिलचस्त-सा दृश्य नज़र आया : धुएँ से काले पड़े दो खम्भों पर टिकी छत वाली एक लम्बी-चौड़ी झोंपड़ी, लोगों से ठसाठस भरी थी। कमरे के बीचों-बीच, नंगी धरती पर जलायी हुई आग चटचटा रही थी और छत में बने छेद से आती तेज़ हवा द्वारा वापस धकेला गया धुआँ ऐसा घना हो कर फैल गया था कि अपने चारों ओर की चीज़ों को ठीक-ठीक देख पाने में मुझे कुछ देर लगी। आग के पास ही दो बूढ़ियाँ, बच्चों का एक झुण्ड और एक पतला-छरहरा ज्यॉर्जियन बैठा था सभी ने फटे-पुराने कपड़े पहने हुए थे। अब हमारे सामने इसके सिवा और कोई चारा नहीं था कि हम भी वहीं आग के पास आराम से पड़ जायँ और अपने-अपने पाइप जला लें। जल्द ही आग पर रखी चाय की केतली मीठे सुर में सनसनाने लगी।

"बेचारों पर तरस आता है।" अपने मैले-कुचैले मेज़बानों की तरफ़ सिर से इशारा करते हुए मैंने कप्तान से कहा। वे लोग जड़ता से चुपचाप हमें इस तरह घूर रहे थे, जैसे कुछ भी न समझ पा रहे हों।

"कुन्द-ज़ेहन लोग हैं!" उसने जवाब दिया, "सच मानिए, ये लोग कुछ नहीं कर सकते। न ये लोग कुछ सीख ही सकते हैं। हमारे कबार्डा और चेचना के लोग आवारा और गुण्डे भले ही हों कम-से-कम अच्छे लड़ाके तो हैं। लेकिन इन लोगों को तो हथियारों में भी जैसे कोई दिलचस्पी नहीं है। इनमें से किसी के पास आपको एक अच्छी

कटार तक नहीं मिलेगी। ख़ैर, इन ओसेतियन लोगों से आप उम्मीद भी क्या कर सकते हैं?"

"चेचना में भी आप काफ़ी रहे हैं क्या?"

"हाँ, काफ़ी दिनों तक। एक फ़ौजी कम्पनी के साथ कामेनी ब्रोड की तरफ़ एक किले की रक्षा में दस साल तैनात रहा। आप उस जगह को जानते हैं?"

"सुना है उसके बारे में।"

"हाँ, साहब, हमारे यहाँ तो उन बदमाशों का पूरा दल था। ख़ुदा का शुक्र है कि अब शान्ति है, वरना एक समय था कि आप किले की दीवार से सौ कदम दूर गये नहीं कि उनमें से कोई झबरा-भूत इस तैयारी के साथ आपके पीछे दबे-पाँव लग लिया कि कब आप ज़रा-सा लापरवाह हों और वह आपके गले में फन्दा डाले या खोपड़ी के पीछे गोली मार दे। ख़ैर, कुछ भी हो, वे लोग हैं हट्टे-कट्टे और मस्त।"

"तब तो आपके साथ बहुत-सी जोखिम-भरी घटनाएँ भी हुई होंगी," मैंने जिज्ञासा से प्रेरित हो कर पूछा।

"जी हाँ! बहुत-सी..." यह कह कर वह अपनी मूँछ के बायें सिरे को मरोड़ने लगा; उसका सिर झुक गया और वह गहरे विचारों में खो-सा गया। मुझे बड़ी बेचैनी से यह इच्छा हो रही थी कि उसके भीतर से किसी तरह की कोई कहानी निकाल लूँ यह इच्छा उन लोगों में स्वाभाविक रूप से होती है, जो तरह-तरह की चीज़ों के ब्योरे दर्ज करते हुए यात्राएँ किया करते हैं। इसी बीच चाय उबलने लगी थी। मैंने अपने सूटकेस में से दो सफ़री मग निकाले, उनमें चाय ढाली और एक मग कप्तान के सामने रख दिया।

उसने एक चुस्की ली और जैसे अपने आप से ही बुदबुदाया - "हाँ... सच ही... बहुत-सी..."

उसके इस उद्‌गार से मेरी उम्मीदें बढ़ गयीं, क्योंकि मैं जानता था, पुराने ज़माने के इन कॉकेशियाई बुज़ुर्गों को क़िस्से सुनाना पसन्द है। उन्हें बातचीत का मौक़ा कभी-कभार ही मिलता है, क्योंकि यह ऐन सम्भव है कि कोई आदमी पूरे पाँच वर्षों तक फ़ौज के साथ दूर-दराज के किसी जंगल में तैनात रहे, जहाँ कोई उसे 'नमस्कार' कहने वाला तक न मिले। (इस प्रकार का कोई सम्बोधन हवलदारों के सैनिक शब्दकोश में तो होता नहीं।) और सबसे बड़ी बात यह है कि उनके पास बताने के लिए कितना कुछ होता भी तो है - इर्द-गिर्द के अजीबो-ग़रीब जंगली लोग; हमेशा सिर पर नाचते ख़तरे और बहादुरी के सनसनीख़ेज़ कारनामे - कितना कुछ; यह सोच कर बेहद अफ़सोस होता है कि हम इस सब के बारे में कितना कम लिखते हैं।

"इसमें ज़रा-सी रम मिलाना पसन्द करेंगे?" मैंने पूछा, "मेरे पास तिफ़लिस की थोड़ी-सी सफ़ेद रम है। इस ठण्ड में आपको गरम कर देगी।"

"नहीं, शुक्रिया। मैं शराब नहीं पीता।"

"क्यों?"

"बस... तौबा कर ली है। एक बार की बात है, जब मैं सब-लेफ़्टिनेण्ट ही था, एक दिन हम लोग ज़रा मौज-मस्ती मनाने निकल पड़े। आप जानते ही होंगे, ऐसे में क्या-कुछ होता है, और इत्तफ़ाक से उसी रात ख़तरे की पुकार हुई। सो हम लोग अफ़सरों के सामने मस्ती के उसी आलम में हाज़िर हुए। इस बात का पता जब अलेक्सी पेत्रोविच को लगा तो बस, कहर बर्पा हो गया। ऐसे ग़ुस्से में पागल आदमी का सामना करने से तो ख़ुदा ही बचाये! बस, यह समझिए, हमलोग कोर्ट-मार्शल होने से बाल-बाल बच गये। सो ऐसा ही होता है : कभी-कभी तो किसी को देखे बिना पूरा साल बिता देना पड़ता है, और अगर ऐसे में पीने की लत पड़ गयी तो समझिए कि छुट्टी हो गयी।"

यह सुन कर मेरी रही-सही आशा भी लगभग जाती रही।

"उन चेरकस लोगों को ही लीजिए," उसने बात ज़ारी रखी, "जैसे ही किसी शादी या ग़मी के मौके पर इन्होंने डट कर बुज़ा पी-पिलायी कि लड़ाई शुरू हो जायेगी। एक बार तो मैं बड़ी मुश्किल से अपनी जान बचा कर आ पाया, हालाँकि मैं एक अमन-पसन्द सरदार का मेहमान था।"

"यह कैसे हुआ?"

"बस..." उसने अपना पाइप भर कर सुलगाया, एक लम्बा कश खींचा, और क़िस्सा शुरू किया...

"हुआ यों कि उन दिनों मैं एक फ़ौजी कम्पनी के साथ तेरेक नदी के उस पार एक किले पर तैनात था यह क़रीब पाँच बरस पहले की बात है। एक बार पतझर के मौसम में एक रक्षक दल रसद ले कर किले में आया। दल के साथ एक अफ़सर भी था - क़रीब पच्चीस साल का नौजवान। वह अपनी पूरी वर्दी में हाज़िर हुआ और उसने मुझे सूचित किया कि उसे किले पर मेरे साथ ही तैनात होने का हुक्म मिला है। वह इतना पतला-छरहरा और विवर्ण-सा था और उसकी वर्दी ऐसी बेदाग़ और चुस्त-दुरुस्त थी कि मैं देखते ही समझ गया, वह कॉकेशिया में नया-नया ही आया है।

"तुम तो रूस से तबादले पर यहाँ आये होगे?" मैंने उससे पूछा। "जी साहब," उसने जवाब दिया।

मैंने उससे हाथ मिलाते हुए कहा – "तुम्हारे यहाँ आने से बहुत ख़ुशी हुई; सचमुच। थोड़ी ऊब-सी लगेगी तुमको यहाँ... लेकिन मुझे विश्वास है, हम लोग मज़े में निभा लेंगे... अगर चाहो तो मुझे सिर्फ़ मैक्सिम मैक्सिमिच कह कर पुकारो; और हाँ, एक बात और, तुम्हें पूरी वर्दी डाट कर आने का तकल्लुफ़ निभाने की कोई ज़रूरत नहीं। सिर्फ़ आम फ़ौजी टोपी लगा कर आ जाया करो।" उसे उसका क्वार्टर दिखा दिया गया और वह किले में जम गया।

"उसका नाम क्या था?" मैंने मैक्सिम मैक्सिमिच से पूछा। "ग्रिगोरी अलेक्ज़ान्द्रोविच पेचोरिन। यकीन कीजिए, बड़ा मस्त जवान था; हालाँकि थोड़ा अजीब और सनकी-सा ज़रूर था। मसलन, वह शिकार में कई-कई दिन गुज़ार देता, जाड़ा हो या बारिश। सब ठिठुर जाते, थक कर चूर-चूर हो जाते, लेकिन उस पर कोई असर ही नहीं। इसके बावजूद कभी उसके कमरे में हवा के हलके-से झोंके का आना ही इस बात के लिए काफ़ी होता कि वह जुकाम की शिकायत करने लगे। कभी ज़ोर से खिड़की बन्द करने का धमाका ही उसे चौंका देता और वह घबरा कर पीला पड़ जाता; जबकि दूसरी तरफ़ मैंने ख़ुद अपनी आँखों से उसे अकेले दम जंगली सुअर का सामना करते दुखा था। कभी घण्टों कोशिश करने पर भी हम उसके मुँह से एक शब्द न निकलवा पाते, लेकिन कभी-कभार, जब वह क़िस्से सुनाना शुरू कर देता तो हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जाते... हाँ साहब, बड़ी ही अजीबो-ग़रीब आदमी था वह, और प्रकट ही अमीर भी, जैसा कि उसके ढेर सारे कीमती साज़-सामान को देख कर साफ़ अन्दाज़ा लगता था।"

"आपके साथ कितने दिनों तक रहा वह?" मैंने पूछा।

"पूरा एक साल! और वह साल मुझे हमेशा याद रहेगा। उसने मेरे लिए परेशानियाँ तो काफ़ी खड़ी कीं, भगवान उसका भला करे, लेकिन फिर कुछ आदमियों की तो किस्मत में ही लिखा होता है कि उनकी ज़िन्दगी में अजीबो-ग़रीब बातें घटित हों।"

"अजीबो-ग़रीब बातें?" उसके लिए कुछ और चाय ढालते हुए उत्सुकतावश मेरे मुँह से निकल पड़ा। "तो फिर आपको पूरी कहानी ही सुना दूँ।... उस किले से लगभग छह वर्स्ट की दूरी पर, शान्त स्वभाव का एक स्थानीय सरदार रहता था। उसके बेटे को, जो पन्द्रह-सोलस बरस का नौजवान था, रोज़ अपने घोड़े पर हम लोगों से मिलने के लिए किले पर आने की आदत पड़ गयी थी। कोई दिन न जाता, जब वह किसी-न-किसी बहाने से हमारे पास न चला आये। मैंने और पेचोरिन ने सचमुच उसे सिर चढ़ा लिया था।

वह शैतान था भी अव्वल दर्जे का पागल और सिरफिरा दुनिया के हर काम के लिए तैयार चाहे सरपट दौड़ते घोड़े की ज़ीन से नीचे लटक कर ज़मीन पर रखी टोपी उठाना हो, या निशानेबाज़ी का कमाल दिखाना। लेकिन एक ख़राब आदत भी उसमें थी। पैसे के लिए उसके दिल में भयानक कमज़ोरी थी। एक बार मज़ाक-मज़ाक ही में पेचोरिन ने उससे शर्त बद ली कि अगर वह अपने बाप के मवेशीखाने का सबसे अच्छा बकरा चुरा लाये तो वह उसे एक गिन्नी इनाम देगा। और क्या ख़याल है आपका? दूसरी ही रात वह बकरे को सींगों से पकड़ कर घसीता हुआ ले आया। कभी-कभी जब हम लोग उसे चिढ़ाने लगते तो वह ग़ुस्से से भड़क कर अपनी कटार तक निकाल लेता। मैं उससे कहता था 'अज़मत, तुम्हारे भले के लिए दिमाग़ की इतनी गर्मी ठीक नहीं। कभी बहुत नुकसान उठाओगे। तुम्हारी चुटिया के लिए दिमाग़ का इतना गर्म होना यमन है।'

"एक बार हमें एक शादी में निमन्त्रण देने के लिए बूढ़े सरदार साहब ख़ुद चले आये। शादी उनकी बड़ी लड़की की थी और चूँकि हम कुनाक थे, इसलिए इन्कार करने का कोई सवाल ही नहीं था, जैसा कि आप जानते हैं, भले ही हम तातार नहीं थे। लिहाजा हम रवाना हुए। गाँव में घुसते ही भौंकते कुत्तों के एक झुण्ड ने हमारा स्वागत किया। हमें देखते ही औरतें छिप गयीं; वैसे भी, जिन चेहरों की एकाध झलक हमें मिली भी, वे सुन्दरता से कोसों दूर थे।

" 'अभी तक तो चेरकस औरतों के बारे में मेरी बहुत अच्छी धारणा थी,' ग्रिगोरी अलेक्जान्द्रोविच ने उन चेहरों को देख कर मुझसे कहा।

" 'ज़रा दम तो धरो,' मैंने मुस्कराते हुए जवाब दिया। मेरे हाथ में अभी एक मोहरा था।

"सरदार के घर में अच्छी-ख़ासी भीड़ जुटी हुई थी। इन एशियाई लोगों में तो यह रिवाज ही है, आप जानते हैं, कि अपनी शादियों पर ये हर उस आदमी को न्योता लेते हैं, जिससे रास्ता चलते उनकी मुलाकात हो जाय। पूरे आदर-सम्मान से हमारा स्वागत हुआ और हमें घर के सबसे बढ़िया कमरे में ले जा कर बैठा दिया गया। हाँ, इस अन्देशे में कि कहीं कोई अप्रत्याशित घटना न हो जाय, भीतर जाने से पहले मैंने उस जगह को ध्यान से देख लेने की सावधानी ज़रूर बरती, जहाँ उन्होंने हमारे घोड़े बाँधे थे। 'ब्याह कैसे रचाते हैं वे लोग?' मैंने कप्तान से पूछा। 'अरे, सामान्य तरीके से ही। सबसे पहले मौलवी कुरान की कुछ आयतें पढ़ता है, फिर नये जोड़े और उसके सभी रिश्तेदारों को तोहफ़े दिये जाते हैं। फिर वे दावत उड़ाते हैं, बुज़ा पीते हैं और अन्त में घुड़सवारी के कमान दिखाये जाते हैं। उनकी हर शादी में लोगों का दिल बहलाने के लिए एक मरियल-से,

खरसैले, लँगड़े टट्टू पर सवार, कोई न कोई गन्दा-सा आदमी, चिथड़े पहने भाँड़ बना, ज़रूरी मौजूद रहता है। बाद में जब अँधेरा हो जाता है तो घर के सबसे बढ़िया कमरे में 'बॉल' की तरह का एक नाच शुरू होता है। एक ओर कोई दयनीय बुड्ढा तीन तारों वाला बाजा ले कर बैठ जाता है... ठीक से याद नहीं, उसे कहते क्या हैं... अरे, हमारे बेलालायका से बहुत कुछ मिलता-जुलता है; सब युवक और युवतियाँ दो सीधी कतारों में आमने-सामने मुँह करके खड़े हो जाते हैं और ताली बजाते हुए गाने लगते हैं। फिर उनमें से एक जोड़ा अपनी-अपनी कतार से निकल कर बीच में आ खड़ा होता है और एक-दूसरे को कोई गीत सुनाता है; जैसे-जैसे गीत आगे बढ़ता है, वे फ़ौरन नयी पंक्तियाँ अपने मन से उसमें जोड़ कर उसे बढ़ाते चलते हैं। बाकी लोग सिर्फ़ टेक को दुहराते हैं। पेचोरिन और मैं दोनों ही को मोअज़्ज़िज़ मेहमानों की जगह दी गयी। हम लोगों के वहाँ बैठ जाने पर हमारे मेज़बान की छोटी बेटी सोलह-सत्रह वर्ष की युवती पेचोरिन के सामने आ कर खड़ी हो गयी और उसकी ओर मुँह करके गाने लगी... क्या कहूँ उसे... समझिए, एक तरह का कसीदा गाने लगी।' 'आपको याद है उसने क्या गाया था?' 'हाँ, मेरा ख़याल है, वह कुछ-कुछ इस तरह था – हमारे युवा घुड़सवार लम्बे, ऊँचे और दिलेर हैं और उनके अँगरखों पर चाँदी की गोट लगी है, लेकिन यह नौजवान रूसी अफ़सर उनसे कहीं ज़्यादा बलिष्ठ है और उसके झब्बे भी सोने के हैं। उनके बीच वह देवदार के वृक्ष जैसा लगता है; लेकिन अफ़सोस, यह देवदार हमारे बाग़ में न उगेगा, न फूलेगा।' उसने गीत ख़त्म किया तो पेचोरिन उठा और ज़रा आगे झुक कर, अपना एक हाथ माथे पर और दूसरा सीने पर लगाते हुए, उसने लड़की का अभिनन्दन स्वीकार किया। फिर उसने मुझसे जवाब देने के लिए कहा। चूँकि मैं उनकी भाषा अच्छी तरह जानता था, मैंने उसके उत्तर का अनुवाद कर दिया। जब वह मुड़ कर चली गयी तो मैंने पेचोरिन से दबी आवाज़ में पूछा, 'अब बोलो, क्या ख़याल है तुम्हारा इसके बारे में...?' 'गजब है,' उसने जवाब में कहा। फिर पूछा 'इसका नाम क्या है?' 'बेला,' मैंने बताया। और सचमुच वह थी भी बहुत सुन्दर लम्बा-छरहरा शरीर और सीधे दिल की गहराइयों को छू लेने वाली, पहाड़ी हिरन की-सी काली-काली आँखें!

"पेचोरिन विचारों में खोया-खोया-सा एकटक उसी को देखता रहा और वह भी छिपी नज़रों से कभी-कभी उसकी ओर देख लेती। लेकिन वहाँ उस ख़ूबसूरत राजकुमारी का प्रशंसक अकेला पेचोरिन ही नहीं था। उसी कमरे के एक कोने से अपलक और जलती हुई आँखों का एक और जोड़ा उस पर जमा था। उन आँखों की तरफ़ ध्यान से देखने पर मैंने अपने पुराने परिचित काज़बिच को पहचान लिया। वह उन लोगों में से था, जिन्हें किसी हालत में दोस्त नहीं कहा जा सकता; हालाँकि ऐसी कोई बात नहीं थी,

जिससे यह ज़ाहिर होता कि वह हमसे दुश्मनी पाले हुए है। उस पर शक तो कई बार हुआ, लेकिन वह कभी कोई चाल चलता रँगे हाथों नहीं पकड़ा गया था। कभी-कभार वह भेड़ें ले कर हमारे पास किले में आता और उन्हें सस्ते दामों में बेच जाता, लेकिन कभी भाव-ताव नहीं करता था; जो एक बार उसके मुँह से निकल गया, वही दाम उसे देना पड़ता। भले ही उसकी ज़िन्दगी दाँव पर लगी हो, पर अपनी माँगी हुई कीमत को वह ज़रा भी कम नहीं करता था। उसके बारे में ऐसी अफ़वाह थी कि वह अब्रेक लोगों के साथ घोड़े पर कुबान नदी के पार धावे मारा करता है और सच कहा जाय तो वह एक पक्का लुटेरा लगता भी था ठिगने कद का, चौड़े कन्धों वाला मज़बूत आदमी था फ़ौलाद-सा सख़्त और शैतान-सा काइयाँ! वह हमेशा एक फटा और पैबन्द-लगा बेश्मेत पहने रहता, लेकिन उसके हथियार उम्दा और चाँदी में मढ़े होते। और उसका घोड़ा! सारे कबार्डा में उसके घोड़े का नाम था। यह सच है कि उससे अच्छे छोड़े की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। आस-पास के घुड़सवारों को काज़बिच से ईर्ष्या करने की यह अच्छी-ख़ासी वजह थी भी। न जाने कितनी बार वे उसे उड़ाने की कोशिश कर चुके थे लेकिन कभी सफल न हुए थे। मैं उस घोड़े को अब भी इतना साफ़-साफ़ देख सकता हूँ, मानो वह मेरे सामने खड़ा हो काला भुजंग रंग, वायलिन के कसे तारों जैसी टाँगें और बड़ी-बड़ी आँखें, जो बेला की आँखों से किसी दर्जे कम नहीं थीं। यही नहीं, वह मज़बूत भी काफ़ी था और एक साँस में पचास वर्स्ट तक सरपट दौड़ लगा सकता था। सिखाया हुआ ऐसा कि कुत्ते की तरह काज़बिच के पीछे-पीछे लगा रहता अपने मालिक की आवाज़ तक पहचानता था; काज़बिच ने उसे खूँटे से बाँधने की जहमत कभी नहीं उठायी थी। पक्के डकैत का घोड़ा था।

"उस शाम मुझे काज़बिच कुछ उदास और खोया-खोया-सा लगा। इतना उदास उसे मैंने कभी नहीं देखा था। साथ ही मैंने यह भी देखा कि उसने बेश्मेत के नीचे जालीदार जिरह-बख़्तर पहन रखा था। 'जिरह-बख़्तर पहनने की कोई न कोई वजह ज़रूर होगी,' मैंने मन में सोचा, 'यह ज़रूर कोई चाल चलने की योजना बना रहा है।'

"भीतर घुटन-सी थी, इसलिए मैं बाहर खुली हवा में चला आया। पहाड़ियों पर रात उतर आयी थी और दर्रों के भीतर-बाहर धुन्ध अपना ताना-बाना बुनने लगी थी।

"अचानक मुझे ख़याल आया कि लगे हाथ उस छप्पर पर नज़र मार लूँ, जहाँ हमारे घोड़े बँधे थे, साथ ही यह भी देख लूँ कि उन्हें चारा दिया गया है या नहीं। इसके इलावा अपनी ओर से सावधान रहने में कोई नुकसान नहीं। यों भी मेरा घोड़ा बहुत बढ़िया नस्ल का था और बहुत-से कबार्डियों ने उस पर ललचाई, चाव-भरी नज़रें डालते

हुए कहा था : 'यक्शी त्खे, चक यक्शी!'

"मैं अहाते की बाड़ के साथ-साथ रास्ता ढूँढ़ता चला जा रहा था कि अचानक मुझे कुछ आवाज़ें सुनायी दीं; बोलने वालों में से एक को तो मैंने फ़ौरन पहचान लिया : वही सिर-फिरा शैतान था हमारे मेज़बान का लड़का अज़मत। दूसरा आदमी अपेक्षाकृत धीरे-धीरे और दबी आवाज़ में बोल रहा था। 'न जाने ये किस फेर में हैं,' मैंने सोचा, 'कहीं मेरे घोड़े को पार करने के चक्कर में तो नहीं!' मैं एकदम बाड़ की ओट ले कर बैठ गया और कान लगा कर सुनने लगा। मेरी कोशिश यही थी कि एक भी शब्द न छूटने पाये, लेकिन पूरी बातचीत को शब्दशः सुन पाना सम्भव नहीं था, क्योंकि जब-तब झोंपड़ी के अन्दर से आता हुआ गाने और हल्ले-गुल्ले का स्वर उन बातों को रह-रह कर डुबो देता, जिन्हें सुनने के लिए मैं इतनी उत्सुकता से कान लगाये बैठा था। 'तुम्हारा यह घोड़ा बहुत शानदार है!' अज़मत कह रहा था, 'काज़बिच, अगर मैं अपने घर का मालिक होता और मेरे पास तीन सौ घोड़ों का दल होता, तो उसका आधा मैं तुम्हें इस घोड़े के बदले में दे देता।' 'तो ये दूसरे साहब काज़बिच हैं,' मैंने सोचा और तभी मुझे उसके जिरह-बख़्तर की याद हो आयी। 'तुम ठीक कहते हो,' पल भर की ख़ामोशी के बाद काज़बिच ने जवाब दिया, 'पूरे कबार्दा में तुम्हें इस जैसा दूसरा घोड़ा नहीं मिलेगा।' एक बार की बात है, कुछ रूसी घोड़ों को उड़ा लाने के फ़िराक में इसी घोड़े पर चढ़ कर मैंने अब्रेक कबाइलियों के साथ तेरेक नदी के उस पार गया हुआ था। उस दिन किस्मत ने हमारा साथ नहीं दिया और हमें तितर-बितर हो जाना पड़ा। चार कज़ाकों ने मुझे दौड़ा लिया। अपने ठीक पीछे उन काफ़िरों की चीख़-पुकार मुझे साफ़ सुनायी दे रही थी और मेरे ठीक सामने कँटीली झाड़ियों का एक जंगल था। मैं झुक कर ज़ीन से चिपक गया; अपने आपको मैंने अल्लाह के हवाले छोड़ा और ज़िन्दगी में पहली बार चाबुक लगा कर इस घोड़े का अपमान किया। किसी परिन्दे की तरह यह शाखों के बीच से उड़ चला। काँटों में उलझ कर मेरे कपड़े तार-तार हो गये और कारागाच के पेड़ों की सूखी, सख़्त टहनियों की मार मेरे चेहरे पर कोड़ों-सरीखी पड़ने लगी। कटे हुए पेड़ों के ठूँठों पर से छलाँगें मारता और झाड़ियों को अपने सीने से चीरता यह आगे बढ़ चला। मेरे हक में कहीं बेहतर होता, अगर मैं किसी खुले मैदान में इस पर से सरक कर पैदक ही जंगल में जा छिपता; लेकिन मैं इस घोड़े से जुदा होना नहीं सह सकता था, इसलिए मैं जमा रहा और रसूल ने इसका इनाम भी मुझे दिया। कुछ गोलियाँ सनसनाती हुईं मेरे सिर के ऊपर से गुज़र गयीं; अपने घोड़ों से उतरकर, पैदल ही मेरे पीछे दौड़ते कज़ाकों की आवाज़ें मुझ तक आ रही थीं। सहसा एक गहरी खाई सामने दिखायी दी। पल भर के लिए तो मेरा घोड़ा झिझका, फिर इसने छलाँग लगा दी। लेकिन दूसरी तरफ़ पहुँच कर इसकी पिछली

टाँगें खाई के ढालू किनारे पर फिसल गयीं और यह सिर्फ़ अगली टाँगों के बल लटकता रह गया। लगाम छोड़ कर मैं फ़ौरन खड्ड में कूद पड़ा। इससे घोड़े की जान बच गयी और यह किसी तरह ऊपर चढ़ने में सफल हो गया। कज़ाकों ने यह सब देखा, लेकिन उनमें से एक भी आदमी मुझे खोजने के लिए खड्ड में नहीं उतरा; उन्होंने शायद मुझे मरा जान कर मेरा पीछा छोड़ दिया था। लेकिन अब मैंने उन्हें अपने घोड़े का पीछा करते सुना। खड्ड की घनी, सख़्त घास और झाड़ियों में से रेंग कर निकलते हुए, मेरा दिल इस घोड़े के लिए फटा जा रहा था। आख़िरकार मैं किसी तरह उस खड्ड से बाहर आया। तभी मैंने कुछ कज़ाक घुड़सवारों को जंगल में से निकल कर खुले मैदान में आते और अपने कराग्योज़ को सीधे उनकी ओर सरपट दौड़ाते देखा। ज़ोर से चिल्ला कर उन्होंने तीर की तरह इसकी ओर धावा मारा। काफ़ी देर तक वे इसका पीछा करते रहे। उनमें से एक ने तो अपना फन्दा दो-एक बार इसकी गर्दन में लगभग डाल ही दिया था। सिहर कर मैंने उधर से अपनी नज़रें हटा लीं और ख़ुदा से दुआ माँगने लगा। कुछ पल बाद, जब मैंने निगाहें उठायीं तो देखा कि मेरा कराग्योज़ हवा में बातें करता भागा चला जा रहा था, इसकी पूँछ हवा में लहरा रही थी और मैदान में काफ़िर अपने थके-टूटे घोड़ों पर बहुत पीछे रह गये थे। कसम परवरदिगार की, यह सब एकदम सच है। गयी रात तक मैं उसी खड्ड में बैठा रहा। और तुम सोच सकते हो अज़मत, इसके बाद क्या हुआ? अचानक मैंने अँधेरे में खड्ड के किनारे किसी घोड़े के दौड़ने की आवाज़ सुनी। वह हिनहिनाता, नथुनों से साँस छोड़ता और खुर पटकता चला आ रहा था। मैंने फ़ौरन अपने कराग्योज़ की आवाज़ पहचान ली। हाँ, वह यही था, मेरा साथी। तब से आज तक हम कभी अलग नहीं हुए।'

"काज़बिच ने क़िस्सा ख़त्म किया तो मैंने उसे घोड़े की चिकनी गर्दन को थपथपाते और तरह-तरह से लाड़-भरे स्वर में घोड़े को पुचकारते सुना।

" 'अगर मेरे पास हज़ार घोड़ियों का झुण्ड होता,' अज़मत बोला, 'तो मैं उसे तुमको इस कराग्योज़ के बदले में सौंप देता।'

" 'यक! मुझे तब भी मंजूर न होता,' काज़बिच ने, उसकी बात पर ध्यान दिये बिना, उदासीनता से उत्तर दिया।

" 'सुनो, काज़बिच,' अज़मत ने ख़ुशामद-भरे शब्दों में उसे फुसलाते हुए कहा, 'तुम एक भले आदमी हो, बहादुर भी हो। मेरे अब्बा रूसियों से डरते हैं और मुझे पहाड़ों में जाने की इजाज़त नहीं देते। बस, मुझे अपना घोड़ा दे दो; बदले में जो तुम चाहोगे, मैं करूँगा। मैं तुम्हें अपने अब्बा की सबसे अच्छी बन्दूक या तलवार, या जो भी तुम चाहो,

चुरा कर ला दूँगा। उनकी तलवार असली गुरदा है! उसकी धार हाथ पर ज़रा रख भर दो और वह मांस में गहरे उतरती चली जायेगी। तुमने जो जिरह-बख़्तर पहन रखा है, ऐसा जिरह-बख़्तर भी उसे रोक नहीं सकता।'

"काज़बिच कुछ नहीं बोला।

"अज़मत ने बात ज़ारी रखी, 'जब मैंने पहले-पहल तुम्हारे नीचे उछल-कूद मचाता यह घोड़ा, इसके फैले हुए नथुनों और खुरों के नीचे से उड़ती चिनगारियों को देखा, तो मुझे अपने दिल के भीतर जाने कैसा-कैसा होता जान पड़ा और हर चीज़ से मेरी दिलचस्पी ख़त्म हो गयी। अब्बा के अच्छे से अच्छे घोड़ों से मुझे नफ़रत हो गयी है; कोई मुझे उन पर सवारी करते हुए देखे, यह मुझे शर्मनाक लगता है और मेरे दिल में अजीब-सी बेचैनी और बेज़ारी घर कर गयी है। इसी दुख में मैंने पूरे-पूरे दिन चट्टानी कगार पर बैठ कर सिर्फ़ तुम्हारे इस हवा से बातें करने वाले क़राग्योज़ के बारे में सोचते हुए गुज़ार दिये हैं इसके लम्बे-लम्बे गर्वीले डगों; तीर-सी सीधी इसकी चिकनी पीठ; मशाल की तरह दहकती इसकी आँखों के बारे में सोचते हुए, जो सीधी मेरी आँखों में घूरती हैं, मानो यह मुझसे बातें करना चाहता हो। अगर तुमने घोड़ा मुझे नहीं बेचा काज़बिच, तो देख लेना मैं जान दे दूँगा।' अज़मत ने काँपती हुई आवाज़ में कहा। मुझे ऐसा लगा, जैसे वह सिसक रहा हो; और मैं आपको बता दूँ कि यह अज़मत निहायत ही जिद्दी लड़का था; जब वह छोटा-सा था, तब भी कोई चीज़ उसे रोने पर मजबूर नहीं कर पाती थी।

"उसके आँसुओं के उत्तर में काज़बिच के हँसने की-सी आवाज़ सुनायी दी।

" 'सुनो!' इस बार अज़मत की आवाज़ में दृढ़ता थी, 'तुम देख ही रहे हो कि मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ। अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हारे लिए अपनी बहन तक चुका कर ला सकता हूँ? आह, कितना अच्छा गाती और नाचती है वह! और उसकी सुनहरी कढ़ाई-सिलाई कितनी शानदार है। तुर्की के सुल्तान तक को ऐसी बेगम आज तक नसीब न हुई होगी। अगर तुम उसको चाहो, तो कल रात उस दर्रे में मेरा इन्तज़ार करना, जहाँ नदी बहती है; मैं उसके साथ उसी रास्ते से हो कर दूसरे गाँव की ओर जाऊँगा... और फिर वह तुम्हारी होगी। क्या बेला तुम्हारे घोड़े जितनी कीमती नहीं है?'

"इसके बाद काफ़ी लम्बे समय तक काज़बिच ख़ामोश रहा। अन्त में जवाब देने की बजाय, वह एक पुराना गीत धीमी, मधुर आवाज़ में गाने लगा :

'गोरियाँ हमारी ये, दुनिया से सब से हसीं
अँखियाँ हैं तारों-सी, जिन में दिखे सारी जमीं

मधुर बीते समय जब हम प्यार करें गोरी को
आज़ादी इससे मधुर जो हासिल है सजीले को

दसियों ही बीवियाँ तुम ले आओ सोना दे;
अगनित धन-दौलत से आँका न जा सके
मोल उस तुरंग का जो तीर-सा उड़ता फिरे
फैले मैदानों पर, ले बाज़ी तूफ़ानों से

झूठ कभी बोले न, धोखा कभी न दे
ऐसे ही घोड़े पे, सब तू वार दे'

"अज़मत ने उसे मनाने के लिए कोई कसर उठा न रखी आँसू बहाये, ख़ुशामदें कीं, गिड़गिड़ाया, फुसलाने की कोशिश की, पर सब बेकार साबित हुआ; यहाँ तक कि आख़िरकार काज़बिच झुँझला कर धैर्य खो बैठा, 'चलो हटो बच्चे, भागो यहाँ से! पगला गये हो क्या? तुम कभी मेरे घोड़े पर सवारी नहीं कर सकोगे। तीन कदमों के बाद ही वह तुम्हें झटक कर फेंक देगा और तुम अपना सिर किसी चट्टान से टकरा कर चकनाचूर कर लोगे।'

" 'क्या कहा? मुझे,' अज़मत ग़ुस्से से चीख़ा और दूसरे ही क्षण उसकी कटार काज़बिच के जिरह-बख़्तर के टकरा कर झनझना उठी। मज़बूत बाँह के एक ज़ोरदार धक्के ने उसे पीछे फेंक दिया और वह बाड़े के टट्टर से इतने ज़ोर से जा टकराया कि वह हिल उठा।

" 'अब तमाशा शुरू होगा,' मैंने मन ही मन कहा; फिर मैं अस्तबल की ओर लपका, अपने घोड़ों की जीनें कस कर लगातें दुरुस्त कीं और उन्हें पीछे के आँगन में ले आया। दो मिनट बाद ही झोंपड़ी में भयंकर हंगामा मच गया। हुआ यह कि अपना फटा बेश्मेट लिये, अज़मत ज़ोर-ज़ोर से यह चीख़ता हुआ झोंपड़ी में दौड़ा गया कि काज़बिच ने उसे जान से मार डालने की कोशिश की थी। यह सुन कर सब के सब झोंपड़ी से बाहर निकल पड़े और अपनी-अपनी बन्दूकें लाने के लिए लपके और इस तरह तमाशा चालू हो गया। चारों ओर चीख़-पुकार मच गयी। गोलियाँ दगने लगीं; लेकिन काज़बिच तब तक घोड़े पर सवार हो चुका था और भीड़ के बीचों-बीच चकरघिन्नी की तरह नाचता हुआ, दैत्य की तरह अपनी तलवार की मदद से सारे हमलावरों से बचाव करता सड़क की ओर चला जा रहा था।

'मेरे ख़याल से तो इस हंगामे में फँसना ठीक नहीं,' पेचोरिन की बाँह पकड़ते हुए मैंने कहा, 'जितनी जल्दी हो सके, हमें यहाँ से रफ़ूचक्कर हो जाना चाहिए; यही हमारे हक में अच्छा होगा।'

'ज़रा ठहरो, कुछ देर रुक कर देखें तो सही, आख़िर इसका हश्र क्या होता है!'

'ज़ाहिर है, अच्छा नहीं होगा। इन एशियाई लोगों के साथ हमेशा यही होता है। जहाँ इन्होंने नाक तक दारू चढ़ायी नहीं कि एक-दूसरे को चीरने-फाड़ने दौड़े।'

"सो जनाब, हम अपने घोड़ों पर सवार हुए और घर लौट आये।"

"काज़बिच का क्या हुआ?" मैंने अधीर हो कर पूछा।

"हो ही क्या सकता है इन लोगों का?" गिलास की बची-खुची चाय ख़त्म करते हुए कप्तान ने जवाब दिया, "वह साफ़ निकल भागा।"

"ज़ख़्मी भी नहीं हुआ?" मैंने पूछा।

"ख़ुदा ही जाने! बेहद सख़्त-जान होते हैं ये बदमाश! मैंने लड़ाइयों में इनमें से कुछ को देखा है; पसलियों में संगीन आर-पार हो जायेगी, जिस्म धज्जी की तरह तार-तार हो जायेगा, लेकिन क्या मजाल है जो तलवार घुमाना रुक जाय!"

कुछ देर की ख़ामोशी के बाद ज़मीन पर पाँव पटकते हुए कप्तान ने बात ज़ारी रखी "लेकिन एक बात ऐसी है, जिसके लिए मैं अपने आप को कभी माफ़ नहीं करूँगा। जब हम किले में लौट आये, तो जाने मुझे क्या सूझा कि मैंने पेचोरिन को वह सब ज्यों-का-त्यों बता दिया, जो मैंने दीवार की ओट से चुपचाप छिप कर सुना था। सुन कर वह सिर्फ़ हँस दिया चालाक लूमड़ कहीं का! हालाँकि उसने तभी से मन-ही-मन खिचड़ी पकानी शुरू कर दी थी।"

"कैसी खिचड़ी? ज़रा बताइए तो सही! मैं सुनना चाहता हूँ।"

"मेरा ख़याल है, आपको पूरा क़िस्सा बताना ही होगा। अब कहानी शुरू की है तो इसे ख़त्म भी कर ही दूँ।"

"कोई चार-पाँच दिन बाद अज़मत घोड़े पर सवार हो कर किले में आया। हमेशा की तरह वह उस दिन भी पेचोरिन से मिलने भीतर गया; पेचोरिन उसके लिए खाने की कोई-न-कोई स्वादिष्ट चीज़ हमेशा रखे रहता था। मैं भी वहीं मौजूद था। कुछ देर बाद बातचीत घोड़ों पर चली आयी और पेचोरिन ने काज़बिच के घोड़े की तारीफ़ों के पुल बाँधने शुरू कर दिये कैसा पहाड़ी हिरन सरीखा ख़ूबसूरत था वह घोड़ा, कितना जानदार और चुलबुला था; पेचोरिन ने कुछ इस तरह उसकी खूबियाँ बयान कीं, मानो दुनिया भर में उस जैसा और कोई घोड़ा ही नहीं था। पेचोरिन की लच्छेदार बातें सुन कर उस तातारी लड़के की आँखें चमक उठीं, लेकिन पेचोरिन ने इस पर जान-बूझ कर ध्यान न देने का नाटक किया। मैंने विषय को बदलने की कोशिश भी की, लेकिन वह तुरत ही बातचीत को फिर काज़बिच के घोड़े पर ले आया। इसके बाद जब-जब अज़मत आता, हर बार यही होता। क़रीब तीन हफ़्ते बाद मैंने ग़ौर किया कि अज़मत धीरे-धीरे पीला पड़ता जा रहा है और क़िस्से-कहानियों में मुहब्बत के मारे लोगों की तरह घुल रहा था। आख़िर माज़रा क्या है? मैंने सोचा।

"बात यह है कि मुझे पूरे क़िस्से का पता बाद में लगा। पेचोरिन ने उसे इस हद तक उकसाया कि बेचारा लड़का एकदम पागल हो उठा। और आख़िरकार पेचोरिन ने सारी बात साफ़-साफ़ उसके सामने रख दी? अज़मत, यह तो मैं देख रहा हूँ कि तुम उस घोड़े के पीछे पागल हो। लेकिन तुम्हारे लिए उस घोड़े को प्राप्त करना उतना ही असम्भव है, जितना ख़ुद अपने सिर के पीछे देख पाना। अब मुझे यह बताओ, अगर कोई आदमी वह घोड़ा तुम्हें ला दे, तो बदले में उसे तुम क्या दोगे?'

"जो भी वह माँगे।' अज़मत ने जवाब दिया।

"अगर ऐसी बात है तो लो, घोड़ा तुम्हें मैं ला दूँगा, लेकिन एक शर्त पर... कसम खाओ, तुम उसे पूरा करोगे।'

"मैं कसम खाता हूँ... लेकिन तुम भी तो कसम खाओ।'

"ठीक! मैं कसम खाता हूँ कि तुम्हें घोड़ा मिल जायेगा, लेकिन शर्त यह है कि बदले में तुम्हें अपनी बहन बेला मुझे देनी होगी। कराग्योज़ बेला का कलीम होगा। मेरा ख़याल है, यह सौदा तुम्हें मंजूर होगा।'

"अज़मत ख़ामोश रहा।

"तो तुम राज़ी नहीं हो?... जैसी तुम्हारी इच्छा। मेरा तो ख़याल था कि तुम मर्द हो; लेकिन देखता हूँ कि तुम अभी निरे बच्चे ही हो। घुड़सवारी करने लायक उम्र तुम्हारी

अभी है नहीं।"

अज़मत ग़ुस्से से तिलमिला उठा।

"लेकिन मेरे अब्बा भी तो हैं न?" उसने कहा।

"वे क्या कभी कहीं जाते नहीं?"

"हाँ, यह बात तो सही है। जाते तो हैं....'

"तो मंजूर है तुम्हें?"

"मंजूर है," अज़मत ने होंठों-ही-होंठों में कहा; वह मौत-सा पीला पड़ गया था। फिर उसने पूछा, 'कब?'

"जब काज़बिच अगली बार यहाँ आयेगा, तब। उसने एक दर्जन भेड़ें लाने का वादा किया हुआ है। बाकी सब मेरा काम है। और सुनो अज़मत, तुम्हें बस इस सौदे के अपने हिस्से का ध्यान रखना है?"

"इस तरह उन्होंने पूरा मामला तय कर लिया और आज मैं यह कहता हूँ कि वह सचमुच ख़ासा घटिया सौदा था। बाद में मैंने पेचोरिन से भी यही कहा, लेकिन उसने मुझे यह जवाब दिया कि उस असभ्य चेरकस लड़की को उस जैसा बढ़िया पति पाने पर ख़ुश होना चाहिए, क्योंकि आख़िरकार वहाँ के रिवाज के मुताबिक तो वह उसका पति ही माना जायेगा और यह कि काज़बिच महज़ एक लुटेरा था, जिसे किसी भी हालत में सजा मिलनी ही चाहिए। अब आप ही बताइए, मैं इसके ख़िलाफ़ कह भी क्या सकता था? लेकिन उस समय तक मुझे उनकी भीतरी साज़िश का कुछ पता नहीं था।

"आख़िर एक दिन काज़बिच यह पूछने आया कि हमें भेड़ें और शहद तो नहीं चाहिए; और मैंने उसे तीसरे दिन कुछ सामान ले आने के लिए कह दिया।"

"अज़मत," पेचोरिन ने अगले दिन उस लड़के से कहा, "कराग्योज़ कल मेरे कब्ज़े में होगा। अगर आज रात तक बेला यहाँ नहीं पहुँची तो वह घोड़ा तुम्हें देखने को नहीं मिलेगा।"

"ठीक है!' अज़मत ने कहा और घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ, वापस अपने गाँव चला गया। साँझ होते ही पेचोरिन ने हथियार बाँधे और घोड़े पर सवार हो कर किले के बाहर निकल गया। पता नहीं उन्होंने कैसे क्या बन्दोबस्त किया, पर रात को जब वे दोनों लौटे तो सन्तरी ने देखा कि अज़मत के घोड़े की ज़ीन पर एक औरत लदी थी, उसके हाथ-पाँव बँधे थे और सिर नकाब में लिपटा हुआ था।"

"और घोड़े का क्या हुआ?" मैंने कप्तान से पूछा।

"एक मिनट, बस एक मिनट, ज़रा सब्र कीजिए, सब बताता हूँ। हाँ, तो दूसरे दिन सुबह-सबेरे ही काज़बिच आ पहुँचा। अपने साथ ही वह उन एक दर्जन भेड़ों को हाँकता लाया था, जिन्हें वह बेचना चाहता था। घोड़े को अहाते की बाड़ से बाँध कर वह मुझसे मिलने भीतर आया और मैंने चाय से उसका स्वागत किया, क्योंकि लाख बदमाश रहा हो, आख़िर तो वह मेरा कुनाक था।

"हम लोग यों ही इधर-उधर की बातें करने लगे। सहसा मैंने काज़बिच को चौंक कर उठते देखा; उसका चेहरा ऐंठ गया और वह खिड़की की ओर तेज़ी से झपटा, लेकिन दुर्भाग्य से वह खिड़की पिछवाड़े की तरफ़ खुलती थी।

"'क्या हुआ?' मैंने पूछा।

"'मेरा घोड़ा... घोड़ा!' उसके मुँह से निकला। उसका सारा शरीर थरथर काँप रहा था।

"और सच ही, दूसरे क्षण मैंने घोड़े के टापों की आवाज़ सुनी।

"'ज़रूर कोई कज़ाक आया होगा,' मैं बोला।

"'नहीं! युरूस यमन, यमन,' वह चीख़ा और जंगली तेंदुए की तरह बाहर को लपका। दो कदमों ही में वह आँगन में था। फाटक पर एक सन्तरी ने बन्दूक से उसका रास्ता रोकना चाहा, लेकिन वह छलाँग लगा कर उसके ऊपर से कूदता हुआ सड़क पर जा पहुँचा और बेतहाशा दौड़ने लगा। दूर, गर्द का एक ग़ुबार उड़ता दिखायी दे रहा था यह अज़मत था, जो उस जोशीले कराग्योज़ को एड़ लगाता, उड़ाये लिये जा रहा था। काज़बिच ने खोल से तमंचा निकाला और दौड़ते-दौड़ते ही गोली दाग़ दी। फिर मिनट भर वह निश्चल खड़ा रहा; जब तक कि उसे यह विश्वास न हो गया कि उसका निशाना चूक गया है। फिर वह ज़ोर से चीख़ा; तमंचे को उसने यों बेदर्दी से एक पत्थर पर दे मारा कि वह टुकड़े-टुकड़े हो गया और उसके कल-पुर्जे बिखर गये। इसके बाद वह ज़मीन पर लोट कर बच्चों की तरह बिलखने लगा... किले से निकल कर लोग उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गये, पर उसने किसी की तरफ़ नज़र नहीं उठायी और कुछ देर खड़े रह कर वे फिर वापस चले गये। मैंने भेड़ों के पैसे उसके पास रखवा दिये, पर उसने उन्हें छुआ तक नहीं। वह उसी तरह मुँह नीचे गड़ाये, मुर्दे की तरह पड़ा रहा। क्या आप विश्वास करेंगे कि वह रात भर इसी तरह वहीं पड़ा रहा? दूसरे दिन सुबह वह किले में सिर्फ़ यह पूछने के लिए आया कि उसे कोई चोर का नाम बता सकता है। एक सन्तरी, जिसने

अज़मत को घोड़ा खोलते और सरपट दौड़ाते देखा था, यह बात छिपाने की ज़रूरत नहीं समझी और काज़बिच को बता दिया। जब काज़बिच ने अज़मत का नाम सुना तो ग़ुस्से से उसकी आँखें जल उठीं और वह फ़ौरन उस गाँव की ओर चल दिया, जहाँ अज़मत ने अब्बा सरदार साहब रहते थे।"

"फिर अज़मत के बाप ने क्या किया?" मैंने पूछा।

"सारी आफ़त तो यही थी कि उनसे काज़बिच की मुलाकात ही नहीं हुई। वे छह-सात दिनों के लिए कहीं बाहर गये हुए थे। अगर ऐसी बात न होती तो क्या अज़मत अपनी बहन को वहाँ से उड़ा लाता?"

"जब सरदार लौटे तो उन्होंने अपनी लड़की और लड़के, दोनों ही को ग़ायब पाया। उनका लड़का भी था एक ही जिद्दी और धूर्त्त। वह ख़ूब अच्छी तरह जानता था कि अगर वह पकड़ा गया तो उसके सिर की ख़ैर नहीं; सो, तब से ले कर आज तक उसका कोई पता नहीं चला। बहुत सम्भव है, वह किसी अब्रेक दल में जा शामिल हुआ हो और तेरेक या कुबान नदियों के पार ही कहीं उसने अपनी बदहवास ज़िन्दगी ठिकाने लगा डाली हो; इसके सिवा और वह था भी किस लायक!

"आप से सच कहूँ, मुझे यह सब देख कर अच्छा नहीं लगा। इसे बरदाश्त करना मेरे लिए आसान नहीं था। जैसे ही मुझे पता लगा कि वह चेरकस लड़की पेचोरिन के यहाँ है, मैंने अपनी झब्बों वाली वर्दी पहनी, तलवार का पट्टा कसा और उससे मिलने चल पड़ा।

"वह सामने वाले कमरे में पलँग पर, एक हाथ सिर के नीचे रखे और दूसरे में एक बुझा हुआ पाइप पकड़े, लेटा हुआ था। दूसरे कमरे में खुलने वाले दरवाज़े का ताला बन्द था, लेकिन ताले से चाभी नदारद थी। यह सब मैंने पहली ही नज़र में देख लिया। मैं खँखारा और दहलीज़ पर बूटों की एड़ियाँ ज़ोर से पटक कर मैंने अपने आने की सूचना दी; लेकिन वह इस तरह लेटा रहा, जैसे उसने कुछ सुना ही न हो।

'एन्साइन महोदय,' मैंने यथासम्भव सख़्ती से कहा, 'क्या आपकी समझ में यह नहीं आ रहा कि मैं आपसे ही मिलने आया हूँ?'

"अरे, मैक्सिम मैक्सिमिच! सुनाओ, क्या हाल-चाल हैं? आओ बैठो! पाइप पियोगे?' उसने लेटे-लेटे ही जवाब दिया।

"माफ़ कीजिए, मैं मैक्सिम मैक्सिमिच नहीं, आपका कप्तान हूँ!'

"उँह, एक ही बात है। थोड़ी चाय पीना पसन्द करोगे? काश, तुम्हें यह पता होता

कि मेरे दिमाग़ पर इस समय कितना बोझ है!'

"मुझे सब कुछ पता है,' मैंने उसके पलँग की ओर बढ़ते हुए जवाब दिया।

"चलो, तब तो और भी अच्छा है। मैं ख़ुद उस सबको दुहराने के मूड में नहीं हूँ।"

"एनसाइन पेचोरिन, तुमने ऐसा अपराध किया है, जिसके लिए ख़ुद मेरी भी जवाबदेही हो सकती है..."

"ठीक है, इसमें हर्ज ही क्या है? क्या हमेशा हर काम में हम दोनों का बराबर-बराबर का हिस्सा नहीं रहा?"

"यह मज़ाक का वक्त नहीं है! क्या तुम अपनी तलवार मेरे हवाले करोगे?"

"मित्का तलवार लाना।" उसने नौकर को आवाज़ दी।

"मित्का ने उसकी तलवार ला कर मुझे सौंप दी।" इस तरह अपना फ़र्ज पूरा कर चुकने के बाद मैं पलँग पर बैठ गया और बोला, 'पेचोरिन, यह मान लेना तुम्हारे हक में अच्छा होगा कि यह सब बहुत ग़लत है।'

"क्या ग़लत है?"

"यही, बेला को भगा लाना। वह अज़मत भी कैसा लुच्चा और बदमाश है! चलो, अब मान भी लो," मैंने उससे कहा।

"क्यों मान लूँ? इत्तिफ़ाक से वह मुझे पसन्द है।"

"अब आप ही बताइए, मैं इसका क्या जवाब देता? मुझे कुछ सूझ ही नहीं रहा था कि इस मामले में क्या करूँ?" ख़ैर, पल भर चुप रहने के बाद मैंने उससे कहा कि अगर लड़की से बाप ने आग्रह किया तो लड़की उसे लौटा देनी पड़ेगी।

"मैं नहीं समझता, क्यों लौटानी पड़ेगी?"

"मान लो अगर उसे पता चल गया कि वह यहाँ है, तो?"

"पता चलेगा कैसे?"

"एक बार फिर मैं अन्धी गली में जा पड़ा।

"देखो, मैक्सिम मैक्सिमिच," पेचोरिन ने उठते हुए कहा, तुम एक शरीफ़ और भले आदमी हो... अगर हम यह लड़की उस जंगली को लौटा देंगे तो या तो वह इसे मार डालेगा या बेच देगा। जो हो चुका है, उसे पलटा नहीं जा सकता, और अब अतिरिक्त उत्साह दिखा कर बने-बनाये मामले को ख़राब करने में कोई लाभ नहीं। भले ही तुम मेरी

तलवार रख लो, लेकिन बेला को मेरे पास छोड़ दो...'

"'यह तय करके कि तुम मुझे उससे मिलने दोगे,' मैंने कहा।

"'वह उस दरवाज़े के पीछे है; मैं ख़ुद उससे मिलने की असफल कोशिशें करता रहा हूँ। अपनी शाल में लिपटी-लिपटायी, वह एक कोने में सिमटी बैठी रहती है; न कुछ बोलती है, न आँखें उठाती है; बिलकुल किसी हिरन की तरह सहमी-सहमी। मैंने दुख़ारदार की बीवी को, जो तातारी भाषा बोलती है, नौकर रख लिया है ताकि वह उसकी देखभाल कर सके और उसके दिमाग़ में यह ख़याल बैठा सके कि वह सिर्फ़ मेरी है क्योंकि मेरे सिवाय वह कभी किसी और की नहीं हो सकेगी,' मेज़ पर मुक्का मारते हुए पेचोरिन ने कहा।

"मैंने इसके लिए भी ख़ुद को राजी कर लिया.. आप ही बताइए, इसके सिवा और चारा भी क्या था? कुछ आदमी ऐसे होते ही हैं, जो हमेशा अपने मन की करवा लेते हैं।"

"अन्त में हुआ क्या?" मैंने मैक्सिम मैक्सिमिच से पूछा, "पेचोरिन ने सचमुच उसका मन जीत लिया, या वह उसी कैद में अपने घर-गाँव की याद में घुल-घुल कर मर गयी?"

"वह अपने घर की याद में क्यों घुलती रहती भला? जिन पहाड़ों को वह अपने गाँव से देखा करती थी, ठीक उन्हीं पहाड़ों को वह किले से भी देख सकती थी, और इससे अधिक ये जंगली चाहते ही क्या हैं? इसके अलावा पेचोरिन उसे रोज़ ही कुछ न कुछ भेंट-उपहार देता रहता था। शुरू-शुरू में तो वह बिना कुछ बोले, गर्व-भरे मान से उन तोहफ़ों को एक ओर फेंक देती, और वे दुक़ानदार की बीवी के हो जाते और उसके बतरस तथा बातूनीपन को और प्रोत्साहित करते। उफ़, ये उपहार! एक ज़रा-से रंगीन चिथड़े के लिए औरत क्या नहीं कर डालेगी! लेकिन मैं विषय से बहक रहा हूँ... उसका दिल जीतने के लिए पेचोरिन काफ़ी दिनों तक मेहनत और लगन से कोशिशें करता रहा। इसी बीच उसने तातारी बोलना सीख लिया और बेला भी हमारी भाषा समझने लगी। धीरे-धीरे वह पेचोरिन की ओर देखने भी लगी, हालाँकि शुरू में वह उसकी ओर कनखियों से और सन्देह-भरी निगाहों से ताकती; मगर वह हमेशा उदास और चिन्ता में डूबी रहती थी और जब मैं बगल के कमरे से उसे अपने लोक-गीतों को धीमे स्वर में गाते सुनता तो मैं भी उदास हुए बिना न रह पाता। एक बार जो दृश्य मैंने खिड़की के पास से गुज़रते हुए देखा, उसे शायद मैं कभी नहीं भूल सकूँगा : बेला एक बेंच पर बैठी थी,

उसका सिर झुका हुआ था और पेचोरिन उसके सामने खड़ा था।

"'सुनो मेरी परी,' वह कह रहा था, 'क्या तुम यह नहीं समझतीं कि देर-सबेर तुम्हें मेरी होना ही है? तब क्यों मुझे इतना सताती हो? या शायद तुम किसी चेचेन युवक को प्यार करती हो? अगर ऐसी बात है, तो मैं तुम्हें फ़ौरन घर चला जाने दूँगा।' बड़े ही नामालूम ढंग से वह सिहर उठी और उसने अपना सिर हिला दिया।

"'या यह भी हो सकता है,' उसने आगे जोड़ा, कि मैं तुम्हें कुल-मिला कर नफ़रत के काबिल लगता हूँ?' बेला ने एक गहरी साँस ली।

"शायद तुम्हारा धर्म मुझसे प्रेम करने की इजाज़त नहीं देता?"

वह पीली पड़ गयी, पर एक शब्द नहीं बोली।

"विश्वास करो, सभी लोगों के लिए एक ही अल्लाह है, और अगर वह मुझे तुमसे मुहब्बत करने की इजाज़त देता है तो फिर तुम्हें मेरा प्यार लौटाने से मना क्यों करने लगा?" जैसे इस विचार से प्रभावित हो कर बेला ने सीधे उसके चेहरे पर आँखें टिका दीं। उसकी आँखों में सन्देह की झलक के साथ-साथ आश्वासन की तलाश भी थी। और क्या आँखें थीं वे! जैसे दो अंगारे जल रहे हों!

"'बेला, मेरी प्यारी बेला! सुनो,' पेचोरिन ने कहना ज़ारी रखा, तुम देख ही रही हो, मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ। तुम्हारी ख़ुशी के लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ। मैं तुम्हें सुखी देखना चाहता हूँ, और अगर तुम इसी तरह दुख मनाती रहीं, तो मैं अपनी जान दे दूँगा। मुझसे वादा करो कि तुम अब ख़ुश रहोगी, रहोगी न?' बेला क्षण भर कुछ सोचती रही, उसकी काली-काली आँखें कुछ खोजती-सी पेचोरिन के चेहरे पर जमी रहीं, फिर बड़ी नरमी से मुस्कुरा कर उसने स्वीकृति में सिर हिला दिया। पेचोरिन ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और आग्रह करने लगा कि वह उसका चुम्बन ले। लेकिन वह मन्द-मन्द विरोध करती हुई बार-बार बस यही शब्द दुहराती रही, 'नहीं, ख़ुदा के लिए, नहीं।' पेचोरिन ज़िद करने लगा; वह काँप उठी और सुबकने लगी। मैं तुम्हारी कैद में हूँ, तुम्हारी दासी हूँ,' उसने कहा, और निश्चय ही तुम मुझे मजबूर कर सकते हो।' और उसकी आँखों में फिर आँसू छलछला आये।

"पेचोरिन ने अपनी मुट्ठी से माथा ठोंक लिया और दौड़ कर दूसरे कमरे में चला गया। मैं भीतर उसके पास पहुँचा। वह गहरी उदासी में डूबा हुआ, छाती पर बाँहें बाँधे, उद्विग्नता में इधर से उधर टहल रहा था।

"कहो दोस्त, अब क्या इरादा है?' मैंने उससे पूछा।

"वह औरत नहीं, चुड़ैल है,' उसने जवाब दिया, लेकिन मैं भी कसम खाता हूँ कि उसे अपनी बना कर ही छोड़ूँगा।'

"मैंने अविश्वास से सिर हिलाया।

"शर्त बदते हो?' वह बोला, उसे सिर्फ़ एक हफ्ते की मोहलत और दूँगा।'

"शर्त रही।'

"हमने हाथ मिलाया और विदा हुए।

"दूसरे ही दिन उसने एक आदमी को कई तरह की चीज़ें खरीदने के लिए किज़ल्यार भेजा; जब वह लौटा तो एक से एक बढ़िया किस्म के फ़ारसी-कपड़ों का अम्बार उसके साथ था।

"तुम्हारा क्या ख़याल है मैक्सिम मैक्सिमिच?' उन उपहारों को मुझे दिखाते हुए पेचोरिन ने पूछा, 'क्या कोई एशियाई सुन्दरी इस हमले का सामना करने में सफल हो पायेगी?'

"तुम चेरकस औरतों को जानते ही नहीं,' मैंने जवाब दिया, ये कतई ज्यॉर्जियन या काकेशिया-पार की तातारी औरतों जैसी नहीं होतीं बिलकुल नहीं। तुम्हें पता भी है, इनके आचार-विचार के अपने, बिलकुल अलग, नियम होते हैं; इनकी अपनी अलग शिक्षा-दीक्षा है!' पेचोरिन मुस्कराया और सीटी से एक फ़ौजी धुन बजाने लगा।

"आख़िरकार यही नतीजा निकला कि मैं सही था। उपहारों ने सिर्फ़ आधा ही काम साधा। बेला का व्यवहार कुछ अधिक दोस्ताना, विश्वास और अपनत्वभरा ज़रूर हो गया मगर इससे अधिक और कुछ नहीं। लिहाज़ा पेचोरिन ने आख़िरी चाल चलने का फैसला कर लिया। एक दिन सुबह-सवेरे ही उसने घोड़े पर ज़ीन कसने का हुक्म दिया, चेरकसी पोशाक पहनी और हथियारों से लैस हो कर भीतर बेला के पास पहुँचा। बेला, उसने कहा, तुम जानती हो, मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ। मैंने तुम्हें इसी उम्मीद पर भगा लाने का फैसला किया था कि जब तुम मुझे ठीक से जान जाओगी, तब तुम मुझे प्यार भी करने लगोगी। लेकिन मैंने ग़लती की। इसलिए अब विदा; यहाँ जो कुछ मेरा है, मैं तुम्हें उस सबकी मालकिन बनाये जाता हूँ; अगर तुम चाहो तो वापस अपने अब्बा के पास भी जा सकती हो मेरी तरफ़ से तुम पूरी तरह आज़ाद हो। मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है और इसकी सजा मुझे मिलनी ही चाहिए। मुझे विदा

दो, मैं अपने घोड़े पर सवार हो कर चला जाऊँगा कहाँ, यह मैं ख़ुद नहीं जानता। शायद इसमें बहुत समय न लगे कि मैं किसी गोली या तलवार की चोट से कहीं ख़त्म हो जाऊँ; जब ऐसा हो तो मुझे एक बार याद भर कर लेना और अगर हो सके तो मुझे माफ़ करने की कोशिश करना।"

"यह कह कर उसने चेहरा दूसरी ओर घुमा लिया और विदाई के लिए अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया। बेला ने न तो उसका हाथ पकड़ा और न ही कुछ बोली। दरवाज़े की आड़ में खड़े-खड़े मैंने एक दरार से झाँक कर उसे देखा और मुझे उस पर बड़ा तरस आया उसके छोटे-से सुन्दर मुखड़े पर कैसी मुर्दनी, कैसा पीलापन, छा गया था! कोई जवाब न पाकर, पेचोरिन ने दरवाज़े की ओर चन्द कदम बढ़ाये। उसका पूरा शरीर काँप रहा था और यह बता दूँ, मुझे पूरा विश्वास है कि वह उस बात को, जिसकी धमकी उसने दी थी, वाकई कर गुज़रने के काबिल था। ख़ुदा जानता है, वह था भी कुछ इसी किस्म का इन्सान। लेकिन अभी वह दरवाज़े तक ही पहुँच पाया था कि बेला कूद कर उठी और दौड़कर, सिसकती हुई उसके गले में बाँहें डाल, उससे लिपट गयी। विश्वास कीजिए, मैं ख़ुद दरवाज़े के पीछे खड़े-खड़े रो पड़ा... कहने का मतलब... सचमुच तो नहीं रोया, लेकिन... ख़ैर छोड़िए... थी वह सरासर बेवकूफ़ी ही।"

इसके बाद कप्तान चुप हो गया।

"इसके अलावा मैं यह स्वीकार करता हूँ," कुछ देर बाद, अपनी मूँछों को खींचते हुए उसने कहा, "कि मैं उस समय ज़रा खीझ उठा था, क्योंकि मुझे कभी किसी औरत ने इस तरह प्यार नहीं किया था।"

"उनका यह सुख आख़िर कितनी देर कायम रहा?" मैंने पूछा।

"भाई, बेला ने ख़ुद स्वीकार किया कि जिस दिन से उसने पेचोरिन को देखा था, तब से वह अक्सर उसके सपनों में आया करता था और यह भी कि दूसरे किसी आदमी ने कभी उसको इस हद तक प्रभावित नहीं किया था। हाँ, सचमुच वे लोग सुखी थे।"

"उँह, कितना ऊबाऊ है!" अनायास मेरे मुँह से निकल पड़ा। दरअसल, मैं एक दुखद अन्त की आशा लगाये बैठा था और अपनी उम्मीदों को इस तरह अचानक ढहते देख, मुझे धक्का-सा लगा। "अब यह न कहिए कि उसके बाप को एक बार भी यह शक नहीं हुआ कि वह आप लोगों के साथ किले में थी?"

"मेरा ख़याल है, उसे शक ज़रूर था। ख़ैर, जो भी हो, कुछ दिनों के बाद हमने सुना कि बुड्ढा मार डाला गया है। हुआ यों कि..."

मेरी उत्सुकता फिर जाग उठी।

"यह आप को बता दूँ कि काज़बिच के मन में यह ख़याल बैठ गया कि अज़मत ने अपने बाप की रजामन्दी से ही घोड़ा चुराया है; कम-से-कम मैं ऐसा ही सोचता हूँ। इसलिए एक दिन, जब बुड्ढा अपनी बेटी की असफल खोज के बाद वापस आ रहा था, काज़बिच गाँव से क़रीब तीन वर्स्ट की दूरी पर घात लगाये बैठ गया। बुड्ढे सरदार के साथी और अंगरक्षक पीछे छूट गये थे और वह ख़ुद विचारों में डूबा, साँझ के गहराते झुटपुटे में घोड़े पर सवार, धीरे-धीरे सड़क पर चला जा रहा था। तभी अचानक एक झाड़ी के पीछे से काज़बिच बिल्ली की तरह झपटा और उसके पीछे घोड़े पर उछल कर जा चढ़ा; फिर खंजर के एक ही वार से उसका काम-तमाम करके काज़बिच ने उसे घोड़े से नीचे गिरा दिया और घोड़े की लगामें थाम लीं। सरदार के कुछ साथियों ने यह सारा माज़रा एक पहाड़ी से देखा, और हालाँकि उन्होंने पीछा भी किया, लेकिन वे काज़बिच की धूल भी न पा सके।"

"तो इस तरह उसने अपने घोड़े के नुकसान को पूरा कर लिया और साथ-ही-साथ अपना बदला भी चुका दिया," मैंने अपने साथी से उसकी राय जानने की नीयत से कहा।

"हाँ, उन लोगों की नज़र में तो उसने बिलकुल ठीक ही किया," कप्तान बोला।

इस आदमी में रूसियों की उस ख़ूबी को देख कर मैं प्रभावित हुए बिना रह न सका, जिससे काम ले कर वे बड़ी कुशलता से उन लोगों के रीति-रिवाजों से सामंजस्य स्थापित कर लेते हैं, जिनके बीच वे उस समय रह रहे हैं। मैं नहीं जानता, यह मानसिक विशेषता गुण है या अवगुण; फिर भी इससे एक अद्‌भुत लचीलेपन और गम्भीर व्यावहारिक ज्ञान का पता तो चलता ही है, जिसके चलते जहाँ वे महसूस करते हैं कि बुराई अनिवार्य है या उसे उखाड़ फेंकना असम्भव वहाँ वे बुराई को माफ़ कर देते हैं और उसे तरह दे जाते हैं।

इस बीच हमने अपनी-अपनी चाय ख़त्म कर ली थी। बाहर घोड़े काफ़ी देर पहले ही गाड़ी में जोते जा चुके थे और अब बर्फ़ में खड़े-खड़े ठिठुर रहे थे। पश्चिमी आकाश में पीला पड़ता चाँद उन काले-काले बादलों की ओट में छिपने ही वाला था, जो दूर

के पर्वत-शिखरों से इस तरह जुड़े हुए लहरा रहे थे, जैसे किसी फटे पर्दे के जीर्ण-शीर्ण टुकड़े हों। हम बाहर खुले में निकल आये। मेरे साथी की भविष्यवाणी के विपरीत, मौसम साफ़ हो चुका था और एक शान्त सुहानी सुबह की आशा दिला रहा था। पूर्वी क्षितिज की पीली सुनहरी आभा जैसे-जैसे गहरे बैंगनी आकाश पर फैलती चली गयी निर्मल और कुँआरी बर्फ़ की चादर के ढँके ऊँचे पर्वतों की ढलानों पर धीरे-धीरे अपना आलोक बिख़ैरती हुई तो सुदूर नभ में अनोखे, अजीब रूपों में एक-दूसरे से गुँथी सितारों की मालाएँ एक के बाद एक करके तिरोधान होने लगीं। दा़यीं और बायीं ओर, मुँह-बाये अँधेरे रहस्य-खड्ड थे और कोहरा, जैसे दिन के आगमन से आशंकित हो कर साँप की तरह ऐंठता और बल खाता हुआ, खड़े कगारों के शिग़ाफ़ों और दरारों के बीच से सरकता हुआ उन गहरों में रेंग रहा था।

धरती और आकाश में एक ऐसी गहगी शान्ति छायी हुई थी, जैसी सुबह की प्रार्थना के समय मनुष्यों के हृदय में रहती है। सिर्फ़ जब-तब पुरवैया के सर्द झोंके आ कर घोड़ों के धूसर झबरे अयालों को उड़ा कर बिखरा देते। गुड-गोरा के शिखर की ओर चढ़ने वाली टेढ़ी-मेढ़ी, बल-खाती सड़क पर गाड़ियों को मुश्किल से खींचते अपने दुबले-पतले, मरियल-से पाँच घोड़ों के साथ हम लोग निकल पड़े। हम गाड़ियों के पीछे-पीछे चल रहे थे। जब घोड़े गाड़ियों को आगे खींचने से जवाब दे देते, तो हम पीछे से पहियों के नीचे पत्थर लगाते जाते।

लगता था, जैसे सड़क सीधे स्वर्ग ही ले जायेगी, क्योंकि ऊपर की ओर जहाँ तक दृष्टि जाती, वह ऊँची और ऊँची ही उठती चली गयी थी और अन्त में उस बादल में जा कर खो गयी थी, जो पिछले दिन से ही शिकार की प्रतीक्षा करते किसी गिद्ध की तरह पहाड़ के शिखर पर बड़े धैर्य से जमा हुआ था। पैरों के नीचे बर्फ़ चरमरा रही थी; हवा इतनी पतली हो चली थी कि साँस लेने में तकलीफ़ होती थी; मुझे लगातार अपना खून दिमाग़ की ओर दौड़ता महसूस हो रहा था; फिर भी उल्लास का एक एहसास मेरी रग-रग में बह रहा था और जाने क्यों सारी दुनिया से इतनी ऊँचाई पर होने का यह एहसास बड़ा भला लग रहा था। मानता हूँ, यह भावना बचकानी थी, लेकिन साथ ही यह भी सच है कि ज्यों-ज्यों हम समाज के बँधे-बँधाये नियम-कायदों से दूर बह जाते हैं और प्रकृति के निकट चले जाते हैं, तो हम चाहे-अनचाहे ही फिर से बच्चे बन जाते हैं। दुनिया में रह कर जो कुछ हमने समेटा या अर्जित किया होता है, उसे तज कर आत्मा फिर वैसी बन जाती है, जैसी वह पहले कभी रही होगी और जैसी कि वह निश्चय ही बाद में फिर हो जायेगी। जिसे भी मेरी तरह सूने, वीरान पहाड़ों पर उनके विलक्षण आकारों से अपनी आँखों को तृप्त करते हुए, घाटियों

और दर्रों की प्राणदायी हवा में चाव से खुल कर साँस भरते हुए घूमने-फिरने का मौक़ा मिला है, सिर्फ़ वही इन जादू-भरे दृश्यों को चित्रित करने, इनमें रंग भरने, इनका वर्णन करने, इन्हें ज्यों-का-त्यों उतार देने की मेरी दुर्निवार उत्कण्ठा को समझ सकता है।

आख़िरकार हम लोग गुड-गोरा के शिखर पर पहुँच गये और चारों तरफ़ का नज़ारा लेने के लिए कुछ देर रुके : पहाड़ की चोटी पर सलेटी रंग का एक बादल टिका हुआ था और उसकी ठण्डी-ठण्डी साँसों में आसन्न बर्फ़ीले तूफ़ान के ख़तरे की धमकी छिपी हुई थी; लेकिन पूरब का आसमान इतना साफ़ और सुनहला था कि हम यानी कप्तान और मैं तत्काल उस ख़तरे को भूल गये। हाँ, कप्तान भी, क्योंकि सरल हृदय वाले सीधे-सादे लोग प्रकृति की सुन्दरता, ऐश्वर्य और वैभव को हम, आनन्द-विह्वल क़िस्से सुनाने या लिखने वालों की अपेक्षा सौ गुनी ज़्यादा तीव्रता से महसूस करते हैं।

"आप तो बेशक इन शानदार दृश्यों के आदी होंगे?" मैंने उससे पूछा।

"हाँ, साहब, आदी तो हम गोलियों की सनसनाहट के भी हो जाते हैं; मेरा मतलब है, अनचाहे ही जो हमारी धड़कन बुरी तरह तेज़ हो जाती है, उसे छिपाने के आदी।"

"इसके विपरीत मुझे तो यह बताया गया है कि कुछ पुराने, अनुभवी सिपाहियों के लिए वह सनसनाहट मधुर संगीत की तरह होती है।"

"हाँ, आप चाहें तो उसे मधुर भी कह सकते हैं, लेकिन सिर्फ़ इसीलिए कि वह दिल को ओर तेज़ी से धड़कने के लिए मजबूर कर देती है। देखिए..." पूर्व की ओर इशारा करते हुए उसने कहा, "कैसा दिव्य प्रदेश है।"

सचमुच यह एक-से-एक ख़ूबसूरत नज़ारों की ऐसी विराट चित्रावली थी, जिसे मैं फिर कभी देख सकूँगा, इसकी मुझे उम्मीद नहीं। हमारे ठीक नीचे कोइशॉर घाटी फैली थी, जिसके एक सिरे से दूसरे सिरे तक, अराग्वा और एक दूसरी नदी अपने-अपने मार्गों पर चाँदी के दो चमकते धागों की तरह बहती चली जा रही थीं। सुबह के सूरज की ऊष्मा-भरी किरणों से आस-पास के कोनों-अँतरों में पनाह खोजता नीला-नीला कुहरा घाटी पर रेंग रहा था। दायीं और बायीं ओर, एक-दूसरे से ऊँचाई में होड़ लेतीं, एक-दूसरे को काटतीं, आड़ी-तिरछी पर्वत-मालाओं की चोटियाँ, बर्फ़ और झाड़ियों से ढँकी, दूर-दूर तक फैलती चली गयी थीं। जहाँ तक नज़र जाती थी, सिर्फ़

पहाड़ी-ही-पहाड़ी दिखते थे, लेकिन कोई दो शिखर एक-से नहीं थे और यह सारी बर्फ़ कुछ ऐसी शोख़, ख़ुशनुमा, चटकीली और प्रफुल्ल गुलाबी दमक से लहक उठी थी कि आदमी हमेशा-हमेशा के लिए वहाँ रहने को ख़ुशी से तैयार हो जाता। हालाँकि सूरज एक गहरे नीले पर्वत के पीछे से जिसे सिर्फ़ तेज़ अनुभवी आँखें ही तूफ़ानी बादल से अलग करके पहचान सकती थीं महज़ झलक मार रहा था, लेकिन उसके ऊपर एक चमकदार सुर्ख़ पट्टी फैलती चली गयी थी, जिसकी ओर मेरे साथी ने अब मेरा ध्यान खींचा।

"मैंने आपसे कहा था न," एक एकदम बोल उठा, "आगे ख़राब मौसम आने वाला है। हमें जल्दी-जल्दी चलना होगा, नहीं तो क्रेस्तोवाया पहाड़ पर ही वह हमें घेर लेगा। हे-ए-य, ज़रा फुर्ती करो भाई!" उसने कोचवानों से चिल्ला कर कहा।

ब्रेक के लिए पहियों के बीच से ज़ंजीरें डाल दी गयीं, ताकि वे नियन्त्रण से बाहर न जा पाए। घोड़ों की लगामें पकड़ कर उन्हें आगे बढ़ाते हुए हम लोगों ने नीचे उतरना शुरू किया। हमारे दायीं ओर एक खड़ा कगार था और बायीं ओर एक इतना गहरा खड्ड कि नीचे तलहटी में बसा हुआ ओसेतियन गाँव महज़ अबाबील के घोंसले-सा लगता था। मैं इस ख़याल-भर से काँप उठा कि साल में लगभग बारह बार अँधेरी रातों में अपनी उछलती-कूदती, हिचकोले खाती गाड़ी से बिना उतरे ही कोई हरकारा इस पतली तंग सड़क से हो कर गुज़रता होगा, जो इतनी सँकरी थी कि उस पर दो गाड़ियाँ साथ-साथ नहीं चल सकती थीं। हमारे कोचवानों में से एक यारोस्लाव्ल का रूसी किसान था और दूसरा एक ओसेतियन। ओसेतियन कोचवान ने सही समय पर घोड़ों के पहले जोड़े को फ़ौरन गाड़ी से अलग करने और यथासम्भव सारी सावधानी बरतने के बाद आगे वाले घोड़े की लगाम पकड़ ली और आगे-आगे चलने लगा। लेकिन हमारे बेफ़िक्र रूसी कोचवान के कोच-बक्स से उतरने तक का कष्ट नहीं किया। जब मैंने ध्यान दिलाया कि उसे, कम-से-कम मेरे बक्स ही की सही, कुछ तो चिन्ता करनी चाहिए, क्योंकि अगर वह गिर गया तो खड्ड में उतर कर उसे खोजते-फिरने की मेरी कतई इच्छा नहीं थी, तो उसने जवाब दिया, "आप फ़िक्र न करें, साहब। भगवान की मदद से हम भी उतनी ही कुशलपूर्वक वहाँ तक सही-सलामत पहुँच जायेंगे। कोई पहली बार तो हम लोग यह सफ़र कर नहीं रहे।"

और उसका कहना सही था; सम्भावना तो सचमुच ऐसी ही थी कि हम सही-सलामत और सुरक्षित न पहुँच पाते, लेकिन शुक्र है कि पहुँच गये। और अगर सभी लोग इस पर ज़रा गहराई से विचार करें, तो वे सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुँच जायेंगे

कि ज़िन्दगी वाकई ऐसी चीज़ नहीं, जिसके लिए इतनी अधिक चिन्ता की जाय...

शायद आप बेला की कहानी को अन्त तक सुनना चाहते हैं। लेकिन अव्वल तो मैं उपन्यास नहीं, सिर्फ़ यात्रा-संस्मरण लिख रहा हूँ, मैं कप्तान को उस समय से पहले अपनी कहानी फिर शुरू करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता, जबकि वाकई उसने टूटा हुआ तार फिर से थाम न लिया; सो आपको प्रतीक्षा करनी ही होगी, या, अगर आपकी ऐसी ही इच्छा हो तो, कुछ पृष्ठ छोड़ने पड़ेंगे; हालाँकि मैं आपको ऐसा करने की सलाह नहीं दूँगा, क्योंकि क्रेस्तोवाया पर्वत (या 'ला मों साँ क्रिस्तोफ़ी' जैसा कि विद्वान श्री गाम्बा ने उसका नाम रखा है) को पार करने का वर्णन आपकी दिलचस्पी के काबिल है।

और इस तरह हमलोग गुड-गोरा पर्वत से चेर्तोवा-दोलीना की घाटी में उतर आये। यह नाम आपके लिए बड़ा रोमाँटिक-सा है। शायद आपकी आँखों के सामने दुर्गम चट्टानी पहाड़ियों के बीच उस 'प्रेतराज' की खोह की कल्पना खिंच उठी होगी। लेकिन अगर सचमुच आप ऐसी ही कल्पना कर रहे हैं तो आप ग़लतफ़हमी के शिकार हैं। चेर्तोवा-दोलीना नाम की उत्पत्ति 'चेर्ता' शब्द से हुई है, 'चोर्त' से नहीं, क्योंकि पहले कभी इसी जगह से हो कर ज्यॉर्जिया की सीमा-रेखा गुज़रती थी।

सारी घाटी बर्फ़ के अम्बार से दब-सी गयी थी, जो लगातार ऊपर से खिसक कर यहाँ ढेर होती रहती थी और यह दृश्य सारातोव, ताम्बोव और हमारे वतन के दूसरे ऐसे स्थानों से काफ़ी मिलता-जुलता था, जो हमारे दिल के इतना क़रीब हैं।

"वह रहा क्रेस्तोवाया।" जैसे ही हम चेर्तोवा-दोलीना घाटी में उतरे, कप्तान ने बर्फ़ का कफ़न ओढ़े एक पहाड़ की ओर इशारा करके कहा।

पहाड़ की चोटी पर पत्थर के एक सलीब की काली रूप-रेखा दिखायी दे रही थी, जिसके पास से होती हुई, मुश्किल से नज़र आने वाली एक धुँधली-सी सड़क चली गयी थी, जिसे तभी इस्तेमाल किया जाता था, जब पहाड़ के किनारे-किनारे जाने वाली सड़क बर्फ़ से बन्द हो जाती थी। हमारे कोचवानों ने बताया कि अभी ऊपर से बर्फ़ फिसलनी शुरू नहीं हुई, इसलिए घोड़ों की तकलीफ़ का ख़याल करके वे हमें घुमावदार रास्ते से ही ले चले। रास्ते में एक मोड़ पर हमें पाँच ओसेतियन मिले, जिन्होंने फ़ौरन हमारी ख़िदमत में अपनी सेवाएँ पेश कर दीं; और इससे पहले कि हम जवाब दे पाते, उन्होंने गाड़ियों के चक्के थाम लिये और हो-हल्ला मचाते

हुए, हमारी गाड़ियों को ऊपर खींचने में मदद करने लगे।

रास्ता सचमुच बहुत ख़तरनाक था। हमारे दायीं और ऊपर बर्फ़ के बड़े-बड़े ढेर जैसे अधर में लटके थे, ऐसा लगता था कि हवा के पहले झोंके से भहरा कर नीचे खड्ड में जा गिरेंगे। उस सँकरी तंग सड़क के कुछ हिस्से बर्फ़ से ढँके थे, जो कहीं-कहीं पैरों के नीचे धसक जाती थी; कहीं-कहीं यह बर्फ़ सूरज की किरणों और रात के पाले की वजह से ठोस बर्फ़ीली सतह में बदल गयी थी, और इस कारण हम बड़ी मुश्किल से आगे बढ़ पा रहे थे। घोड़ों के खुर बर्फ़ पर बार-बार फिसल जाते। हमारे बायीं ओर एक गहरी दरार मुँह-बायी हुए थी, जिसके तल में चट्टानों को चीरती हुई एक नदी शोर मचाती बह रही थी कभी बर्फ़ की पतली परतों के नीचे छिप कर आँखों से ओझल होती हुई और कभी गोल-गोल, चिकनी काली चट्टानों के बीच, ग़ुस्से से बिफर कर झाग उड़ाती और टक्करें मारती नज़र आती हुई।

क्रेस्तोवाया पर्वत के किनारे-किनारे चलते हुए उसे पार करने में हमें पूरे दो घण्टे लग गये सिर्फ़ दो वर्स्ट की दूरी तय करने में दो घण्टे! इसी बीच बादल नीचे घिर आये; बर्फ़ और ओले पड़ने शुरू हो गये। खाइयों-खड्डों में ज़ोरों से दाख़िल होती हवा, डाकू-सम्राट सोलोवे की तरह सीटियाँ मार रही थी, चीख़ रही थी और देखते-ही-देखते शिखर पर बना पत्थर का वह सलीब उस घने कुहरे में गुम हो गया, जो पूरब से लहरों की तरह घुमड़ता चला आ रहा था, और जिसकी हर लहर पहले वाली से ज़्यादा घनी थी। यहाँ प्रसंगवश यह बता दूँ कि इस सलीब के बारे में एक अजीब, लेकिन आम तौर पर मानी जाने वाली, किंवदन्ती चली आ रही है कि इसे सम्राट पीटर प्रथम ने लगवाया था, जब वह कॉकेशिया की यात्रा करता हुआ, इधर से गुज़रा था। लेकिन पहली बात तो यह कि पीटर दाग़िस्तान तक ही आया था और दूसरी यह कि सलीब पर बड़े-बड़े अक्षरों में अंकित शिलालेख यह घोषित करता है कि यह सलीब जनरल येरमोलोव के आदेश से यदि बिलकुल सही-सही कहना हो तो १८२४ में वहाँ खड़ा किया गया था। शिलालेख के बावजूद उस किंवदन्ती ने इतनी गहरी जड़ें जमा ली थीं कि दोनों बातों में से किसे माना जाय, यह तय कर पाना कठिन था ख़ास कर इसलिए कि हम आम तौर पर शिला-लेखों का विश्वास करने के आदी नहीं हैं।

कोबी के अड्डे तक पहुँचने के लिए हमें बर्फ़ से ढँके हुए चट्टानी कगारों के सहारे-सहारे और कच्ची बर्फ़ से हो कर अभी पाँच वर्स्ट की उतराई और पार करनी थी। घोड़े थक कर चूर-चूर हो चुके थे और हम बेतरह सुन्न, जबकि उधर बर्फ़ीला तूफ़ान, बहुत कुछ हमारे वतन की उत्तरी बर्फ़ीली आँधियों की तरह, हर पल और भी

ज़्यादा तेज़ होता जा रहा था। फ़र्क सिर्फ़ इतना था कि इसकी बेकाबू, बनैली लय अधिक उदास और शोक-भरी थी।

'ओ मेरे जलावतन दोस्त,' मैंने मन ही मन तूफ़ान को सम्बोधित करते हुए कहा, 'तुम भी अपने उन विस्तृत सीमाहीन मैदानों की याद में दुख मना रहे हो, जहाँ अपने बर्फ़ीले पंखों को फैलाने के लिए तुम्हें मनचाहा विस्तार मिलता था, जबकि यहाँ तुम उस उकाब की तरह कैद में दब-घुटकर, घिर कर, रह गये हो, जो लोहे के पिंजरे की छड़ों से टकराता हुआ, पंख फड़फड़ा कर रह जाता हो।"

"आसार अच्छे नहीं हैं," कप्तान कह रहा था, "चारों तरफ़ कुहरे और बर्फ़ के सिवा और कुछ नहीं नज़र आता। ज़रा ध्यान से चलिए, वरना हम किसी दरार में ख़ुद को लुढ़कता पायेंगे या किसी कम्बख़्त खड्ड में जा फँसेंगे; और वहाँ नीचे तलहटी में बहती उरः बेदारा नदी में अब तक शायद इतनी बाढ़ आ चुकी होगी कि उसे पार करना असम्भव होगा। यह एशिया है जनाब! यहाँ नदिया भी उतनी ही नाकाबिले-एतबार हैं, जितने यहाँ के लोग।"

आगे बढ़ने से इनकार करते, नाक के फुफकारते, अड़े हुए घोड़ों पर चाबुक बरसाते कोचवान उन्हें लाख कोसते रहे, चीख़ते-चिल्लाते रहे, पर चाबुक़ के उकसावे के बावजूद घोड़े टस-से-मस न हुए; चाबुक की मार भी उन्हें एक कदम आगे न बढ़ा सकी।

"हुज़ूर," हार कर एक कोचवान ने कहा, "आज तो हम किसी भी हालत में कोबी नहीं पहुँच सकते। क्या यह बेहतर न होगा कि हम समय रहते ही बायीं ओर मुड़ चलें? मेरा ख़याल है, वहाँ उस ढलान पर कुछ झोंपड़ियाँ हैं। ख़राब मौसम में यात्री हमेशा वहीं ठहरा करते हैं।" फिर उसने एक ओसेतियन की ओर इशारा करते हुए जोड़ा, "ये लोग कहते हैं, अगर आप इन्हें वोदका पीने के लिए थोड़ी-सी बख़्शीश दे देंगे तो ये हमें वहाँ तक रास्ता दिखाते हुए ले चलेंगे।"

"जानता हूँ भाई, बिना तुम्हारे कहे ही मैं जानता हूँ," कप्तान बोला, "ये बदमाश! बख़्शीश के लिए ये कुछ भी कर सकते हैं।"

"जो भी हो, आपको यह तो मानना ही पड़ेगा कि इनके बिना हम और भी बुरी हालत में होते," मैंने कहा।

"हो सकता है, हो सकता है," वह बुड़बुड़ाया, "लेकिन इन रास्ता दिखाने वालों को मैं ख़ूब अच्छी तरह जानता हूँ। ये सूँघ कर ही जान जाते हैं, कब आप से फ़ायदा

उठाया जा सकता है। हुँह, जैसे इनके बिना हम अपना रास्ता ही न खोज पाते!"

बहरहाल, हम बायीं ओर घूमे और बड़ी मुश्किल से किसी तरह उस तंग और छोटे-से रैन-बसेरे पर जा पहुँचे, जो कुल-मिला कर पत्थर की सिलों और चौकोर टुकड़ों से बनी दो छोटी झोंपड़ियों और वैसे ही पत्थरों से बनी चार-दीवारी से बनाया गया था। उन झोंपड़ियों के बदहाल निवासियों ने बड़ी गर्मजोशी से हमारा स्वागत-सत्कार किया। बाद में मुझे पता चला कि सरकार इसी शर्त पर उन्हें तनख्वाह और खाना-कपड़ा दे कर पालती है कि वे तूफ़ान की गिरफ़्त में आये मुसाफ़िरों को अपनी झोंपड़ी में पनाह दें।

"चलिए, यह भी भले के लिए ही हुआ," आग के पास आसन जमाते हुए मैंने कहा, "अब आप बेला की कहानी का बाकी हिस्सा मुझे सुना सकेंगे, क्योंकि मुझे यकीन है, कहानी वहीं ख़त्म नहीं होती।"

"आपको ऐसा यकीन हुआ कैसे?" कप्तान ने आँखों में एक चमक और होंठों पर एक चालाक मुस्कान लाते हुए पूछा।

"इसलिए कि चीज़ें इस तरह नहीं घटित होतीं। जिस घटना की शुरुआत इतनी अजीब है, उसका अन्त भी ज़रूर वैसा ही होगा।"

"हाँ भाई, आपने सही अन्दाज़ा लगाया..."

"यह जान कर ख़ुशी हुई।"

"आपके लिए ख़ुश होना तो ठीक ही है, लेकिन मेरे लिए उस सबको याद करना और दोहराना बहुत दुखी और उदास करने वाला है। सचमुच कितनी बढ़िया और अच्छी लड़की थी बेला! बाद के दिनों में तो मैं उसे कुछ इस तरह प्यार करने लगा था, मानो वह मेरी बेटी हो और वह भी मुझे बहुत चाहती थी। मैं आपको यह भी बता दूँ कि मेरा अपना कोई परिवार नहीं है; क़रीब बारह वर्षों से मुझे अपने माता और पिता की कोई ख़बर नहीं मिली। अपने लिए बीवी तलाशने के बारे में पहले तो मैंने सोचा नहीं और अब तो आप भी मानेंगे, वैसा करना शोभा नहीं देगा। सो, दुलार करने के लिए उसे पा कर मैं बहुत ख़ुश और सुखी हुआ था। वह हमें गाना सुनाती, लेज़्गिन्का नाच कर दिखाती... और कितना बढ़िया नाचती थी वह! मैंने अपने प्रान्त की अच्छी-अच्छी महिलाओं को नाचते देखा है; और एक बार, लगभग बीस बरस

पहले, मैं इत्तिफ़ाक से मॉस्को के 'नोबल्ज़ क्लब' में भी गया था, मगर बेला के आगे सब पानी भरतीं। पेचोरिन उसे गुड़िया की तरह सजा-सँवार कर रखता और दुलराता था और तरह-तरह से लाड़-प्यार करता था, और वह निखर कर इतनी सुन्दर और प्यारी निकल आयी थी कि आदमी चकित रह जाते। धूप की वजह से उसकी बाँहों और चेहरे पर जो ताँबियापन झलक आया था, वह ग़ायब हो गया, और गाल गुलाब की तरह खिल उठे... कितनी ख़ुश-मिज़ाज और ज़िन्दादिल थी और मुझे कितना चिढ़ाती रहती थी वह नन्हीं-सी लोमड़ी भगवान उसे माफ़ करे!"

"आपने जब उसके पिता की मौत के बारे में उसे बताया तो क्या हुआ?"

"काफ़ी देर तक तो हमने यह बात उससे छिपाये रखी जब तक कि वह अपने नये जीवन में रस-बस न गयी। और जब हमने उसे बताया तो दो-एक दिन वह रोयी-चिल्लायी, फिर भूल-भाल गयी।

"उसके बाद क़रीब चार महीनों तक सब कुछ ख़ूब मस्त और शानदार ढंग से चलता रहा। मैंने बताया ही होगा, पेचोरिन शिकार का बहुत शौकीन था। कोई अजीब-सी भेद-भरी शक्ति उसे जंगली सुअरों या हिरनों का पीछा करने के लिए जंगल की ओर खींच ले जाया करती थी; और अब बेला के आने के बाद वह किले की दीवारों के बाहर भी मुश्किल से गया होगा। उन्हीं दिनों मैंने ग़ौर किया कि वह एक बार फिर कुछ उदास-सा, खोया-खोया-सा रहने लगा है। हाथ पीठ के पीछे बाँधे, वह कमरे में इधर-से-उधर टहलता रहता। एक दिन, बिना किसी से एक शब्द भी कहे-सुने, उसने बन्दूक उठायी और बाहर निकल गया और पूरी सुबह ग़ायब रहा। ऐसा एक बार हुआ, दो बार हुआ और फिर तो बार-बार यही होने लगा। मैंने सोचा, आसार अच्छे नज़र नहीं आते; उन लोगों के बीच ज़रूर कोई बात हुई है।

"एक सुबह, जब मैं उनसे मिलने पहुँचा तो मैंने बेला को काले रंग का रेशमी बेश्मेत पहने, पलँग पर बैठे पाया उसके चेहरे पर ऐसी उदासी और मुर्दनी छायी हुई थी कि मैं सचमुच किसी आशंका से चौंक-सा पड़ा।

"पेचोरिन कहाँ है?' मैंने पूछा।

"शिकार को गये हैं।'

"कब गया था? आज"

"उसने कोई जवाब नहीं दिया; मुझे लगा, जैसे उसे बोलने में कठिनाई-सी हो रही थी।

"नहीं, कल,' आख़िरकार उसने एक ठण्डी साँस भरते हुए कहा।

"कहीं उसे कुछ हो तो नहीं गया!'

"मुझे कल दिन भर बस यही चिन्ता लगी रही; मैं सोचती रही, सोचती रही,' उसने कहा, उसकी आँखों में आँसू डबडबा आये थे, "दुनिया भर की अनहोनी बातें मेरे दिमाग़ में आती रहीं। तरह-तरह की डरावनी चीज़ों की मैं कल्पना करती रही। कभी सोचती कि जंगली सुअर ने उन्हें घायल कर दिया है; फिर सोचने लगती, कहीं चेचेन लुटेरे उन्हें पहाड़ों पर न पकड़ ले गये हों... और अब तो मुझे साफ़ ऐसा लगता है कि वे मुझे प्यार नहीं करते।"

"अरे बिटिया, तुम्हारे दिमाग़ में ऐसी बुरी बात आयी कैसे?'

"वह फूट-फूट कर रो पड़ी। कुछ देर बाद उसने गर्व से अपना सिर उठाया, आँसू पोंछे और कहने लगी, 'अगर वे मुझे प्यार नहीं करते तो मुझे घर भेजने से उन्हें कौन रोकता है? मैं अपने को जबरदस्ती उन पर नहीं लाद रही। और अगर ऐसा ही चलता रहा, तो मैं ख़ुद ही चली जाऊँगी; मैं उनकी ग़ुलाम तो हूँ नहीं, एक सरदार की बेटी हूँ।'

"मैं उसे समझाने-बुझाने लगा। सुनो बेला, वह चौबीस घण्टे यहाँ, तुम्हारे आँचल से बँधा तो बैठा नहीं रह सकता। जवान आदमी है, शिकार का भी शौकीन है। कहीं जायेगा तो लौट कर तुम्हारे ही पास आयेगा। और अगर तुम हर वक्त मुँह लटकाये उदास बैठी रहोगी तो वह तुमसे और भी जल्द तंग आ जायेगा।'

"आप ठीक कहते हैं,' उसने जवाब दिया, मैं अब ख़ुश रहूँगी।' हँसते हुए उसने अपनी खँजड़ी उठायी और मुझे एक गीत सुनाने लगी; गाते-गाते वह नाचने भी लगी; लेकिन कुछ ही देर बाद वह फिर पलँग पर जा गिरी और उसने हाथों से अपना मुँह ढँक लिया।

"अब मैं क्या करता? उसे कैसे समझाता? आप जानते हैं, औरतों से मेरा कभी वास्ता नहीं पड़ा। मैंने उसे दिलासा देने या ढाढ़स बँधाने का कोई तरीका खोजने के लिए लाख अपना दिमाग़ कुरेदा, लेकिन मुझे कुछ नहीं सूझा; कुछ देर हम दोनों ख़ामोश रहे। सच कहता हूँ, निहायत ही अप्रिय स्थिति पैदा हो गयी थी।

"आख़िरकार कुछ देर बाद मैंने कहा, क्या मेरे साथ किले की दीवार तक टहलने चलोगी। देखो, कितना बढ़िया मौसम है।'

"सितम्बर का महीना था और दिन सचमुच बड़ा सुहावना था। धूप निकली हुई

थी, लेकिन गर्मी नहीं थी। और पहाड़ इतने साफ़ और स्पष्ट दिखायी दे रहे थे, मानो तश्तरी में सजा कर सामने पेश कर दिये गये हों। हम बाहर निकल आये और चुपचाप किले की दीवार पर इधर से उधर टहलने लगे। कुछ देर बाद वह एक कंगूरे पर उगी घास पर बैठ गयी। मैं भी उसके पास ही जा बैठा। आज याद करके कितना अजीब लगता है कि उन दिनों मैं कैसे एक दाई की तरह उसकी देख-भाल में परेशान रहा करता था।

"हमारा किला कुछ ऊँचाई पर बना हुआ था, और मुँडेर से बाहर का शानदार नज़ारा दिखायी पड़ता था। एक ओर छोटे-छोटे नालों से जगह-जगह कटा-फटा, विस्तृत खुला मैदान था, जिसके दूसरे छोर पर उगा जंगल, पहाड़ की चोटी तक फैला हुआ था। इस विस्तृत खुले मैदान में जहाँ-तहाँ गाँवों से उठता धुआँ और घास चरते घोड़ों के झुण्ड देखे जा सकते थे। दूसरी ओर एक छोटी-सी नदी बहती थी, जिसके किनारे घनी झाड़ियों से पटे थे, जो कोहेकाफ़ में विलीन होती हुई चट्टानी पहाड़ियों पर भी फैली थीं। हमलोग एक ऐसे बुर्जु के कोने में बैठे हुए थे, जहाँ से दोनों ओर का पूरा दृश्य साफ़ दिखायी पड़ता था। मैं इस प्राकृतिक दृश्य पर अपनी नज़रें दौड़ा रहा था कि सलेटी रंग के घोड़े पर सवार एक आदमी, जंगल से निकल कर, निरन्तर हमारी ओर आता दिखायी दिया। जब वह नदी के उस पार, हमसे क़रीब सौ सेजीन की दूरी पर पहुँचा तो रुक गया और पागल की तरह घोड़े पर गोल-गोल चक्कर लगाने लगा...आख़िर इस हरकत का क्या मतलब था?

"तुम्हारी आँखें मुझसे ज़्यादा जवान हैं बेला! देखो, क्या तुम उस घुड़सवार को पहचान सकती हो,' मैंने कहा, 'मालूम नहीं यह किसे दर्शन देने के लिए तशरीफ़ लाया है।'

"उसने ध्यान से देखा और चीख़ उठी, 'यह तो काज़बिच है!'

"ओह, वह लुटेरा! हमारी हँसी उड़ाने आया है क्या?' अब मुझे भी दिखायी दे गया था कि वह सचमुच काज़बिच था वही साँवला चेहरा, हमेशा की तरह गन्दा और वही फटे, पैबन्द-लगे कपड़े।

"यह घोड़ा तो मेरे अब्बा का है,' बेला ने मेरी बाँह थामते हुए कहा, वह सूखे पत्ते की तरह काँप रही थी और उसकी आँखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं।

"अहा, मेरी नन्हीं-सी चिड़िया,' मैंने मन ही मन कहा, 'लुटेरों का ख़ून तुम में भी बोलता है।'

"इधर सुनो,' मैंने एक सन्तरी को आवाज़ दी, 'ज़रा निशाना तो लगाओ, अगर

उस आदमी को गिरा दोगे तो चाँदी का एक रूबल इनाम मिलेगा।'

''बहुत अच्छा हुज़ूर, बस मुश्किल सिर्फ़ इतनी है कि वह पल भर को थिर नहीं होता...'

''तो उसे थिर होने को कहो,' मैंने हँस कर कहा।

''ओ, भाई!' हवा में हाथ हिलाते हुए सन्तरी ने ज़ोर से पुकारा, 'सुनते हो, एक मिनट सुनो, ज़रा लट्टू की तरह घूमना बन्द करो।'

''काज़बिच सचमुच सुनने के लिए ठहर गया, शायद यह सोच कर कि हम सुलह करना चाहते हैं। गुस्ताख़ भिखमंगा कहीं का! सन्तरी ने निशाना साधा... फटाक। ...पर निशाना चूक गया, क्योंकि जैसे ही सन्तरी की तोड़ेदार बन्दूक के प्याले में बारूद चमका, काज़बिच ने घोड़े को एड़ लगा कर एक ओर कुदा दिया। फिर वह रकाबों में पैर रख कर खड़ा हो गया, अपनी भाषा में कुछ चिल्लाया, और धमकी-भरे अन्दाज़ में चाबुक को हवा में फटकारते हुए, पलक झपकते ही बिजली की तरह ग़ायब हो गया।

''तुम्हें शर्म आनी चाहिए,'' मैंने सन्तरी से कहा।

''हुजूर! निशाना ठीक लगा है, वह मरने चला गया है; कहीं न कहीं जा कर मरेगा ज़रूर,' उसने जवाब दिया, 'ऐसे ढीठ हैं ये कम्बख़्त! क्या मज़ाल, जो आप इन्हें एक गोली से मार सकें।'

''इसके क़रीब चौथाई घण्टे बाद पेचोरिन शिकार से लौट आया। बेला दौड़ी-दौड़ी उससे मिलने के लिए लपकी और उसके गले में बाँहें डाल कर लिपट गयी। इतने लम्बे समय तक पेचोरिन के यों ग़ायब रहने को ले कर कोई शिकायत, कोई शिकवा मैंने बेला के मुँह से नहीं सुना... हालाँकि पेचोरिन के इस रवैये पर मैं ख़ुद धैर्य खो बैठा था।

''हजरत,' मैंने कहा, 'काज़बिच अभी-अभी नदी के उस पार से हमें दर्शन दे रहा था; हमने उस पर गोली भी चलायी। तुम सहज ही उससे टकरा सकते थे। ये पहाड़ी लोग बड़े घुन्ने और शुतर-कीना होते हैं और क्या तुम्हारा ख़याल है, उसे यह शक नहीं हुआ होगा कि तुम्हीं ने अज़मत की मदद की है? मैं शर्तिया कहता हूँ कि उसने बेला को यहाँ देख लिया है। मुझे यह भी पता है कि साल भर पहले वह बेला की ओर बेहद आकर्षित था दरअसल उसने ख़ुद मुझे यह बात बतायी थी। अगर कहीं उसे भारी-भरकम कलीम जुटाने की उम्मीद होती तो वह शादी के लिए निश्चय ही

बेला का हाथ माँग चुका होता।'

"अब पेचोरिन कुछ गम्भीर हुआ। 'हाँ,' उसने कहा, 'हमें और भी सावधान रहना होगा... बेला, आज के बाद तुम किले की दीवार पर नहीं जाओगी।'

"उस शाम मैं काफ़ी देर तक उससे बात करता रहा। मुझे यह देख कर दुख होता था कि उस बेचारी लड़की के प्रति वह बदल गया था, क्योंकि अपना आधा समय बाहर शिकार में बिताने के साथ-साथ, वह बेला से बड़े ठण्डेपन से पेश आने लगा। बिरले ही वह उसके प्रति अनुराग दिखाता। धीरे-धीरे वह मन ही मन घुलने लगी, उसका चेहरा भी सुत गया और उसकी बड़ी-बड़ी आँखों की चमक ग़ायब हो गयी। जब कभी मैं उससे पूछता 'ठण्डी आहें क्यों भरती हो बेला' क्या तुम उदास हो?' वह जवाब देती, 'नहीं!'

"क्या तुम्हें कुछ चाहिए?'

"नहीं।'

"क्या तुम अपने सगे-सम्बन्धियों की याद में दुखी हो रही हो?'

"मेरा कोई सगा नहीं।'

"कई बार तो कई-कई दिनों तक कोशिश करने पर भी उसके मुँह से 'हाँ' या 'नहीं' के सिवा और कुछ निकलवाया ही नहीं जा सकता था।

"मैंने पेचोरिन से इस बारे में बात करने का फ़ैसला किया।"

"सुनो, मैक्सिम मैक्सिमिच,' उसने जवाब दिया, मैं एक अभागे चरित्र का आदमी हूँ; मैं ऐसा क्यों हो गया, मुझे मालूम नहीं। यह मेरी शुरू की शिक्षा-दीक्षा या लालन-पालन है, जिसने मुझे ऐसा बना दिया या फिर जन्म से ही भगवान ने मुझे ऐसा बनाया है मैं नहीं जानता। मैं बस इतना जानता हूँ कि जब मेरी वजह से दूसरे दुखी होते हैं, तब मैं ख़ुद भी कम दुखी नहीं होता। मैं यह भी जानता-समझता और महसूस करता हूँ कि ऐसा कह कर मैं उन्हें एक बेहद लचर-सी तसल्ली ही देता हूँ। लेकिन कुछ भी हो, हकीकत यही है।

"अपनी जवानी की शुरुआत में, माता-पिता की देखरेख और सरपरस्ती से अलग होने के बाद मैंने तन-मन से उन मौज-मज़ों और राग-रंग में जी भर कर डुबकी लगायी, जो पैसे से खरीदे जा सकते थे, और फिर स्वाभाविक तौर पर ही मुझे

ख़ुद उनसे नफ़रत हो गयी। तब मैं सभ्य और ऊँचे समाज की ओर मुड़ा, मगर जल्दी ही उससे भी उकता गया। मैंने सुन्दर-से-सुन्दर महिलाओं से प्यार किया और बदले में उनका प्यार भी पाया, लेकिन उनके प्यार ने सिर्फ़ मेरी महत्वाकांक्षा और अहं को ही बढ़ावा दिया, जबकि मेरा दिल उसी तरह वीरान और एकाकी बना रहा। फिर मैंने पढ़ना-लिखना और अध्ययन शुरू किया; लेकिन ज्ञान और इल्म से भी मुझे अरुचि हो गयी। मैंने पाया कि ज्ञान पर न तो सुख ही निर्भर है, न यश। रत्ती भर नहीं। क्योंकि संसार में अज्ञानी ही सबसे ज़्यादा सुखी हैं और यश बहुत हद तक किस्मत की चीज़ है, जिसे हासिल करने के लिए आदमी का सिर्फ़ धूर्त और काइयाँ होना काफ़ी है। और मैं बुरी तरह ऊब गया...

"जल्द ही मेरी बदली कॉकेशिया में हो गयी; यह मेरे जीवन का सबसे सुखी समय था। मैंने उम्मीद की थी कि चेचेन गोलियों की सनसनाहट में मेरी ऊब बची न रहेगी लेकिन यह उम्मीद भी ग़लत साबित हुई। एक ही महीने में गोलियों की सनसनाहट और मौत की निकटता का मैं इतना आदी हो गया कि, सच कहूँ, उनकी अपेक्षा मच्छरों की भनभनाहट मुझे ज़्यादा परेशान करती और ज़िन्दगी अब पहले से अधिक नीरस, अधिक निरर्थक नज़र आती, क्योंकि मैं अब क़रीब-क़रीब अपनी आख़िरी उम्मीद भी खो बैठा था। फिर जब बेला मेरे घर आ गयी; जब मैंने उसे गोद में बैठा कर पहले-पहल उसकी काली-काली रेशमी लटों को चूमा तो मैंने बेवकूफ़ी से मन ही मन सोचा था कि यह ज़रूर कोई अप्सरा है, जिसे एक रहमदिल किस्मत ने मेरे पास भेज दिया... पर एक बाद फिर मैंने ग़लती की; एक असभ्य और बर्बर लड़की का प्यार, किसी कुलीन महिला के प्यार से किसी मायने में बेहतर नहीं। पहली की सरलता और अज्ञान उतने ही ऊबाऊ होते हैं, जितने दूसरी के नखरे और चोंचले। यों मैं अब भी उसे प्यार करता हूँ; उसके लिए ख़ुशी से अपनी जान तक देने को तैयार हूँ, लेकिन यह भी ठीक है कि मैं उससे ऊब गया हूँ।

"मैं नहीं जानता कि मैं बेवकूफ़ हूँ या परले सिरे का बदमाश; पर सच यह है कि मैं भी, उससे ज़्यादा नहीं तो कम-से-कम उसके जितना ही, दया का पात्र हूँ। इस दुनिया ने मेरी आत्मा को मानो ऐंठ-मरोड़ कर, ख़राब और गुमराह कर दिया है; मेरा दिमाग़ बेचैन और अशान्त है और दिल बेइन्तिहा ख़ाली और असन्तोषी। कोई भी चीज़ मुझे तृप्त नहीं कर पाती : दुख का मैं उतनी ही जल्दी अभ्यस्त हो जाता हूँ, जितनी जल्दी सुख का और मेरी ज़िन्दगी दिन पर दिन रीत रही है, और भी सूनी होती चली जा रही है। अब मेरे लिए सिर्फ़ एक ही उपाय और रह गया है, और वह है

यात्रा। बस, अब यही एक रास्ता बचा है कि मैं देश-विदेश के सफ़र पर निकल पड़ूँ और जितनी जल्दी सम्भव हुआ, मैं निकल पड़ूँगा यूरोप के लिए नहीं, भगवान बचाये बल्कि अमरीका के लिए, अरब के लिए या हिन्दुस्तान के लिए और शायद मैं सफ़र के दौरान ही कहीं ख़त्म हो जाऊँगा। कम-से-कम इतना मुझे विश्वास है कि तूफ़ानों और रद्दी सड़कों की मदद से यह आख़िरी सहारा मुझे तसल्ली बख़्शना इतनी जल्दी बन्द नहीं करेगा।"

"वह काफ़ी देर तक इसी रौ में बोलता रहा और उसकी बातें मेरी याददाश्त पर जैसे जलती सलाखों से अंकित होती रहीं, क्योंकि यह पहला मौक़ा था, जब मैंने पच्चीस वर्ष के किसी नौजवान से ऐसी बातें सुनी थीं। और भगवान करे, वह आख़िरी मौक़ा ही हो, हैरत है! आप तो शायद हाल ही में राजधानी में थे, कदाचित आप बता सकें," कप्तान ने मुझे सम्बोधित करते हुए बात ज़ारी रखी, "क्या आजकल वहाँ के सारे युवक ऐसे ही हैं?"

मैंने जवाब दिया कि बहुत-से लोग हैं, जो ऐसी बातें कहते हैं, और बहुत सम्भव है, उनमें से कुछ लोग सच बोल रहे हों; जबकि कुल-मिला कर सच्चाई यह है कि मोह-भंग की भावना, अन्य सभी फैशनों की तरह, समाज के ऊँचे तबकों में शुरू होने के बाद नीचे के तबकों में उतर आयी थी, जो घिस-घिस कर इसे तार-तार कर रहे थे; और अब तो हालत यह थी कि जो लोग सचमुच ऊब और उकताहट महसूस करते भी हैं, वे भरसक इसे छिपाते घुमते हैं, मानो यह कोई ऐब या ख़राबी हो। कप्तान इन बारीकियों को ठीक से समझ नहीं पाया, और उसने सिर हिला कर चतुराई से मुस्कराते हुए कहा :

"ये फ्रांसीसी थे, मेरे ख़याल में, जिन्होंने ऊब को एक फैशन बना दिया?"

"नहीं, अंग्रेजों ने।"

"अच्छा, तो यह बात है," उसने जवाब दिया, "ख़ैर, ये अंग्रेज तो हमेशा से ही पक्के शराबी रहे हैं।"

अनायास ही मुझे मॉस्को की एक महिला की याद हो आयी, जिसका दावा था

कि बायरन एक पियक्कड़ से सिवा और कुछ नहीं था। फिर भी, कप्तान का यह जुमला माफ़ करने लायक था, क्योंकि शराब से बचने के लिए वह स्वाभाविक तौर पर अपने आपको इसी तरह आश्वस्त करता रहता था कि शराबनोशी ही दुनिया की सारी बदकिस्मती और मुसीबतों की जड़ है।

"उसके बाद फिर काज़बिच नहीं आया," कप्तान ने कहानी का तार आगे बढ़ाते हुए कहा, "तो भी, जाने क्यों, मैं इस ख़याल से अपना पीछा नहीं छुड़ा सका कि उस दिन काज़बिच का आना बेवजह और बेमतलब नहीं था और यह कि वह अब भी किसी-न-किसी साज़िश में लगा हुआ है।"

एक दिन पेचोरिन ने ज़ोर दे कर मुझे भी जंगली सुअर के शिकार के लिए अपने साथ ले लिया। मैं इनकार करता रहा, क्योंकि मुझे जंगली सुअर से क्या लेना-देना था, लेकिन आख़िरकार उसने मुझे भी साथ घसीट ही लिया। पाँच सिपाहियों को ले कर हम सुबह-सवेरे ही निकल पड़े। दस बजे तक हम नरकुल और सरपत की झाड़ियों और पेड़ों के झुरमुटों में छान-बीन करते रहे, मगर एक भी जानवर नहीं दिखायी पड़ा।

"'वापस चलने के बारे में क्या इरादा है?' मैंने उससे कहा, 'हठ करने से क्या फ़ायदा? देख ही रहे हो कि आज का दिन बड़ा मनहूस साबित हुआ है।' लेकिन गरमी और थकान के बावजूद पेचोरिन को ख़ाली हाथ लौटना मंजूर नहीं था... हाँ, ऐसा ही था वह; अगर एक बार उसके दिमाग़ पर कोई चीज़ चढ़ गयी, फिर वह उसे हासिल करके ही मानता था; उसकी माँ ने ज़रूर उसे बचपन में बिगाड़ दिया होगा... आख़िरकार, दोपहर के क़रीब एक कम्बख़्त सुअर दिखायी दे ही गया। धाँय-धाँय!... हमने गोली चलायी, पर नहीं, निशाना ठीक नहीं बैठा और सुअर सरकण्डे की झाड़ियों में सरक कर छिप गया... हाँ, सचमुच वह दिन हमारे लिए बड़ा मनहूस था। ख़ैर, कुछ देर सुस्ता कर हम लोग घर ही तरफ़ मुड़े।

"अपने-अपने घोड़ों पर सवार, हम चुपचाप चले आ रहे थे; लगामें ढीली छोड़ रखी थीं और क़रीब-क़रीब किले तक आ पहुँचे थे, हालाँकि किला झाड़ियों की वजह से अभी दिख नहीं रहा था; तभी गोली छूटने की आवाज़ सुनायी दी। हमने एक-दूसरे की ओर देखा और एक ही सन्देह दोनों के दिमाग़ में बिजली की तरह कौंध गया। हमने घोड़ों को आवाज़ की दिशा में सरपट दौड़ाया और देखा कि किले

की दीवार पर कुछ सिपाही एक झुण्ड में इकट्ठा हो कर मैदान की तरफ़ हाथों से इशारा कर रहे थे, जहाँ एक घुड़सवार अपने घोड़े को बेतहाशा दौड़ाये दूर चला जा रहा था। उसके आगे ज़ीन पर कोई सफ़ेद-सी चीज़ रखी हुई थी। एक पल भी खोये बिना पेचोरिन चेचेनों की तरह ही दिल दहलाने वाली आवाज़ में चिल्लाया और अपनी पेटी से तमंचा निकाल कर तीर की तरह उसके पीछे दौड़ पड़ा। मैंने भी उसके पीछे-पीछे अपना घोड़ा दौड़ा दिया।

"ख़ुशकिस्मती से शिकार की असफलता से कारण हमारे घोड़े थके नहीं थे और उस समय भी काफ़ी ताज़ा थे। ज़ीन के नीचे उनके पुट्ठे खिंच कर तन गये और हर क्षण हम अपने शिकार के निकट होते जा रहे थे। आख़िर मैंने काज़बिच को पहचान लिया, मगर उसने अपने सामने क्या चीज़ पकड़ रखी है, यह अभी पहचान में नहीं आ रहा था। मैं घोड़ा बढ़ा कर पेचोरिन की बगल में आया और चिल्ला कर उससे बोला, 'यह तो काज़बिच है!' उसने मेरी ओर देखा, सिर हिला कर हामी भरी और अपने चाबुक के दस्ते से घोड़े की रान पर चोट लगायी।

"आख़िरकार हम काज़बिच के इतने निकट पहुँच गये कि उस पर गोली चलायी जा सकती थी। उसका घोड़ा थका हुआ था या हमारे घोड़ों से घटिया नस्ल का था, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन इतना ज़रूर है कि अपनी भरपूर कोशिश के बावजूद वह घोड़े को तेज़ दौड़ा पा रहा था। उस समय उसे ज़रूर ही अपने कराग्योज़ की याद आ रही होगी...

"मैंने सिर उठाया तो देखा, पेचोरिन अपने घोड़े को दौड़ाते हुए निशाना साध रहा था। 'गोली मत चलाओ!' मैंने चीख़ कर कहा, 'बारूद बचा रखो, अभी हम उसे दबोचे लेते हैं।' लेकिन यही तो है जवानी हमेशा ग़लत समय पर साहस दिखाने वाली और नासमझ... ख़ैर, मेरे मना करते-करते तमंचे की आवाज़ गूँज उठी और गोली घोड़े के पिछले पैर में जा लगी। दस-बारह छलाँगें और लगा कर बेचारा जानवर लड़खड़ाया और घुटनों के बल गिर पड़ा। काज़बिच उछल कर ज़ीन से उतर गया, और अब हमने देखा कि उसने अपनी बाँहों में एक औरत को उठा रखा था, जो बुर्के में लिपटी हुई थी। यह बेला थी... बेचारी बेला! काज़बिच ने अपनी भाषा में ज़ोर में चिल्ला कर हमसे कुछ कहा और फिर अपना छुरा बेला की ओर तान दिया... पल भर भी जाया करने का समय नहीं था, मैंने बिना सोचे-विचारे या निशाना लिये, बन्दूक दाग़ दी। मेरी गोली ज़रूर उसके कन्धे में लगी होगी, क्योंकि सहसा उसकी बाँह नीचे झूल गयी। जब धुआँ साफ़ हुआ तो हमने देखा, घायल घोड़ा ज़मीन पर पड़ा है और उसके पास ही बेला। और काज़बिच, जिसने अपनी बन्दूक दूर फेंक दी

थी, एक सीधी खड़ी चट्टान पर झाड़ियों के बीच लुकता-छिपता, बिल्ली की तरह फुर्ती से चढ़ा चला जा रहा है। मैं निशाना ले कर उसे उड़ा देना चाहता था, लेकिन अफ़सोस, मेरी बन्दूक ख़ाली हो चुकी थी। हम ज़ीन से कूद पड़े और बेला की ओर दौड़े। बेचरी अभागी लड़की निर्जीव-सी पड़ी थी और उसके घाव से खून बह रहा था। बदमाश कमीना कहीं का! अगर उसने छाती पर वार किया होता, तो देखते-देखते सब ख़त्म हो चुका होता; लेकिन दुष्ट ने कैसी नीचता से उसकी पीठ में छुरा भोंका था। बेला को होश नहीं था। हमने उसके दुपट्टे को फर्रियों में चीरा और उसके घाव पर जितना कस कर बाँध सके, पट्टियाँ बाँध दीं। बार-बार पेचोरिन उसके सूखे होंठों को चूमता रहा, मगर बेकार। कोई तरकीब उसे होश में नहीं ला सकी।

"पेचोरिन घोड़े पर सवार हो गया तो मैंने बेला को ज़मीन से उठाया और जैसे-तैसे उसे पेचोरिन के आगे ज़ीन पर लिटा दिया। उसने एक बाँह से घेर कर बेला को सँभाल लिया और हम लौट पड़े। काफ़ी देर की चुप्पी के बाद पेचोरिन बोला, 'सुनो, मैक्सिम मैक्सिमिच, इस चाल से तो हम इसे ज़िन्दा हालत में घर तक न पहुँचा सकेंगे।'

"तुम ठीक कह रहे हो,' मैंने कहा और हमने एड़ लगा कर घोड़ों को पूरी तेज़ी से दौड़ा दिया। किले के फाटक पर एक अच्छी-ख़ासी भीड़ हमारा इन्तज़ार कर रही थी। बहुत सँभाल कर हम घायल लड़की को पेचोरिन के क्वार्टर में ले गये और फ़ौरन सर्जन के लिए आदमी दौड़ाया। हालाँकि सर्जन शराब पिये पड़ा था, फिर भी हमारे बुलाते ही चला आया; घाव की जाँच करने के बाद उसने बताया कि बेला एक दिन से ज़्यादा जीवित नहीं रहेगी। लेकिन उसकी बात ग़लत निकली..."

"तो क्या वह ठीक हो गयी?" मैंने कप्तान की बाँह पकड़ते हुए एक अनजानी उत्कंठा से पूछा। न चाहते हुए भी जैसे मुझे ख़ुशी हुई थी।

"नहीं," उसने जवाब दिया, "सर्जन ने अपनी जाँच में सिर्फ़ इतनी ही भूल की थी कि वह दो दिन और जीवित रही।"

"लेकिन यह तो बताइए, काज़बिच ने उसका अपहरण किया कैसे?"

"हुआ यूँ कि पेचोरिन की हिदायतों के बावजूद, वह किले से निकल कर नदी के

किनारे चली गयी थी। गर्मी बहुत थी, इसलिए उसने चट्टान पर बैठ कर अपने पैर पानी में लटका दिये। काज़बिच दबे पाँव पीछे से आया, झपट कर बेला को पकड़ते हुए उसने उसके मुँह में कपड़ा ठूँस दिया और घसीट ले गया। फिर उछल कर घोड़े पर सवार हुआ और उसे सरपट दौड़ाता हुआ नौ दो ग्यारह हो गया। बेला इस बीच किसी-न-किसी तरह चिल्लाने में सफल हो गयी थी और सन्तरियों ने ख़तरे का शोर मचाते हुए, काज़बिच पर गोली भी चलायी लेकिन निशाना चूक गया। ठीक उसी समय हम लोग पहुँच गये।"

"पर काज़बिच उसे क्यों उड़ा ले जाना चाहता था?"

"भाई मेरे! यह चेरकस कौम ही पेशेवर चोरों की है। बेहिफ़ाज़त पड़ी चीज़ को उड़ाने के लिए इनकी उँगलियाँ खुजलाती रहती हैं; भले ही उन्हें उस चीज़ की ज़रूरत हो या नहीं, पर चुरायेंगे ज़रूर वे बस ख़ुद को किसी तरह रोक नहीं पाते। इसके अलावा, बेला पर तो एक अर्से से उसकी नज़र थी।"

"सो क़िस्सा-कोताह यह कि वह मर गयी?"

"हाँ, लेकिन बेचारी ने तकलीफ़ बहुत पायी और हम ख़ुद उसकी देख-भाल करते-करते थक-टूट गये। रात के क़रीब दस बजे उसे होश आया; हम उसके पलँग के पास ही बैठे थे। आँखें खोलते ही उसने पेचोरिन को पुकारा। यह रहा मैं, ठीक तुम्हारे पास ही, मेरी जानेच्का (यानी हमारी भाषा में 'प्यारी'),' बेला का हाथ अपने हाथों में लेते हुए उसने जवाब दिया।

"मैं बचूँगी नहीं,' वह बोली।

"उसे यह तसल्ली देते हुए कि सर्जन ने उसे हर हालत में ठीक करने का वादा किया है, हमने उसे साहस बँधाना शुरू किया, लेकिन उसने सिर हिला कर दीवार की ओर करवट बदल ली। वह मरना नहीं चाहती थी!

"रात को वह बुखार में बड़बड़ाने लगी। उसका सिर जैसे जल रहा था और रह-रह कर उसका सारा शरीर बुखार में काँप-काँप उठता। वह अपने पिता और भाई के बारे में तमाम बेसिर-पैर की बातें करती रही; अपने घर और अपने पहाड़ों पर जाने की इच्छा भी उसने ज़ाहिर की... फिर वह पेचोरिन के बारे में भी बोलती रही, कभी उसे तरह-तरह के प्यार-भरे नामों से पुकारती और कभी उसे उलाहने देती कि वह अपनी 'जानेच्का' को अब पहले की तरह प्यार नहीं करता...

"दोनों हाथों पर सिर टिकाये पेचोरिन चुपचाप उसकी बातें सुनता रहा। लेकिन

इस सबके दौरान मुझे उसकी आँखों में आँसू की एक बूँद भी नहीं दिखायी दी। वह रोने के काबिल नहीं था या जान-बुझ कर ख़ुद पर काबू रखे हुए था मैं नहीं जानता। रहा मैं, सो मैंने ऐसी दिल तोड़ने वाली घटना पहले कभी नहीं देखी थी।

"सुबह के क़रीब बुखार का ज्वार उतर गया। क़रीब एक घण्टा वह ज़रा भी हिले-डुले बिना, थिर लेटी रही। वह ऐसी पीली और इतनी कमज़ोर हो गयी थी कि उसके साँस लेने का पता भी बड़ी मुश्किल से लगता था। इसके बाद वह धीरे-धीरे कुछ बेहतर महसूस करने लगी और बातें भी करने लगी; लेकिन कैसी बातें, सोच सकते हैं आप? ऐसी बातें सिर्फ़ उसी के दिमाग़ में आ सकती हैं, जो मौत के दरवाज़े पर खड़ा हो। उसे अफ़सोस था कि वह ईसाई नहीं थी, इसलिए परलोक में उसकी आत्मा पेचोरिन की आत्मा से मिल नहीं पायेगी और स्वर्ग में कोई दूसरी ही औरत पेचोरिन की प्राण-बल्लभा होगी। तभी मुझे ख़याल आया कि मरने से पहले अगर वह चाहे तो उसका बपतिस्मा हो सकता है; लेकिन जब मैंने बेला को यह सुझाया तो वह बड़ी देर तक बिना बोले अनिश्चित-सी मेरी ओर ताकती रही। आख़िरकार उसने जवाब दिया कि वह उसी धर्म में मरेगी, जिसमें कि वह पैदा हुई है। इसी तरह का पूरा दिन बीत गया। एक ही दिन में वह किस कदर बदल गयी थी। उसके रक्त-हीन निष्प्रभ गाल अन्दर को धँस गये थे, उसकी बड़ी-बड़ी आँखें जैसे और भी बड़ी हो गयी थीं और होंठ जल रहे थे। उसके अन्दर का बुखार मानो उसकी छाती पर रखे दहकते लाल लोहे की तरह था।

"दूसरी रात आयी और हम उसी तरह उसके पलँग के पास बिना पलक झपकाये बैठे रहे। उसे बेहद तकलीफ़ थी; वह कराह रही थी, लेकिन जैसे ही दर्द थोड़ा-सा थमता, वह पेचोरिन को धीरज बँधाने की कोशिश करती कि अब उसकी तबियत सँभल रही है; उससे आग्रह करती कि वह थोड़ी देर सो ले; उसके हाथ को चूमती और अपने हाथों में दबा लेती। पौ फटने के ज़रा पहले मौत की घोर तकलीफ़ जैसे लोहे के जाल की तरह उस पर उतर आयी। वह बिस्तर में करवटें लेती हुई छटपटाने लगी। फिर उसने पट्टी को फाड़ कर निकाल दिया और उसके घाव से फिर खून बहना शुरू हो गया। जब घाव पर पट्टी बाँध दी गयी तो वह पल भर को एकदम शान्त हो गयी और उसने पेचोरिन से कहा कि वह उसे चूम ले। पेचोरिन पलँग की बगल में घुटने टेक कर बैठ गया; उसने तकिये से बेला का सिर थोड़ा ऊँचा उठाया, और उसके सर्द पड़ते होंठों पर अपने होंठ रख दिये; बेला ने अपनी काँपती बाँहें उसकी गर्दन के चारों ओर कस कर बाँध लीं, मानो इस चुम्बन द्वारा वह उसे अपनी आत्मा सौंप देना चाहती हो। हाँ, यह अच्छा ही हुआ कि वह मर गयी। अगर पेचोरिन

उसे छोड़ देता, तो जाने उस पर क्या गुज़रती? और देर-सबेर होना यही था...

"अगले दिन दोपहर तक वह एकदम शान्त, ख़ामोश और आज्ञाकारी बनी रही, हालाँकि सर्जन तरह-तरह की दवाइयों और पुल्टिसों से उसे बेहद तंग करता रहा।

"भले आदमी,' मैंने सर्जन को टोका भी, 'तुमने ख़ुद कहा कि वह बचेगी नहीं, फिर तुम्हारी इन ढेर सारी दवाइयों से क्या होगा?'

"जो भी हो, यह सब करना ही पड़ता है, मैक्सिम मैक्सिमिच,' उसने जवाब दिया, 'ताकि मेरी आत्मा को बाद में शान्ति मिल सके।' हुँह, आत्मा!

"दोपहर में वह प्यास से तड़पने लगी। हमने कमरे की सब खिड़कियाँ खोल दीं, लेकिन बाहर कमरे से भी ज़्यादा गर्मी थी। हमने उसके पलँग के पास बरफ़ भी रखी, लेकिन किसी चीज़ से फ़ायदा नहीं हुआ। मैं समझ गया कि यह असह प्यास उसकी मौत के क़रीब आने की ख़बर दे रही है और मैंने पेचोरिन को यह बता भी दिया। 'पानी, पानी,' उसने पलँग से ज़रा-सा उठते हुए भर्राई हुई आवाज़ में दुहराया।

"पेचोरिन का चेहरा काग़ज़ की तरह सफ़ेद हो गया। उसने एक गिलास उठाया, पानी से भरा और पीने के लिए बेला को दे दिया। मैंने अपना चेहरा हाथों से ढँक लिया और प्रार्थना करने लगा, अब ठीक से याद नहीं कौन-सी थी। हाँ साहब, मैंने अपनी ज़िन्दगी में बहुत कुछ देखा है, लोगों को अस्पतालों और लड़ाई के मैदानों में दम तोड़ते भी देखा है, लेकिन वह सब ज़रा भी इस जैसा नहीं था; इससे उस सबकी कोई तुलना नहीं। मैं मानता हूँ, कुछ और भी था, जो मुझे बेतरह उदास बनाये दे रहा था; वह यह कि मरने के पहले एक बार भी उसने मुझे याद नहीं किया था, जबकि अपनी ओर से मैं उसे बाप की तरह प्यार करता था। ख़ैर, छोड़िए... भगवान उसका भला करे! और फिर मैं हूँ ही कौन, जिसे कोई अपनी मृत्यु-शैया पर याद करे?...

"पानी पीते ही वह कुछ बेहतर महसूस करने लगी, और क़रीब तीन-चार मिनट बाद वह चल बसी। हमने उसके होंठों के सामने आइना रखा, लेकिन उस पर साँस लेने का कोई चिन्ह नहीं दिखायी दिया। मैं पेचोरिन को कमरे से बाहर ले आया और हम दोनों, बाँहें पीठ के पीछे बाँधे, चुपचाप किले की दीवार पर काफ़ी देर तक साथ-साथ इधर से उधर टहलते रहे। उसके चेहरे पर किसी भी तरह के भाव का कोई चिन्ह न पा कर मुझे बड़ा ग़ुस्सा आ रहा था, क्योंकि अगर उसकी जगह मैं होता तो दुख से मर गया होता। आख़िरकार वह एक जगह छाया में ज़मीन पर बैठ गया और रेत पर तिनके के कुछ चित्र-सा बनाने लगा। जब मैंने

उसे तसल्ली देने के लिए कुछ कहना शुरू किया किसी और मतलब से नहीं, बल्कि शिष्टाचार निभाने की गरज से, समझे आप तो जानते हैं, उसने नज़रें ऊपर उठायीं और हँस पड़ा... उस हँसी को सुन कर मेरी रीढ़ की हड्डी में ऊपर से नीचे एक सर्द कँपकँपी दौड़ गयी... मैं फ़ौरन मुड़ा और ताबूत का बन्दोबत करने चला आया।

"मैं मानता हूँ कि कुछ हद तक उधर से ध्यान हटाने के लिए मैंने ख़ुद को इस काम में व्यस्त रखा। ताबूत को मैंने एक महीन मलमल के टुकड़े से ढँक दिया, जो मेरे पास था; फिर उसे चेरकसी बनावट के चाँदी के गोटे से सजा दिया, जिसे पेचोरिन बेला के लिए कभी लाया था।

"अगली सुबह हमने उसे किले के बाहर नदी-तट पर उसी जगह के पास दफ़ना दिया, जहाँ वह आख़िरी बार बैठी थी; उसकी छोटी-सी क़ब्र अब सफ़ेद बबूल के पेड़ों और झड़बेरी की झाड़ियों से घिरी हुई है। मेरी इच्छा तो हुई थी कि क़ब्र पर सलीब लगा दूँ, लेकिन यह बड़ा बेढंगा दिखायी देता, क्योंकि आप जानते ही हैं, सब कुछ के बावजूद वह ईसाई नहीं थी..."

"पेचोरिन ने फिर क्या किया?" मैंने पूछा।

"काफ़ी दिनों तक वह बीमार-सा रहा, बेचारा; उसका वजन भी बहुत घट गया; लेकिन इसके बाद हम लोगों ने बेला के बारे में कभी कोई बात नहीं की। मैंने देखा कि इससे उसे तकलीफ़ पहुँचेगी; तो फिर भला मैं उसका ज़िक्र क्यों छेड़ता? क़रीब तीन महीने बाद उसे रेजिमेण्ट में जाने का हुक्म मिला, और वह ज्यॉर्जिया चला गया। तब से हम लोग एक-दूसरे से नहीं मिले हैं।... अरे हाँ, याद आया, अभी हाल ही में कोई कह तो रहा था कि वह रूस लौट आया है, हालाँकि मैंने सैनिक आदेशों में इस बात का उल्लेख नहीं देखा। यों भी आम तौर पर यहाँ ख़बरें पहुँचने में काफ़ी समय लग जाता है।"

इसके बाद, शायद उन दुखद स्मृतियों से अपना ध्यान हटाने के लिए, कप्तान ने इस विषय पर एक लम्बा-चौड़ा व्याख्यान शुरू कर दिया कि साल भर पुरानी ख़बरें सुनने से क्या-क्या नुकसान और असुविधाएँ होती हैं।

न तो मैंने उसे टोका और न उसकी बातों पर ध्यान ही दिया।

क़रीब घण्टे भर बाद फिर सफ़र शुरू करना सम्भव हो गया। बर्फ़ीला तूफ़ान थम चुका था, आसमान साफ़ हो गया, और हम फिर चल पड़े। रास्ते में, बातचीत के

रुख़ को फिर बेला और पेचोरिन की ओर मोड़ने की अपनी इच्छा को मैं दबा न सका।

"क्या आपको फिर कभी यह पता चला कि काज़बिच का क्या हुआ?" मैंने पूछा।

"काज़बिच? सचमुच! मुझे नहीं मालूम। हाँ, इतना मैंने ज़रूर सुना है कि हमारे मोरचे के दाहिने बाजू के शापसुगी कबीले में एक काज़बिच है; बड़ा ही दिलेर आदमी, जो हमेशा लाल बेश्मेत पहने, हमारी आग-उगलती गोलियों की बौछार में अपने घोड़े पर दुलकी चाल से चलता है और जब कोई गोली सनसनाती हुई उसके पास से निकल जाती है तो अतिरिक्त नम्रता से झुक कर सलाम करता है... लेकिन मुझे शक है कि यह वही काज़बिच है।"

मैक्सिम मैक्सिमिच और मैं कोबी में एक-दूसरे से विदा हुए, क्योंकि मैं डाक वाली घोड़े-गाड़ी से गया और उसके लिए अपने भारी साज-सामान के कारण मेरा साथ दे सकना कठिन था। उस समय हम लोगों ने कल्पना भी नहीं की थी कि हम फिर कभी मिलेंगे, लेकिन हम फिर मिले, और अगर आप चाहेंगे तो मैं उसके बारे में भी आपको बताऊँगा, लेकिन वह अपने आप में एक मुकम्मल दास्तान है... ख़ैर, यह तो आप मानेंगे ही कि जो भी हो, मैक्सिम मैक्सिमिच एक शानदार आदमी है, और आप के आदर और अदब के काबिल है। अगर आप इस बात को मानते हैं तो मैं समझूँगा, मुझे इस कहानी का भरपूर पुरस्कार प्राप्त हो गया है भले ही यह कहानी कुछ लम्बी क्यों न हो गयी हो।
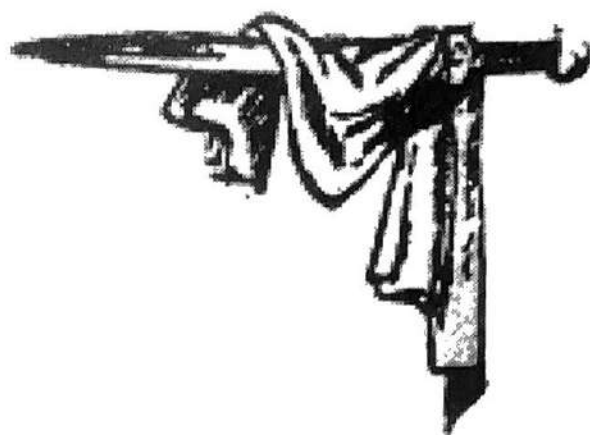
मैक्सिम मैक्सिमिच

मैक्सिम मैक्सिमिच से विदा लेने के बाद मैंने तेरेक और दर्याल दर्रों को ख़ासी तेज़ रफ़्तार से पार किया; काज़बेक में नाश्ता लिया, लार्स में चाय पी और तीसरे पहर भोजन के वक्त तक व्लादिकावकाज़ जा पहुँचा। न तो मैं आपको पहाड़ों के वर्णन सुना कर ऊबाऊँगा, न मुँह से बरबस निकल पड़ने वाले तारीफ़ या ताज्जुब से भरे अर्थहीन उद्‌गारों से; और न ऐसे रेखा-चित्रों से, जो कुछ नहीं सम्प्रेषित करते ख़ास तौर से उन लोगों को, जिन्होंने इस इलाके में कभी कदम नहीं रखा; आँकड़ों या ब्योरों से भरी टीका-टिप्पणियों का भी कोई अर्थ नहीं है, जिन्हें, मैं पक्के तौर पर जानता हूँ, कोई भी पाठक पढ़ने की ज़हमत नहीं उठायेगा।

मैं एक ऐसे होटल में ठहरा, जहाँ अमूमन सभी यात्री ठहरते थे और जहाँ इत्तफ़ाक से ऐसा एक भी आदमी नहीं था, जो आपको भुना हुआ तीतर या एक प्लेट गोभी का सूप ही पका कर दे सके, क्योंकि वहाँ काम करने वाले, अपाहिजों-जैसे तीन बैरे इस कदर मूर्ख थे या फिर इस कदर धुत्त रहते कि उन्हें कुछ भी समझा पाना और उनसे कोई काम करा पाना असम्भव था।

मुझे बताया गया कि अभी मुझे तीन दिन और यहाँ रुकना पड़ेगा, क्योंकि 'ओकाज़िया' येकातेरीनोग्राद से अभी तक नहीं आया था और इसलिए वापसी का सफ़र तय नहीं किया जा सकता था। कैसा ओकाज़िया है! लेकिन एक घटिया श्लेष का इस्तेमाल करके रूसी लोगों को कोई तसल्ली नहीं होती, इसलिए समय बिताने की गरज से मैंने मैक्सिम मैक्सिमिच से सुनी बेला की कहानी को काग़ज़ पर उतार लेने का फ़ैसला किया इस बात से बेख़बर कि यह कहानियों की एक लम्बी श्रृंखला की पहली कड़ी साबित होगी।

तो देखा आपने, किस तरह अपने आप में एक मामूली और छोटी-सी बात के

गम्भीर नतीजे निकल सकते हैं... लेकिन शायद आप नहीं जानते कि यह ओकाज़िया है कौन-सी बला? ओकाज़िया पैदल सिपाहियों के उस दस्ते को कहते हैं, जिसके साथ एक हल्की तोप होती है और जिसकी सुरक्षा में मुसाफ़िरों के कारवाँ, व्लादिकावकाज़ से येकातेरीनोग्राद के बीच, कबार्दा को पार करते हैं।

पहला दिन तो बड़ा ऊब-भरा और मनहूस गुज़रा, मगर दूसरे दिन तड़के ही होटल के अहाते में एक गाड़ी दाख़िल हुई। इसमें मैक्सिम मैक्सिमिच था। हमने पुराने दोस्तों की तरह एक-दूसरे को 'नमस्कार' किया और मैंने उसे अपने ही कमरे में ठहरने का सुझाव दिया। उसने ज़रा भी तकल्लुफ़ नहीं बरता, उलटे बड़े दोस्ताना अन्दाज़ में मेरे कन्धे पर हाथ मारा और उसका मुँह मुस्कराहट में कुछ ऐंठ-सा गया। अजीब आदमी था वह!

पाक-विद्या में मैक्सिम मैक्सिमिच की अच्छी पैठ थी, लिहाजा उसने एक शानदार तीतर भूना और ककड़ी की मसालेदार चटपटी चटनी तैयार की। मानना पड़ेगा, अगर वह न होता तो मुझे ठण्डे और बासी नाश्ते पर ही सन्तोष करना पड़ता। काखेतियन शराब की एक बोतल में हमें खाने की सादगी को नज़रअन्दाज़ करने में मदद दी। इसी वजह से हमें यह कमी भी नहीं अखरी कि खाने का एक दौर ही परोसा गया। खाना ख़त्म करने के बाद हमने अपने-अपने पाइप सुलगा लिये; मैं खिड़की के पास जा बैठा और वह अँगीठी के पास, जहाँ आग जल रही थी, क्योंकि दिन सर्द था और हवा में गलन और खुनकी। हम ख़ामोश बैठे पाइप पीते रहे। बातचीत करने को था भी क्या?... जो कुछ अपने बारे में दिलचस्प और बताने लायक था, वह सारा का सारा मुझे बता चुका था, और मेरे पास उसे सुनाने लायक कुछ था ही नहीं।

मैंने खिड़की के बाहर नज़रें दौड़ायीं। यहाँ पहुँच कर लगातार चौड़ी होती चली जाने वाली तेरेक नदी के किनारे-किनारे दूर तक, आड़े-तिरछे फैले हुए, अनगिनत छोटे-छोटे घरों की भीड़ दरख़्तों के बीच से दिखायी दे रही थी और दूर क्षितिज पर पहाड़ों की नीली, दाँतेदार दीवार के पीछे से काज़बेक पर्वत, अपना सफ़ेद बर्फ़ीला अमामा पहने, झाँकता दिखायी दे रहा था। मन ही मन उन पहाड़ों से विदा ली, सचमुच उन्हें छोड़ते हुए मुझे दुख हो रहा था।

हम लोग काफ़ी देर तक इसी तरह ख़ामोश बैठे रहे। ऊँची-ऊँची बर्फ़ीली चोटियों के पीछे सूरज डूब रहा था और घाटियों में दूधिया कुहरा निकल-निकल कर चारों

ओर फैसले लगा था। तभी हमें बाहर घण्टियों की टुनटुनाहट और कोचवानों के ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने की आवाज़ें सुनायी दीं। कई एक छकड़ें, जिनके ऊपर गन्दे आरमीनियाई लोग जमे हुए थे, अहाते में घुसे चले आये। उनके पीछे-पीछे एक ख़ाली बग्घी भी थी, जिसकी हल्की-फुल्की, आरामदेह, नाजुक और ख़ूबसूरत बनावट उसे स्पष्ट रूप से एक विदेशी सज-धज प्रदान कर रही थी। गाड़ी के पीछे-पीछे लम्बी मूँछों वाला एक आदमी, छोटी बाँहों वाला, सामने से खुला, तुर्की कोट पहने चला आ रहा था। उसके कपड़े साधारण ख़िदमतगार के मुकाबले काफ़ी अच्छे थे, लेकिन जिस ढंग से उसने अपने पाइप की राख झाड़ी और कोचवानों से चिल्ला कर बोला, उससे हमें उसकी हैसियत के बारे में कोई भ्रम या सन्देह नहीं रह गया। वह साफ़ ही किसी बिगड़े रईस का मुँह-लगा नौकर था किसी रूसी फ़िगारो जैसा। मैंने खिड़की से ही उसे आवाज़ दी :

"अरे भाई, ज़रा बताना, क्या यही ओकाज़िया है?" उसने गुस्ताख़ी-भरे अन्दाज़ में मेरी ओर देखा, गले में बँधा रूमाल दुरूस्त किया और दूसरी ओर मुड़ गया। उसकी बगल में ही चलते हुए एक अरमीनियाई ने मुस्करा कर उसकी जगह उत्तर दिया कि वह ओकाज़िया ही था और वापसी की यात्रा पर दूसरे दिन सुबह रवाना होगा।

"शुक्र है ख़ुदा का!" मैक्सिम मैक्सिमिच ने कहा, जो ठीक उसी समय खिड़की के पास आ खड़ा हुआ था। "कैसी शानदार बग्घी है!" उसने बग्घी को देख कर आगे जोड़ा, "शायद कोई बड़ा अफ़सर है, किसी तहकीकात के सिलसिले में तिफ़लिस जा रहा है। आप ख़ुद देख सकते हैं, उसे हमारे इन पहाड़ो की कोई जानकारी नहीं। ऊँ(हूँ, मेरे दोस्त, ये रास्ते तुम-जैसों के लिए नहीं हैं। कोई विलायती घोड़ा-गाड़ी भी उन धचकों को बर्दाश्त न कर पायेगी, जो इन रास्तों पर लगेंगे। न जाने कौन है... आइए ज़रा पता लगायें...."

हम बरामदे में निकल आये, जिसके दूसरे छोर पर बगल के कमरे का दरवाज़ा खुला हुआ था। वह ख़िदमतगार और कोचवान मिल कर सूटकेस और दूसरा सामान भीतर ले जा रहे थे।

"सुनो दोस्त," कप्तान ने उस नौकर से पूछा, "यह सुन्दर गाड़ी किसकी है? सचमुच, शानदार गाड़ी है।" नौकर बिना मुड़े ही होंठों में कुछ अस्पष्ट-सा बुदबुदाया

और एक बक्स के पट्टे खोलता रहा। यह मैक्सिम मैक्सिमिच को कहाँ गवारा होता! उस गुस्ताख़ नौकर का कन्धा थपथपाते हुए उसने कहा, "भले आदमी, मैं तुम्हीं से कह रहा हूँ, यह बग्घी..."

"होगी किसकी? मेरे मालिक की है।"

"और तुम्हारा मालिक कौन है?"

"पेचोरिन..."

"क्या कहा? पेचोरिन? या ख़ुदा! अच्छा, क्या वह कभी कॉकेशिया में भी तैनात रहा है?" मेरी आस्तीन को खींचते हुए मैक्सिम मैक्सिमिच जोश में बोल उठा। उसकी आँखें ख़ुशी से बेतरह चमकने लगीं।

"मेरा ख़याल है शायद रहे हों... लेकिन मुझे उनके साथ बहुत दिन नहीं हुए।"

"बस, बस, ठीक है। ग्रिगोरी अलेक्ज़ान्द्रोविच उसका नाम है, है न? हम दोनों एक-दूसरे से अच्छी तरह परिचित रहे हैं," यह कह कर उसने नौकर के कन्धे पर बेतकल्लुफ़ी से एक ऐसा हाथ जमाया कि बेचारा आदमी लड़खड़ा गया और गिरते-गिरते बचा।

"माफ़ करें साहब, आप रास्ता रोक रहे हैं," नौकर ने माथे पर त्योरियाँ चढ़ाते हुए कहा।

"मूर्खों की तरह मत बोलो यार! जानते नहीं, मैं तुम्हारे मालिक का कितना पुराना दोस्त हूँ। हम लोग साथ-साथ रहे हैं, समझे? अच्छा, वह इस वक्त कहाँ मिलेगा?"

नौकर ने बताया कि उसका मालिक कर्नल न के साथ खाना खाने और रात गुज़ारने के लिए पीछे रुक गया है।

"क्या रात में वह यहाँ नहीं आयेगा?" मैक्सिम मैक्सिमिच ने उतावलेपन से कहा, "अच्छा मेरे दोस्त, हो सकता है, तुम्हें ही किसी काम से उससे मिलने जाना पड़े? अगर ऐसा हो तो उससे कहना कि मैक्सिम मैक्सिमिच यहाँ आये हुए हैं, बस इतना बता देना, बाकी वह ख़ुद समझ लेगा...: मैं तुम्हें वोद्का के लिए एक वॉस्मीग्रिवेन्ना बख़्शीश में दूँगा..."

इस क्षुद्र-सी बख़्शीश की बात सुन कर नौकर ने पहले तो कुछ उपेक्षा और ऊँचाई का भाव दिखाया, लेकिन फिर मैक्सिम मैक्सिमिच के कहने के मुताबिक काम करना स्वीकार कर लिया।

"देख लेना, सुनते ही दौड़ा आयेगा," मैक्सिम मैक्सिमिच ने विजय-भरे स्वर में मुझसे कहा, "मैं उससे मिलने फाटक पर जाऊँगा। अफ़सोस, मैं इस न को नहीं जानता।"

मैक्सिम मैक्सिमिच फाटक के बाहर एक बेंच पर जा बैठा और मैं अपने कमरे में चला आया। सच कहूँ तो मैं ख़ुद भी काफ़ी उत्सुकता से इस पेचोरिन के आने की प्रतीक्षा कर रहा था, क्योंकि कप्तान की कहानी सुन कर हालाँकि मेरे मन में इस आदमी की कोई बहुत अच्छी तस्वीर नहीं बनी थी, फिर भी उसकी कुछ विशेषताएँ मुझे ज़रूर बेहद अजीबो-ग़रीब और अनोखी लगी थीं। क़रीब घण्टे भर बाद उन अपाहिज बैरों में से एक आदमी गर्म भाप छोड़ता समोवार और केतली ले कर आया।

"मैक्सिम मैक्सिमिच, थोड़ी-सी चाय पियेंगे?" मैंने खिड़की से ही पुकार कर पूछा।

"शुक्रिया, मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है।"

"थोड़ी-सी पी लेंगे तो अच्छा रहेगा। वैसी ही काफ़ी देर हो चुकी है और ठण्ड भी बढ़ने लगी है।"

"नहीं भाई, धन्यवाद।"

"ख़ैर, जैसी आपकी इच्छा।" मैंने कहा और अकेला ही बैठ कर चाय पीने लगा। क़रीब दस मिनट बाद ही वह भीतर चला आया।

"आपका ही कहना ठीक है," वह बोला, "थोड़ी-सी चाय पी लेना अच्छा रहेगा... बात यह है कि मैं उसका इन्तज़ार कर रहा था। उसके नौकर को गये तो काफ़ी देर हो गयी। लगता है, किसी ख़ास वजह से ही उसे रुकना पड़ा है।"

उसने जल्दी-जल्दी एक कप चाय सटकी, दूसरा कप लेने से साफ़ इनकार किया और वापस फाटक पर जा डटा; वह प्रकट ही परेशान और उद्विग्न-सा था। यह साफ़ था कि पेचोरिन की इस उपेक्षा से बेचारे बुड्ढे के दिल को ठेस लगी थी, ख़ासकर इसलिए भी कि अभी कुछ ही समय पहले वह ख़ासे तमतराक से उसके साथ अपनी दोस्ती का ज़िक्र मुझसे कर चुका था और सिर्फ़ एक घण्टा पहले तक उसे पक्का यकीन था कि उसका नाम सुनते ही पेचोरिन दौड़ा चला आयेगा।

अँधेरा हो चुका था जब मैंने फिर खिड़की खोली और मैक्सिम मैक्सिमिच को आवाज़ दे कर याद दिलाया कि आराम करने का वक्त हो चुका है। वह जवाब में कुछ

बुदबुदाया और मैंने फिर उससे भीतर चले आने का आग्रह किया, लेकिन उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

बेंच पर एक मोमबत्ती को जलता छोड़ कर मैं सोफे पर आ लेटा; अपना बरान कोट मैंने ओढ़ लिया और जल्द ही मुझे नींद आ गयी। मैं रात भर बड़े आराम से सोया रहता, अगर मैक्सिम मैक्सिमिच ने, काफ़ी रात गये भीतर आकर, मुझे जगा न दिया होता। अन्दर आ कर उसने अपना पाइप मेज़ पर फेंका और कमरे में इधर से उधर टहलने लगा, फिर अँगीठी के साथ कुछ खटर-पटर करता रहा। आख़िरकार थक-हार कर वह लेट गया, और काफ़ी देर तक खाँसता, थूकता और करवटें बदलता रहा।

"खटमल तंग करते हैं क्या?" मैंने पूछा।

"हाँ, खटमल हैं," उसने लम्बी सास ले कर जवाब दिया।

दूसरे दिन तड़के ही मेरी नींद खुल गयी, लेकिन मैक्सिम मैक्सिमिच मुझसे पहले ही उठ चुका था। मैंने उसे फाटक के पास रखी बेंच पर बैठा हुआ पाया।

"मुझे कमाण्डेण्ट से मिलने के लिए किले पर जाना है," उसने मुझसे कहा, "सो अगर इसी बीच पेचोरिन आ जाय, तो क्या आप मुझे बुला भेजेंगे?"

मेरे वादा करने पर वह यूँ जोश से भरा चला गया, जैसे उसके अंगों में फिर से जवानी की ताकत और फुर्ती भर गयी हो।

बड़ी ताज़ा और सुहावनी सुबह थी। पहाड़ों के ऊपर सुनहले बादलों के दल इस तरह इकट्ठे हो गये थे, जैसे बर्फ़ीली चोटियों की एक नयी कतार आसमान में लटकी हुई हो। फाटक के सामने एक बड़ा-सा चौक था और उसके दूसरे छोर पर बाज़ार लोगों से ठसाठस भरा हुआ था, क्योंकि उस दिन इतवार था। पीठ से बँधी, भोज-पत्र की टोकरियों में शहद के छत्ते भरे, नंगे पैर ओसेतियन लड़कों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया; लेकिन मैंने उन्हें भगा दिया, क्योंकि मैं कुछ इस तरह अपने ख़यालों में उलझा हुआ था कि उनकी ओर ध्यान देना मेरे लिए सम्भव नहीं था; दरअसल उस शरीफ़ कप्तान की व्यग्रता ने मुझे भी अपने घेरे में लेना शुरू कर दिया था।

मुश्किल से दस मिनट बीते होंगे कि वह आदमी, जिसकी हम प्रतीक्षा कर रहे थे, चौक के उस छोर पर दिखायी पड़ा। उसके साथ कर्नल न भी था, जो उसे होटल

तक पहुँचा कर किले की ओर चला गया। मैंने तत्काल होटल के उन अपाहिज बैरों में से एक को मैक्सिम मैक्सिमिच के लिए भगाया।

इस बीच पेचोरिन का ख़िदमतगार दौड़ा-दौड़ा उसके पास आया और उसने बताया कि घोड़े पल भर में तैयार हो जायेंगे। फिर उसने पेचोरिन को सिगार का एक डिब्बा पेश किया और कुछ ज़रूरी बातें समझ कर, उन्हें पूर करने चला गया। उसके मालिक ने एक सिगार सुलगाया, दो-एक बार जमुहाई ली और फाठक की दूसरी ओर बनी एक बेंच पर बैठ गया। अब मैं उसकी तस्वीर आपके सामने पेश करना चाहूँगा।

वह मँझोले कद का आदमी था; उसकी सीधी लचीली देह और चौड़े कन्धे शरीर की मज़बूत बनावट का पता देते थे, जो सफ़र की सारी तकलीफ़ों और मौसम के सभी परिवर्तनों को आसानी से झेल ले जाती है ऐसी बनावट, जिसे न तो शहरों का विलास-भरा जीवन कमज़ोर कर सका था, न ज बात की उथल-पुथल ही तोड़ पायी थी। उसके धूल-भरे मखमली कोट के बटन खुले थे; सिर्फ़ नीचे के दो बटन बन्द थे और कोट के खुले पल्ले से भीतर पहनी दूधिया सफ़ेद कमीज़ का काफ़ी बड़ा हिस्सा दिखायी दे रहा था, जिससे पला चलता था कि उसमें भद्र पुरुषों की आदतें पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं। उसके मैले दस्ताने जैसे ख़ास तौर से उसी के छोटे-छोटे अभिजात हाथों के लिए बनाये गये लगते थे और जब उसने एक हाथ का दास्ताना उतारा तो उसकी पतली-पतली सफ़ेद ऊँगलियों को देख कर मैं चकित रह गया।

उसकी चाल से लापरवाही और आलस टपकता था, लेकिन एक बात पर ज़रूर मैंने ध्यान दिया कि चलते समय वह अपनी बाँहें हिलाता-डुलाता नहीं था। यह निश्चित रूप से उसके घुन्ने चरित्र और भेद-भरे स्वभाव का चिन्ह था। लेकिन, यह मेरे अपने निरीक्षण पर आधारित मेरी व्यक्तिगत धारणाएँ हैं और मैं आपको इन्हें आँख बन्द करके मान लेने के लिए मजबूर नहीं करूँगा। जब वह आ कर बेंच पर धँस गया तो उसकी सीधी तनी काठी यूँ दोहरी हो गयी, जैसे उसके रीढ़ ही न हो; इस समय उसके सारे रंग-ढंग से ऐसा लगता था, मानो वह नसों की किसी कमज़ोरी का शिकार है। वह ठीक ऐसे बैठा था, जैसे बाल्ज़ाक के उपन्यासों की कोई तीस वर्षीय नख़रीली औरत नाचने के बाद थक कर गद्देदार आराम-कुर्सी पर पसर गयी हो।

पहली नज़र में वह मुझे तेईस वर्ष से अधिक का नहीं लगा, लेकिन बाद में मैं उसे तीस वर्ष का मानने को तैयार हो गया। उसकी मुस्कराहट में कुछ-कुछ बच्चों जैसा

भोलापन था; उसकी त्वचा औरतों जैसी मुलायम थी और उसके ऊँचे, गोरे माथे के इर्द-गिर्द उसके घुँघराले, हल्के-भूरे बाल भले लग रहे थे; हालाँकि काफ़ी ग़ौर से देखने पर उसके माथे पर बारीक झुर्रियों के उस सूक्ष्म ताने-बाने का पता लगता था, जो ग़ुस्से या किसी दूसरी मानसिक उत्तेजना के समय साफ़ उभर आता होगा। हालाँकि उसके बाल हल्के-भूरे थे, लेकिन मूँछें और भवें काली थीं यह आदमी के कुलीन होने का ऐसा चिन्ह है, जैसे ऊँची नस्ल के सफ़ेद घोड़े की पूँछ और अयाल का काला होना। इस तस्वीर को पूरा करने के लिए सिर्फ़ इतना और जोड़ूँगा कि उसकी नाक कुछ उठी हुई, दाँत दूधिया और चमकदार, और आँखें हल्की-भूरी थीं लेकिन उसकी आँखों के बारे में कुछ और भी बताना ज़रूरी है।

पहली बात तो यह कि हँसते समय उसकी आँखों में कोई हँसी नहीं झलकती थी। क्या आपको कभी किसी आदमी में यह अजीबो-ग़रीब विशेषता देखने का मौक़ा मिला है? यह विशेषता या तो दुष्ट स्वभाव या फिर निरन्तर बने रहने वाले गहरे विषाद की निशानी है। अधखुली पलकों के नीचे से उसकी आँखें फ़ॉसफ़ोरस की तरह चमकती रहती थीं। यह चमक उसके भीतर की आध्यात्मिक ऊष्मा या उर्वर कल्पना का प्रतिबिम्ब नहीं थी, बल्कि चमकते फ़ौलाद की-सी ठण्डी और चकाचौंध कर देने वाली कौंध थी। उसकी निगाह थोड़ी ही देर किसी पर टिकती, लेकिन वह बर्मे की तरह पैनी, कठोर और असह्य थी। उसका असर किसी बे-शऊर, ग़ैर-वाजिब सवाल की तरह बेचैन कर देने वाला था और अगर उसकी निगाह में तटस्थ बेपरवाही न होती, तो शायद यह चुनौती देती हुई-सी लग सकती थी।

शायद ये सब ख़याल मेरे दिमाग़ में इसलिए आये, क्योंकि मैं उसकी ज़िन्दगी के कुछ ब्योरे पहले ही से जानता था; सम्भव है, कोई दूसरा आदमी उसे देख कर बिलकुल भिन्न राय बनाता। लेकिन चूँकि आप उसके बारे में किसी दूसरे से कुछ जान नहीं पायेंगे, इसलिए आपको मेरे इस चित्रण से ही सन्तोष करना पड़ेगा। अन्त में इतना ज़रूरी कहूँगा कि कुल-मिला कर वह सचमुच सुन्दर था, और उसका चेहरा उन असाधारण चेहरों में से था, जिन्हें औरतें ख़ासतौर पर पसन्द किया करती हैं।

उसकी बग्घी में घोड़े जोत दिये गये थे, गाड़ी के बम से बँधी घण्टी टुनटुना रही थी और उसका ख़िदमतगार दो बार पेचोरिन को यह ख़बर दे गया था कि बग्घी तैयार खड़ी इन्तज़ार कर रही है, लेकिन अभी तक मैक्सिम मैक्सिमिच का कोई पता नहीं था। सौभाग्य से

पेचोरिन गहरी सोच में डूबा था; वह खोया-खोया-सा कोहेकाफ़ की नीली, आड़ी-तिरछी, दाँतिदार पर्वत मालाओं को एकटक देख रहा था, और लगता था कि उसे रवाना होने की कोई ख़ास जल्दी नहीं है। मैं अपनी बेंच से उठकर, फाटक पार करता हुआ उसके पास पहुँचा।

"अगर आप थोड़ी देर रुकने का कष्ट करें," मैंने उससे कहा, "तो आपको अपने एक पुराने दोस्त से मिल कर ख़ुशी होगी..."

"अरे हाँ, याद आया!" उसने फ़ौरन जवाब दिया, "कल ही मुझे उनकी ख़बर मिली थी। पर वे हैं कहाँ।"

मैंने चौक की ओर निगाह दौड़ायी और देखा कि मैक्सिम मैक्सिमिच बेतहाशा हमारी ओर भागा चला आ रहा था... कुछ ही मिनटों में वह हमारे पास आ पहुँचा! वह साँस भी मुश्किल से ले पा रहा था... पसीने की बूँदें उसके चेहरे पर बह रही थीं; उसकी टोपी के नीचे से निकल कर खिचड़ी बालों की नम लटें उसके माथे और चेहरे पर चिपक गयी थीं और उसके घुटने काँप रहे थे। वह अपनी बाँहें पेचोरिन के गले में गिर्द डालने ही वाला था कि पेचोरिन ने लापरवाही और कद्रे सर्द अन्दाज़ में अपना हाथ आगे बढ़ा दिया; हालाँकि उसके होंठों पर एक दिलकश मुस्कान थी। पेचोरिन के इस बरताव से पल भर के लिए तो कप्तान हतप्रभ-सा खड़ा रह गया, फिर उसने उसके बढ़े हुए हाथ को बड़ी आतुरता से अपने दोनों हाथों में पकड़ लिया। अभी तक उसके मुँह से कोई शब्द नहीं निकल पा रहा था।

"वाकई ख़ुशी की बात है, प्यारे मैक्सिम मैक्सिमिच! कैसे हो तुम? क्या हाल-चाल हैं?" पेचोरिन ने पूछा।

"और तुम..." बेचारे बुड्ढे ने हकलाते हुए कहा। उसकी आँखों में आँसू छलछला आये थे, "कितना अर्सा हो गया हमें मिले... आह, पूरा युग बीत गया... लेकिन तुम जा किधर रहे हो?"

"फ़ारस की ओर... शायद उससे भी आगे..."

"अभी तुरत तो नहीं जा रहे? थोड़ी देर रुकोगे नहीं? कितने लम्बे अर्से बाद हमने एक-दूसरे को देखा है..."

"मुझे अभी ही जाना होगा मैक्सिम मैक्सिमिच," उसने जवाब दिया।

"या ख़ुदा, ऐसी भी क्या जल्दी है? कितनी सारी बातें मुझे तुमसे कहनी हैं! कितना कुछ तुमसे पूछना है!... ख़ैर, और क्या हाल-चाल हैं? फ़ौज से रिटायर हो

गये न? क्यों? फिर अब तक क्या करते रहे?"

"ज़िन्दगी से जी भर कर ऊबता रहा हूँ," पेचोरिन ने मुस्करा कर कहा।

"तुम्हें याद है, हम लोगों ने किले में साथ-साथ कैसे दिन गुज़ारे थे? शिकार के लिए कैसी शानदार जगह थी, थी न? तुम शिकार के पीछे कितना पागल रहा करते थे?... बेला की याद है तुम्हें!"

पेचोरिन का चेहरा कुछ फीका पड़ गया और उसने अपना मुँह दूसरी ओर घुमा लिया।

"हाँ, याद है," जान-बूझ कर जमुहाई-सी लेते हुए, लगभग उसी साँस में उसने कहा।

मैक्सिम मैक्सिमिच ने उससे दो-एक घण्टे और ठहरने का आग्रह किया।

"हम लोग आज ज़रा जम कर बढ़िया खाना खायेंगे," उसने कहा, "मेरे पास दो तीतर हैं और यहाँ की काखेतियन शराब का तो कहना ही क्या?... ज्यॉर्जिया जैसी तो नहीं, फिर भी यहाँ की सबसे अच्छी शराब है। और फिर हम गप-शप करेंगे... तुम अपने सेण्ट पीटर्सबर्ग के प्रवास की बातें बताना, क्यों, कैसा रहेगा?"

"प्यारे मैक्सिम मैक्सिमिच, मेरे पास सचमुच कुछ भी बताने लायक नहीं है। और अब मैं तुमसे विदा लूँगा, क्योंकि मुझे अब चल देना है.. ज़रा जल्दी है... तुम्हारी बड़ी मेहरबानी है कि तुम मुझे अभी तक भूले नहीं।" बुड्ढे का हाथ अपने हाथ में लेते हुए उसने कहा।

बुड्ढे की भवें सिकुड़ गयीं। उसे दुख तो हुआ ही, काफ़ी चोट भी पहुंची, हालाँकि अपने सदमे को छिपाने की उसने भरसक कोशिश की।

"भूला नहीं!" वह बुदबुदाया, "नहीं, मैं कुछ भी नहीं भूला। खैर... छोड़ो... फिर भी मैंने यह नहीं सोचा था कि हमारी मुलाकात इस तरह होगी।"

"अरे अब छोड़ो भी, कैसी बातें करते हो," पेचोरिन ने बड़े दोस्ताना अन्दाज़ में उसे बाँहों में भरते हुए कहा, "मैं तो नहीं समझता कि मैं बदल गया हूँ। और फिर, इससे बचा भी तो नहीं जा सकता! हम सभी की किस्मत अपने अलग-अलग रास्तों पर बढ़ते चले जाने की है। ईश्वर जाने, हम कभी फिर मिल भी पायेंगे या नहीं!" यह उसने गाड़ी में चढ़ते-चढ़ते कहा। उसका कोचवान लगामें सँभालने लगा था।

"ज़रा रुको, बस एक मिनट!" बग्घी का दरवाज़ा पकड़ते हुए मैक्सिम मैक्सिमिच सहसा ज़ोर से बोल उठा, "मेरे दिमाग़ से उतर ही गया था... तुम्हारे काग़ज़ अभी तक मेरे पास रखे हैं ग्रिगोरी अलेक्जान्द्रोविच... साथ-साथ लिये घूमता रहा हूँ... सोचा था, तुमसे ज्यॉर्जिया में मुलाकात होगी, या ख़याल तो सपने में भी नहीं आया था कि भगवान हमें यहीं मिला देगा... इन काग़ज़ों का मैं क्या करूँ?"

"जो तुम्हारा जी चाहे," पेचोरिन ने जवाब दिया, "अच्छा, अलविदा।"

"तो तुम फ़ारस को चल दिये?... कब तक लौटने का इरादा है?" मैक्सिम मैक्सिमिच ने पीछे से पुकार कर पूछा।

तब तक बग्घी कुछ दूर जा चुकी थी, लेकिन पेचोरिन ने इस तरह हाथ हिलाया, जैसे कह रहा हो, मुझे शक है कि मैं लौटूँगा भी, और ऐसी कोई वजह है भी नहीं, जिसके लिए मैं वापस आऊँ।'

बग्घी के दूर निकल जाने पर, जब घण्टी की टुनटुनाहट और सड़क की पथरीली सतह पर पहियों की खड़खड़ाहट धीरे-धीरे हवा में विलीन हो गयी, तो भी काफ़ी देर तक बेचारा बुड्ढा, अपने ख़यालों में गुम, उसी जगह चिपका खड़ा रहा।

"ठीक है!" आख़िरकार उसने बेपरवाही और उदासीनता की मुद्रा बनाये रखने की भरसक चेष्टा करते हुए कहा, हालाँकि निराशा के आँसू अब भी उसकी आँखों में छलछला रहे थे, "हम दोस्त तो ज़रूर थे, लेकिन दोस्ती है ही क्या आजकल? मैं उसका लगता ही क्या हूँ? न तो मैं अमीर हूँ, न कोई बड़े ओहदे वाला अफ़सर! और फिर, मैं काफ़ी बूढ़ा भी तो हो चुका हूँ। सेण्ट पीटर्सबर्ग के प्रवास ने उसे कैसा ख़ुद-परस्त छैल-छबीला बना दिया है! ज़रा उस बग्घी, ढेरों असबाब और उस गुस्ताख़ ख़िदमतगार को तो देखा!' उसने व्यंग्य से मुस्कराते हुए कहा।

"अच्छा, आप ही बताइए," उसने मेरी ओर मुड़ कर बात ज़ारी रखी, "इस सबके बारे में आपका क्या ख़याल है? कौन-सा शैतान अब उसे फ़ारस की तरफ़ घसीटे लिये जा रहा है? अजीब है न? क्यों? हालाँकि मैं तो शुरू से ही जानता था कि वह एक अजीब-सा मनमौजी और असन्तुलित किस्म का आदमी है, जिस पर भरोसा नहीं किया जा सकता। फिर भी अफ़सोस होता है कि उसका ऐसा बुरा अंजाम हो... पर जैसा कि आप देख ही सकते हैं, किया भी क्या जा सकता है? मैंने तो हमेशा कहा है कि पुराने दोस्तों को भुला देने वालों से कभी किसी अच्छी बात की उम्मीद नहीं

रखी जा सकती।"

यह कह कर अपनी उद्विग्नता और सदमे को छिपाने के लिए उसने मुँह दूसरी ओर फेर लिया और अहाते में अपनी गाड़ी के पास जा कर इधर से उधर, गाड़ी के पहियों की जाँच करने का नाटक करते हुए, टहलने लगा; मगर उसकी आँखों में आँसू निरन्तर छलछला आते रहे।

"मैक्सिम मैक्सिमिच," मैंने उसकी ओर बढ़ते हुए पूछा, "वे कौन-से काग़ज़ थे, जो पेचोरिन आपके पास छोड़ गया है?"

"ईश्वर जाने! कुछ विवरण-शिवरण होंगे या कुछ और बकवास।"

"आप उनका क्या करने जा रहे हैं?"

"ऐं! क्या करूँगा? करूँग क्या उनके कारतूस बनवा लूँगा।"

"बेहतर होगा, अगर वे काग़ज़ आप मुझे ही दे दें।"

उसने विस्मय से मेरी ओर देखा, मुँह ही मुँह में कुछ बुदबुदाया और फिर गाड़ी से अपना सूटकेस खींच कर उसमें कुछ छान-बीन करने लगा। उसने एक नोटबुक निकाली और उसे नफ़रत और उपेक्षा से ज़मीन पर फेंक दिया। फिर दूसरी, तीसरी, और आख़िरकार दसवीं का अंजाम भी पहली के जैसा ही हुआ। बेचारे बुड्ढे की नाराज़गी में कुछ अजीब बचपना-सा था और मुझे हँसी के साथ-साथ उसके लिए बेहद दुख भी हो रहा था।

"यही है सारा खजाना," उसने कहा, "आपको इस खोज के लिए बधाई देता हूँ।"

"और मैं इनका जो चाहूँ सो कर सकता हूँ?"

"आप चाहें तो अखबारों में छपा डालें, मेरी बला से! हाँ, सचमुच! मुझे क्या परवाह है! क्या मैं उसका दोस्त हूँ या रिश्तेदार? ठीक है, कभी हम एक ही छत के नीचे काफ़ी समय तक साथ रहे थे, मगर इस तरह तो मैं न जाने कितने लोगों के साथ वक्त गुज़ार चुका हूँ।"

मैंने वे सारे काग़ज़ात बटोरे और इससे पहले कि कप्तान अपना इरादा बदल लेता, मैं वे सारी नोटबुकें उठा कर ले आया। कुछ देर बाद ही हमें ख़बर मिली कि ओकाजिया घण्टे-भर में रवाना हो जायेगा और मैंने अपनी गाड़ी में घोड़े जोतने का हुक्म दे दिया। मैं अपना टोप पहन रहा था, जब कप्तान मेरे कमरे में आया। ऐसा नहीं

लगता था कि वह सफ़र की कोई तैयारी कर रहा है; उसकी मुद्रा में कुछ अजीब-सा निरूत्साह, ठण्डापन और खिंचाव था।

"आप नहीं चलेंगे क्या मैक्सिम मैक्सिमिच?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"मैं अभी कमाण्डेण्ट से नहीं मिल पाया हूँ और मुझे उसको कुछ निहायत ज़रूरी सरकारी सामान सौंपना है।"

"लेकिन क्या आप उससे मिलने नहीं गये थे?"

"हाँ, गया तो था," उसने हकलाते हुए जवाब दिया, "लेकिन तब वह किले में नहीं था और मैंने उसके आने का इन्तज़ार नहीं किया।"

मैं समझ गया, उसका मतलब क्या था। शायद ज़िन्दगी में पहली बार, इस बेचारे बुड्ढे ने, सरकारी भाषा में कहें तो 'अपनी निजी सुविधा के लिए,' कर्त्तव्य की अवहेलना की थी, और उसका यह इनाम उसे मिला था!

"मुझे बड़ा अफ़सोस है मैक्सिम मैक्सिमिच," मैंने कहा, "सचमुच, बहुत ही दुख है कि हमें इतनी जल्दी अलग होना पड़ रहा है।"

"हम जैसे मूरख दकियानूसी बुड्ढे आप जैसे तेज़-तर्रार और गर्वीले नौजवानों का साथ कैसे निभा सकते हैं, जो तरह-तरह के आदमियों से मिलने-जुलने के आदी हों? यहाँ, चारों ओर सनसनाती चेरकस गोलियों के बीच तो आप लोग हमारा साथ चाहे जैसे-तैसे सहन कर भी लें... लेकिन अगर कभी बाद में कहीं मिलने का मौक़ा आये तो हम जैसों से हाथ मिलाने में भी आपको शर्म आयेगी।"

"कैसी बातें कर रहे हैं मैक्सिम मैक्सिमिच! कम-से-कम मैं तो इस आक्षेप और फटकार के लायक नहीं हूँ।"

"मैं तो एक आम बात कर रहा था, आप जानते हैं। ख़ैर, हर हाल में मेरी कामना है, आप सुखी रहें और आपकी यात्रा सुखद हो।"

हम बुझे-बुझे-से, कुछ सर्द अन्दाज़ में विदा हुए। अच्छा-भला मैक्सिम मैक्सिमिच अब एक ज़िद्दी और चिड़चिड़े कप्तान में बदल चुका था। क्यों भला? सिर्फ़ इसलिए

कि पेचोरिन ने बेध्यानी में या फिर किसी और वजह से महज़ अपना हाथ बढ़ा दिया था, जबकि उसका पुराना मित्र उसे गले से लगा लेना चाहता था।

किसी नौजवान की सबसे ख़ूबसूरत और सुहानी उम्मीदों और ऊँचे सपनों को चूर-चूर होते देखना अफ़सोसनाक है; जिन उज्ज्वल भ्रमों और मुग़ालतों के चश्मे से उसने आदमियों की कारगुजारियों और भावनाओं को निरखा था, उन्हें छार-छार होते देखना दुखद है; हालाँकि तब भी यह उम्मीद बनी रहती है कि वह अपनी पुरानी ग़लतफ़हमियों को नये मुग़ालतों से बदल लेगा, जो उतने ही अस्थायी होंगे, हालाँकि उतने ही मधुर भी। लेकिन मैक्सिम मैक्सिमिच की उम्र में पहुँच कर किसी के सामने अपने सपनों, अपनी आशाओं और ग़लतफ़हमियों को बदलने के लिए कौन-सी चीज़ बाकी रह जाती है? न चाहते हुए भी, दिल सख़्त होता चला जायेगा और आत्मा मुरझाती चली जायेगी...

बहरहाल, मैं अकेला ही रवाना हो गया।

पेचोरिन की डायरी
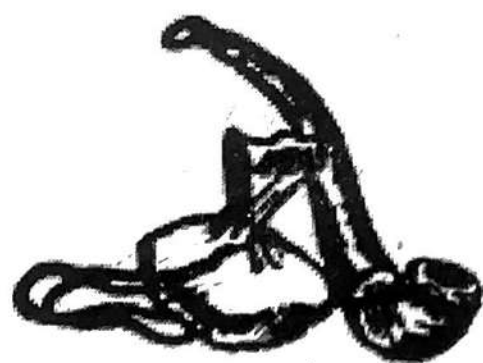
आमुख

हाल ही में मुझे यह ख़बर मिली कि फ़ारस से अपनी वापसी के बाद ही पेचोरिन की मौत हो गयी थी। इस ख़बर से मुझे बहुत ख़ुशी और तसल्ली हुई; क्योंकि इससे मुझे पेचोरिन के इस संस्मरणों को प्रकाशित करने का पूरा-पूरा अधिकार मिल गया; और मैंने ख़ुशी से किसी और की रचना पर अपना नाम दे देने के इस सुअवसर का पूरा फ़ायदा उठाया। ऐसे सहज-स्वाभाविक और निष्कपट छल के लिए भगवान न करे, पाठक मुझे कसूरवार ठहरायें।

अब मैं संक्षेप में यह बताना चाहता हूँ कि वह कौन-सी वजह थी, जिसने मुझे एक अपरिचित-अनजान आदमी के बेहद व्यक्तिगत राज लोगों के सामने इस तरह खोल कर रख देने के लिए उकसाया। अगर मैं उसका दोस्त होता, तो यह समझ में आ सकता था; क्योंकि एक सच्चे दोस्त की फ़रेब-भरी हिमाकत को तो हम सब आसानी से जान-समझ सकते हैं; लेकिन मैंने तो उसे सिर्फ़ एक बार, क्षण भर के लिए ही, देखा था; और इसलिए मेरे दिल में उसके प्रति वह समझायी न जा सकने वाली नफ़रत भी नहीं हो सकती, जो दोस्ती के मुखौटे के नीचे छिपी, सिर्फ़ अपने प्रिय पात्र पर मौत या दुर्भाग्य की छाया पड़ने की प्रतीक्षा करती रहती है, ताकि मौक़ा मिलते ही उसके सिर पर सहानुभूति, परामर्श, तरस और उपहास के ओलों की बौछार कर सके।

पेचोरिन के इन संस्मरणों को दोबारा पढ़ते हुए मैं कायल हो गया कि अपनी कमज़ोरियों और बुराइयों को ऐसी बेबाकी और निष्ठुरता से उघाड़ते हुए वह ज़रूर ईमानदारी और सच्चाई से काम ले रहा होगा। किसी भी मानवी आत्मा की कहानी, भले ही वह कितनी क्षुद्र और नगण्य क्यों न हो, पूरे राष्ट्र की कहानी से कम दिलचस्प और शिक्षाप्रद नहीं होती, ख़ासतौर से अगर वह किसी पुख़्ता दिमाग़ की सोच और

निरीक्षण का फल हो और दया या आश्चर्य पैदा करने के नुमाइशी उद्देश्य से न लिखी गयी हो। रूसो की "आत्म-स्वीकृतियों' की एक बहुत बड़ी खामी ही यह है कि उन्हें वह अपने दोस्तों को पढ़ कर सुनाया करता था।

तो इस प्रकार यह शुद्ध परोपकार की इच्छा ही थी, जिसने मुझे अनायास हासिल होने वाली इस डायरी के कुछ हिस्सों को प्रकाशित करने के लिए विवश किया। हालाँकि मैंने सभी व्यक्तियों और स्थानों के नाम बदल दिये हैं, फिर भी जिन लोगों का ज़िक्र इसमें आया है, वे निःसन्देह ख़ुद को पहचान लेंगे; और हो सकता है कि जो आदमी अब इस दुनिया में है ही नहीं, उसके जिन कृत्यों को वे कभी माफ़ नहीं कर पाये, उनकी सफ़ाई या औचित्य उन्हें इसमें मिल जाय; क्योंकि जो चीज़ हमारी समझ में आ जाती है, उसे हम प्रायः हमेशा क्षमा कर देते हैं।

इस पुस्तक में मैंने पेचोरिन की डायरी के सिर्फ़ उन्हीं हिस्सों को शामिल किया है, जो उसके कॉकेशिया-प्रवास से सम्बन्धित हैं। इसके बाद भी मेरे पास एक अच्छी-ख़ासी मोटी नोटबुक बच गयी है, जिसमें उसने अपने पूरे जीवन की कहानी दर्ज की है। किसी-न-किसी दिन वह भी लोगों की राय, आलोचना और फ़ैसले के लिए पेश की जायेगी; लेकिन फ़िलहाल कई महत्वपूर्ण कारणों से इस भारी ज़िम्मेदारी को अपने ऊपर लेने का जोखिम मैं नहीं उठा पा रहा हूँ।

कुछ पाठक शायद यह जानना चाहेंगे कि पेचोरिन के चरित्र के बारे में मेरी निजी राय क्या है। मेरा जवाब इस पुस्तक के नाम में ही खोजा जा सकता है।

"लेकिन यह तो बड़ा कटु और तीखा व्यंग्य है!" सम्भव है वे कहें। मैं नहीं जानता।

तमन

समुद्र के किनारे बसे, रूस के सभी कस्बों में तमन सबसे नाकारा और गया-गुज़रा कस्बा है। एक बार मैं वहाँ भूख से मरते-मरते बचा और घेलुए में लगभग डुबा ही दिया गया था। डाक-गाड़ी से काफ़ी रात गये मैं वहाँ पहुँचा था। कोचवान ने अपनी थकी-हारी त्रॉयका कस्बे में मुहाने पर मौजूद, एकमात्र पक्की इमारत के फाटक पर जा रोकी। घण्टियों की टुनटुनाहट सुन कर पहरे पर तैनात सन्तरी, जो काले सागर का रहने वाला कज़ाक था, ऊँघ से सहसा चौंक कर जागा और उजड्डपने से दहाड़ कर बोला, 'कौन है रे?' तभी एक कज़ाक हवलदार और स्थानीय पुलिस का एक सिपाही इमारत से बाहर निकले। मैंने उन्हें बताया कि मैं एक अफ़सर हूँ और सरकारी काम से मोर्चे की यूनिट तक जा रहा हूँ और मैंने उनसे रात को ठहरने का इन्तज़ाम कर देने के लिए कहा।

पुलिस का सिपाही हमें पूरे कस्बे में लिये घूमता रहा; मगर एक भी बँगला ख़ाली नहीं मिला। रात ठण्डी थी। यात्रा के कारण मैं लगातार तीन रातों से सो न पाया था और थकान से चूर-चूर होने के कारण बेहद चिड़चिड़या हुआ और आपे से बाहर होने को था।

"जहाँ चाहो, वहाँ ले चलो मुझे, बदमाश!" मैं चिल्लाया, "जहन्नुम ही में सही, अगर ऐसी इच्छा हो; जहाँ कम-से-कम ठहरने की जगह तो मिले।"

"अब सिर्फ़ एक जगह और बची है," सिर का पिछला हिस्सा खुजाते हुए सिपाही ने जवाब दिया, "मगर हुज़ूर को वह जगह पसन्द नहीं आयेगी। वहाँ अजीब-अजीब चीज़ें होती रहती हैं।"

उसकी अन्तिम बात का सही मतलब समझ पाने में असफल होकर, मैंने उसे वहीं चलने को कहा; और टुटियल बाड़ों की पाँत के साथ-साथ चलती हुई, कीचड़-

भरी गलियों में काफ़ी देर तक भटकते-फिरने के बाद आख़िरकार हम समुद्र के किनारे बनी एक छोटी-सी झोंपड़ी के सामने जा रुके।

पूरा चाँद मेरे इस भावी निवास की सफ़ेद दीवारों और नरकुलों से बने छप्पर को रोशन कर रहा था। अनगढ़ पत्थरों की बेढंगी दीवार से घिरे हुए आँगन में इससे भी ज़्यादा पुरानी और जर्जर, छोटी और गयी-गुज़री, एक और टेढ़ी-तिरछी झोंपड़ी थी। झोंपड़ी की दीवार से ठीक नीचे, एक ऊँचा चट्टानी कगार, समुद्र में सीधा गिरता चला गया था; और दूर नीचे, गहरी नीली लहरें, लगातार गरजती हुई, तट से टकरा रही थीं। बेचैन और चंचल, लेकिन अपनी मर्यादा में बँधे समुद्र पर चन्द्रमा अपनी शान्त निगाहें डाल रहा था और उसकी रोशनी में तट से काफ़ी दूर, लंगर डाले तिरते हुए, दो जहाज मुझे दिखायी दे रहे थे। क्षितिज की फीकी पृष्ठ-भूमि में उनकी काली रस्सियाँ मकड़ी के निश्चल गतिहीन जालों-सी लग रही थीं।

मोर्चे की टुकड़ी का एक कज़ाक सिपाही मेरे अर्दली का काम कर रहा था। अपना सूटकेस गाड़ी से उतार लाने और कोचवान को विदा करने का हुक्म उसे देते हुए, मैंने दरवाज़ा खटखटाया, तब भी कोई उत्तर नहीं आया। इसका क्या मतलब हो सकता था? आख़िरकार, एक चौदह-पन्द्रह बरस का लड़का ड्योढ़ी में नमूदार हुआ।

"इस घर का मालिक कहाँ है?"

"मालिक नहीं।"

"क्या कहा? कोई मालिक ही नहीं है?"

"ना, कोई नहीं।"

"और मालकिन?"

"कस्बे में गयी है।"

"तो फिर मेरे लिए दरवाज़ा कौन खोलेगा?" मैंने दरवाज़े को ठोकर लगाते हुए कहा। दरवाज़ा ख़ुद ब ख़ुद खुल गया और झोंपड़ी से सील-भरी बदबू का एक झोंका आया। मैंने गन्धक के मसाले वाली माचिस जलायी और उसे लड़के के चेहरे के पास ले गया। माचिस की रोशनी में मुझे दो सफ़ेद आँखें दिखायी दीं। वह अन्धा था जन्म

से ही बिलकुल अन्धा! अपने सामने उस लड़के को ख़ामोश निश्चल खड़ा पा कर, मैंने ग़ौर से उसके चेहरे को देखा।

मैं माने लेता हूँ कि सभी अन्धे-भैंगे, गूँगे-बहरे, लँगड़े-लूले, कुबड़े या ऐसे ही दूसरी तरह के लोगों के ख़िलाफ़, मेरे दिल में शुरू ही से प्रबल पूर्वाग्रह रहा है। मैंने यह देखा और पाया है कि आदमी की बाहरी शक्ल-सूरत और रूप-रंग से उसकी आत्मा का एक अजीब-सा रिश्ता है; मानो किसी अंग के नष्ट हो जाने पर, उसकी आत्मा भी एहसास की ताकत को कोई हिस्सा खो बैठती है।

सो मैंने उस अन्धे लड़के के चेहरे को नज़दीक से जाँचा, लेकिन आँखों से रहित एक चेहरे पर भला मैं पढ़ ही क्या सकता था? काफ़ी देर तक, सहज और अनायास उमड़ती दया से, मैं उसकी ओर देखता रहा; तभी उसके पतले-पतले होंठों पर एक हल्की-सी मुस्कान थिरक गयी, जिससे मुझ पर जाने क्यों बहुत बुरा असर पड़ा। बिजली की तेज़ी से यह सन्देह मेरे दिमाग़ में कौंध गया कि वह सचमुच उतना अन्धा नहीं था, जितना कि वह दिखता था और मैं अपने आपको समझाने की असफल कोशिश करता रहा कि मोतिया-बिन्द का ढोंग या नकल करना आसान नहीं है। और फिर अपनी आँखों में मोतिया-बिन्द कोई बनाने ही क्यों लगा? फिर भी मेरा शक दूर न हुआ, क्योंकि मैं अक्सर पूर्व-निश्चित धारणाएँ बना लिया करता हूँ।

"तुम क्या मालिक के लड़के हो?" आख़िरकार मैंने उससे पूछा।

"नहीं।"

"तब आख़िर कौन हो?"

"अनाथ, एक ग़रीब अनाथ।"

"क्या मालकिन का कोई लड़का-बच्चा है?"

"नहीं। एक लड़की थी, सो वह भी तातार के साथ समुद्र-पार भाग गयी।"

"कैसा तातार?"

"ख़ुदा जाने कैसा तातार! क्रीमिया का तातार था, शायद केर्च का कोई मल्लाह।"

मैं झोंपड़ी में दाख़िल हुआ। दो बेंचे, एक मेज़ और चूल्हे के पास रखा एक विशाल बक्सा वहाँ कुल इतना ही सामान था। दीवारों पर एक भी धार्मिक चित्र या मूर्ति नहीं थी जो मुझे एक अशुभ चिन्ह लगा। एक टूटी हुई खिड़की से समुद्री हवा

के झोंके भीतर आ रहे थे। अपने सूटकेस से मैंने मोमबत्ती का एक छोटा-सा, बचा हुआ टुकड़ा निकाला और उसे जला कर अपना सामान ठीक-से सजाने लगा। अपनी तलवार और बन्दूक मैंने एक कोने में खड़ी की, पिस्तौलें मेज़ पर रखीं और लबादा एक बेंच पर फैला दिया। दूसरी बेंच पर मेरे कज़ाक अर्दली ने अपना लबादा फैला दिया था। वह तो दस मिनट में खर्राटे भरने लगा, लेकिन मैं सो नहीं पाया? सफ़ेद आँखों वाला वह लड़का अँधेरे में मेरी आँखों के सामने तिरता रहा।

इसी तरह क़रीब एक घण्टा गुज़र गया। चाँद खिड़की में झाँक रहा था और चाँदनी का एक पतला-सा शहतीर झोंपड़ी के कच्चे फ़र्श पर खेल रहा था। अचानक एक छाया फ़र्श की उस उजली पट्टी को तीर की तरह काटती हुई गुज़र गयी। मैंने उठ कर खिड़की के बाहर झाँका। कोई फिर दौड़ता हुआ उधर से गुज़रा और ग़ायब हो गया। भगवान जाने कहाँ। यह तो सम्भव नहीं लगता था कि वह आदमी उस खड़े चट्टानी कगार पर भागता हुआ तट पर उतर गया होगा। लेकिन इसके सिवा कोई और जगह थी भी नहीं, जहाँ वह जा सकता। मैं फिर उठा, बेश्मेत पहना, छुरे वाली पेटी कमर से बाँधी और दबे-पाँव झोंपड़ी के बाहर निकल आया। वह अन्धा लड़का मेरी तरफ़ चला आ रहा था। मैं फ़ौरन बाड़ से सट गया और वह पक्के, लेकिन सावधान, कदमों से चलता हुआ आगे निकल गया। उसकी बगल में एक गठरी दबी थी। घाट की ओर मुड़ कर, वह एक सँकरे, ढालू रास्ते से नीचे उतर चला। 'अन्धे को मिले दृष्टि और बहरे को सुनायी दे,' मैंने मन ही मन दुहराया और इतना क़रीब रहते हुए उसका पीछा करने लगा कि वह आँख से ओझल न हो जाय।

इस बीच बादल अपने आँचल में चाँद को घेरने लगे और समुद्र से गहरी धुन्ध उठ-उठ कर छाने लगी। इस धुन्ध की वजह से तट के सबसे पास वाले जहाज के पीछे लगी बत्ती भी मुश्किल से ही नज़र आ रही थी। तट पर उन बड़ी-बड़ी लहरों का फेन चमक रहा था, जो मानो किसी भी क्षण पूरे तट को डुबाने की धमकी दे रही थीं। उस तेज़ ढलान पर मुश्किल से रास्ता खोज कर उतरते हुए मैंने देखा, वह अन्धा लड़का रुका, फिर दाहिनी ओर घूम गया और पानी के किनारे-किनारे इतने निकट से चलने लगा कि लगता था, लहरें अभी उसे दबोच लेंगी और दूर, समुद्र की गहराई में, खींच ले जायेंगी। लेकिन जिस आत्म-विश्वास और भरोसे के साथ वह गड्ढों से

बचता हुआ, एक पत्थर से दूसरे पत्थर पर पैर रखता, बढ़ा चला जा रहा था, उससे यह साफ़ ज़ाहिर था कि वह उस यात्रा पर पहली बार नहीं आया। आख़िरकार वह रुक गया, जैसे कुछ सुनने की चेष्टा कर रहा हो, फिर गठरी अपने आप रख कर धरती पर बैठ गया। एक ऊँची-सी खड़ी चट्टान की आड़ में छुप कर मैं उसकी हरकतों पर ध्यान से निगाह रखने लगा। कुछ मिनटों के बाद, सफ़ेद कपड़ों में लिपटी एक आकृति, दूसरी ओर से निकलकर, लड़के के पास आयी और उसकी बगल में बैठ गयी। हवा पर उड़ कर उनकी बातचीत के कुछ टुकड़े मुझ तक पहुँच रहे थे।

"क्या ख़याल है तुम्हारा, सूरदास?" एक ज़नाना आवाज़ ने कहा, "झक्कड़ बहुत तेज़ है। यांको नहीं आयेगा।"

"यांको झक्कड़ों से नहीं डरता," लड़के ने जवाब दिया।

"धुन्ध भी तो घनी होती जा रही है," फिर औरत की आवाज़ आयी; इस बार उसमें मायूसी का पुट था।

"धुन्ध में तो गश्त लगाने वाले जहाज की आँख बचा कर निकल आना और भी आसान होगा," जवाब मिला।

"और अगर कहीं डूब गया, तो?"

"तो क्या होगा? अगले इतवार को तुम्हें नये रिबन के बिना ही गिरजे जाना पड़ेगा।"

इसके बाद ख़ामोशी छा गयी। एक बात ने मेरा ध्यान ख़ास तौर से खींचा : उस अन्धे लड़के ने मुझसे यूक्रेनी में बातचीत की थी, और अब वह शुरू रूसी बोल रहा था।

"देखा, मेरी ही बात ठीक निकली न," सहसा अन्धे लड़के ने ख़ुशी से ताली बजाते हुए कहा, "यांको समुद्र से नहीं डरता, ना झक्कड़ से, ना धुन्ध से, ना ही तट पर गश्त लगाने वाली किश्तियों से! सुनो ज़रा, यह लहरों की छपछपाहट नहीं है, तुम मुझे बुद्धू नहीं बना सकतीं; यह तो उसी के लम्बे चप्पुओं की आवाज़ है।"

वह औरत एकदम उछल कर खड़ी हो गयी और व्यग्रता से आँखें गड़ा-गड़ा कर दूर समुद्र में देखने लगी।

"तुम पगला गये हो, सूरे," उसने कहा, "मुझे तो कुछ नहीं दिखायी देता।"

मुझे मानना पड़ेगा कि भरसक आँखें फाड़-फाड़ कर देखने पर भी मुझे समुद्र के उस विस्तार में कहीं नाव-जैसा कुछ नज़र नहीं आया। कोई दस-बारह मिनट इसी तरह गुज़रे होंगे कि पहाड़ जैसी लहरों में एक काला-सा धब्बा कभी छिपता, कभी निकलता, लेकिन निरन्तर बड़ा होता दिखायी दिया। ऊँची-ऊँची लहरों के शिखरों पर धीरे-धीरे चढ़ती और फिर उतार पर तेज़ी से गर्त में सरकती, एक नौका तट की ओर आने लगी। सचमुच बड़ा ही निर्भीक और साहसी था वह माँझी, जो ऐसी भयावनी रात में बीस वर्स्ट लम्बे सँकरे समुद्री रास्ते को पार करने का जोखिम उठाता चला आ रहा था, और जो वजह उसे आगे धकेल रही थी, वह सचमुच बहुत ज़रूरी रही होगी।

यह सब सोच कर मेरे दिल की धड़कन अनायास तेज़ होने लगी और मैं उस छोटी-सी कमज़ोर नाव को बत्तख की-सी दक्षता से लहरों में गोता लगाते और किसी पक्षी के पर मारने की तरह, चप्पुओं की फुर्तीली हरकत के साथ उड़ते हुए फेन को चीर, पानी के गहरे गर्त से उछल कर निकलते देखता रहा। मुझे डर था कि वह नाव तट की चट्टानों पर ज़ोर से टकरा कर ज़रूर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगी; मगर गजब की सफ़ाई से घूम कर वह एक नन्ही-सी खाड़ी में सही-सलामत सरक आयी।

नाव से मझोले कद का एक आदमी, भेड़ के चमड़े की तातारी टोपी पहने, नीचे उतरा। उसने हाथ से इशारा किया और फिर तीनों मिल कर नाव में से कोई सामान घसीट कर उतारने लगे। बोझ इतना बड़ा और भारी था कि आज तक मेरी समझ में नहीं आया, नाव डूबने से बची कैसे रही? फिर एक-एक गट्ठर अपने कन्धों पर उठाये, वे तीनों समुद्र के किनारे-किनारे एक ओर चल दिये और पल भर में ही मेरी आँखों से ओझल हो गये। अब डेरे पर लौट आने के सिवा और कोई चारा नहीं था; लेकिन मुझे मानना पड़ेगा कि इन अजीबो-ग़रीब घटनाओं ने मुझे बुरी तरह चौकन्ना कर दिया था और मैं बड़ी बेचैनी से सुबह की राह देखने लगा।

मेरे कज़ाक अर्दली ने सुबह जाग कर जब मुझे पूरी वर्दी में पाया तो वह आश्चर्य-चकित रह गया, लेकिन मैंने उसे कारण बताने की कोई ज़रूरत नहीं समझी। कुछ देर तक मैं कटे-फटे रंग-बिरंगे बादलों की चित्तियों से सजे नीले आसमान और क्रीमिया के इस समुद्र-तट को देख कर मन ही मन मुग्ध होता रहा। यह तट, दूर तक एक बैंगनी रेखा की तरह फैला हुआ, उस चट्टान तक जा कर ख़त्म होता था, जिस पर

आलोक-स्तम्भ का सफ़ेद मीनार खड़ा था। इसके बाद मैं फैनागोरिया के किले की ओर कमाण्डेण्ट से यह पूछने चला गया कि मैं गेलेंजिक के लिए कब रवाना हो सकता हूँ।

मगर अफ़सोस, कमाण्डेण्ट ने मुझे निश्चित रूप से कुछ भी बताने में असमर्थता ज़ाहिर की। इस समय बन्दरगाह में जो भी जहाज खड़े थे, वे या तो तट के सीमा-रक्षकों के गश्ती-जहाज थे या व्यापारी पोत, जिन्होंने अभी माल लादना भी शुरू नहीं किया था।

"हो सकता है, तीन-चार दिन बाद कोई डाक ले जाने वाली किश्ती यहाँ आ जाय," कमाण्डेण्ट ने मुझे बताया, "तभी कुछ देखेंगे।"

मैं नाराज़, उदास और खीझा हुआ अपने डेरे पर लौट आया। मेरा कज़ाक अर्दली, बड़ा सहमा हुआ-सा, भयभीत चेहरा लिये, मुझे दरवाज़े पर मिला।

"आसार अच्छे नहीं नज़र आते हुजूर," वह बोला।

"हाँ, भाई। भगवान जाने कब हम यहाँ से निकल पायेंगे।"

अब वह और भी घबराया हुआ और परेशान दिखने लगा। मेरी ओर झुकते हुए वह फुसफुसाया :

"यहाँ का ढर्रा की बहुत अजीब और भेद-भरा है, सरकार! आज अचानक मेरी मुलाकात काले सागर की कज़ाक रेजीमेण्ट के सार्जेण्ट से हो गयी। मेरी उससे अच्छी जान-पहचान है; पिछले साल हम लोग फ़ौज की एक ही टुकड़ी में साथ-साथ थे; इसलिए जब मैंने उसे बताया कि हम लोग कहाँ ठहरे हुए हैं, तो उसने मुझसे कहा, 'भैया, वह तो बड़ी गन्दी और ख़राब जगह है; लोग भी वहाँ के अच्छे नहीं।' और, ज़रा सोचा जाय तो, यह अन्धा छोकरा भी जाने किस भूत की औलाद है? आप ख़ुद इसे देखिए ज़रा, कितना फ़ितरती है! अकेला ही सब जगह आता-जाता है, बाज़ार से रोटी भी यही खरीद लाता है, पानी भी यही भरता है। साफ़ ज़ाहिर है, ये लोग इस तरह की बातों के आदी हैं।"

"तो हमें इससे क्या लेना-देना? यह बताओ कि घर की मालकिन दिखायी दी या नहीं?"

"जब आप बाहर गये थे, तब एक बुढ़िया अपनी लड़की के साथ ज़रूर आयी थी।"

"कौन लड़की? उसकी कोई लड़की-वड़की नहीं है।"

"तो ख़ुदा जाने वह कौन थी? हाँ, बुढ़िया अभी झोंपड़ी में ही है।"

मैं भीतर गया। चूल्हे में आग सुलगा दी गयी थी; वह मजे में लहक रहा था और उस पर जो खाना पकाया जा रहा था, वह उन जैसे ग़रीब लोगों के लिए कहीं शानदार था। मेरे सभी प्रश्नों के उत्तर में बुढ़िया ने सिर्फ़ यही कहा कि वह बहरी है और मैं क्या कह रहा हूँ, उसे कुछ सुनायी नहीं दे रहा। अब इसके आगे क्या किया जा सकता था? सो मैं उस अन्धे लड़के की ओर मुड़ा, जो इस बीच ख़ामोशी से चूल्हे के आगे बैठा, उसमें सूखी टहनियाँ झोंक रहा था।

"अच्छा, अब मुझे यह बता अन्धे भूत," उसका कान पकड़ते हुए मैंने कहा, "कल तू रात में वह गठरी ले कर कहाँ गया था, एँ?"

वह झट टसूए बहाने और ज़ोर-ज़ोर से चीख़ने-बिलखने लगा :

"मैं भला कहाँ जाता? कहीं भी तो नहीं गया था। मुझे किसी गठरी-वठरी का कुछ पता नहीं।"

इस बार बुढ़िया को सुनायी दे गया कि क्या हो रहा है और वह बड़बड़ाने लगी, "देखो तो! कैसी-कैसी बातें सोच डाली हैं; वो भी इस अभागे अनाथ के बारे में! उसे छोड़ क्यों नहीं देते? उस बिचारे ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

उसकी बड़बड़ाहट सुन कर मैं नफ़रत से भर उठा और मन ही मन इस भेद का सुराग़ खोजने का दृढ़ निश्चय करके बाहर चला आया।

अपना लबादा अपने गिर्द लपेटकर, मैं चार दीवारी से सटे एक बड़े-से पत्थर पर जा बैठा और यों ही दूरियों को ताकने लगा। मेरे सामने रात के झक्कड़ से अभी तक उद्विग्न, हिलोरें लेता समुद्र दूर-दूर तक फैला हुआ था; नींद में डूबते हुए किसी शहर की कुनमुनाहट और दबे हुए शोर-गुल की तरह उसकी एकरस गरज मेरे ख़यालों को उत्तर में हमारी सर्द बर्फ़-ढँकी राजधानी की ओर ले जाती हुई, मुझे बीते हुए वर्षों की याद दिला रही थी। स्मृतियों की उधेड़-बुन में मैं बाकी सब कुछ भूल गया। एक घण्टा या शायद उससे भी कुछ ज़्यादा समय इसी तरह बीत गया।

सहसा किसी के गीत के-से स्वर ने मेरे कानों को बाँध लिया और मेरा ध्यान

उस ओर खिंच गया। हाँ, कोई गीत ही था, जिसे कोई औरत बड़ी मधुर आवाज़ में गा रही थी; पर यह आवाज़ भला आ कहाँ से रही थी? मैं ध्यान से सुनता रहा। कुछ अजीब-सी लय थी उस गाने की कभी मन्द और सोज़-भरी, कभी द्रुत और उल्लासपूर्ण। मैंने चारों ओर निगाहें दौड़ायीं, पर कोई नज़र नहीं आया। मैंने एकाग्र हो कर फिर सुना और इस बार ऐसा लगा, जैसे आवाज़ ऊपर आकाश से झर रही हो।

मैंने नज़रें ऊपर उठायीं, तो झोंपड़ी की छत पर धारीदार पोशाक पहने एक युवती दिखायी दी, जो अपने केश छितराये, सचमुच सागर-कन्या जैसी लग रही थी। अपनी आँखों को धूप से बचाने के लिए एक हाथ की छाया किये हुए, वह कहीं दूर ताक रही थी। कभी मुस्करा कर वह अपने आप से ही बातें करने लगती तो कभी गीत की छूटी हुई कड़ी को फिर से उठा लेती!

मैंने उस गीत का एक-एक शब्द याद कर लिया :

बेशुमार हरी-हरी लहरों पे
उमड़ रहीं घनी-घनी लहरों पे
पाल तान उड़ रहे जहाज बड़े
आगे बढ़ चलते, आवेग-भरे

सागर को चीरते जहाजों के साथ-साथ
फुर्ती से तिरती है मेरी नन्हीं-सी तरी
करती प्रणाम बार-बार हवा-लहरों को
हलके-से चूमती हैं लहरें उसे फेन-भरी

लो, बहने लगी हैं हवाएँ तूफ़ानी.
ऊँचे विशाल पोत झूला-सा झूलते हैं
फैला कर अपने उन बड़े-बड़े पंखों को
तेज़ी से बहती हवा सँग बह चलते हैं

रोष-भरे वरूण से तब करती हूँ याचना
उसके सम्मान में नीचे तक झुकती हुई :
इस नन्ही नौका पर दया करो हे स्वामी,
हे शक्तिमान,' यही बिनती करती हुई :

बड़ी-बड़ी कीमती चीज़ें हैं नौका में,
फेनिल समुद्र घोर, लेता है घेरे में,
रखो सलामत उसे खेता है बावरा
घिरती हुई साँझ के झुटपुटे अँधेरे में।'

अचानक मुझे ख़याल आया कि मैंने पिछली रात तट पर यही आवाज़ सुनी थी। पल भर के लिए मैं गहरी सोच में खोया रहा, फिर जब मैंने दूसरी बार छत की ओर देखा तो वह लड़की वहाँ नहीं थी। सहसा वह एक दूसरा ही गीत गाती, हलके और दबे कदमों से नाचती-थिरकती, मेरे पास से गुज़र गयी; चुटकियाँ बजाती हुई, वह झोंपड़ी के अन्दर बुढ़िया के पास दौड़ती चली गयी। फिर मैंने उन दोनों के ज़ोर-ज़ोर से बहस करने की आवाज़ें सुनीं। बुढ़िया काफ़ी तैश में आ गयी थी, लेकिन वह लड़की सिर्फ़ ज़ोर-ज़ोर से हँसती जा रही थी। कुछ देर बाद वह परी फिर उसी तरह उछलती-कूदती आती दिखायी दी। मेरे पास पहुँच कर वह रुकी और उसने सीधे मेरी आँखों में आँखें डाल कर देखा, मानो मुझे वहाँ पा कर उसे अचम्भा-सा हुआ हो; इसके बाद कुछ बेफ़िक्री और लापरवाही के अन्दाज़ में मुड़ी और चुपचाप नीचे घाट की ओर चली गयी।

लेकिन बात यहीं ख़त्म नहीं हुई : सारा दिन, एक पल आराम किये बिना, वह उसी तरह गाती-थिरकती, झोंपड़ी के आस-पास या मेरे इर्द-गिर्द मँडराती रही। सचमुच बड़ी अजीब लड़की थी। अपने हाव-भाव से वह ज़रा भी बेवकूफ़ नहीं लगती थी; बल्कि इसके विपरीत, उसकी आँखें काफ़ी तीखेपन से मेरी जाँच-परख करती रही थीं; लगता था, जैसे उनमें कोई चुम्बकीय शक्ति हो और उसकी हर नज़र जैसे प्रश्न करने का निमंत्रण-सा देती; लेकिन मैं कुछ पूछने के लिए जैसे ही मुँह खोलता, वह चतुराई और अदा से मुस्कराती हुई दूर भाग जाती।

मैंने उस जैसी औरत इससे पहले कभी नहीं देखी थी। सुन्दर तो उसे नहीं कहा जा सकता था, हालाँकि सुन्दरता के बारे में भी मेरी कुछ पूर्व-निश्चित धारणाएँ हैं। हाँ, उसमें असीलपन और कुलीनता का पुट काफ़ी हद तक मौजूद था, और घोड़ों की तरह ही औरतों में भी यह कुलीनता एक बहुत बड़ी चीज़ है; इस खोज का श्रेय आधुनिक इंस को जाता है। यह (मेरा मतलब कुलीनता से है आधुनिक इंस से नहीं)

मुख्यतः चाल और अंगों की बनावट से ज़ाहिर होता है, और ख़ासतौर से इसकी जानकारी नाक से मिलती है। रूस में एक उत्कृष्ट और आदर्श नासिका नन्हे, सुघड़ पैरों से भी विरल है। यह चपल गायिका अठारह बरस से ज़्यादा की नहीं लगती थी। असाधारण रूप से सुडौल, लचीली और खूबसूरत देह; सिर को बार-बार एक ओर झुकाने का ख़ास अन्दाज़; लम्बे-लम्बे, भूरे ललछौंहे केश; धूप से तँबियाए कन्धों और गर्दन की त्वचा की सुनहरी दमक; और सबसे ऊपर, सुगढ़ता और नफ़ासत से तराशी हुई उसकी सुबुकी-सी नाक ने मुझे मुग्ध कर दिया। हालाँकि उसकी कनखियों और तिरछी निगाहों में मुझे कुछ अजीब उच्छृंखलता और रहस्यमयता महसूस हो रही थी और यद्यपि उसकी मुस्कान में कुछ अजीब गूढ़ और भेद-भरा, अकथ-सा भाव था, फिर भी मेरी पहले से तयशुदा धारणाओं की ही जीत हुई। उसकी सुगढ़, तराशी हुई नाक ने मुझे ध्वस्त कर दिया और मुझे लगा, जैसे मुझे गेटे की मिन्यों मिल गयी है उस महान जर्मन कवि की कल्पना का वह अजीब-सा आविष्कार! और सचमुच, दोनों की बहुत-सी बातें आपस में मिलती थीं : तीव्र उत्तेजना, हलचल और बेकली से बहुत जल्द ही परम निश्चलता और ठहराव में परिवर्तन की वही ख़ासियत; वही भेद-भरी, पहेलियों-सी बातें; वही थिरकती हुई चाल और वही अजीबो-ग़रीब गाने...

शाम के क़रीब मैंने उसे ड्योढ़ी में ही रोक कर बातचीत में उलझा लिया, जिसका ब्योरा मैं नीचे दे रहा हूँ :

"सुन्दरी, ज़रा सुनना," मैंने पूछा, "यह तो बताओ कि तुम आज छत पर क्या कर रही थीं?"

"देख रही थी कि हवा किधर की है।"

"क्यों?"

"जिधर से हवा आये, उधर ही से ख़ुशी!"

"सच्च, तब क्या तुम गाना गा कर ख़ुशी को बुलौआ भेज रही थीं?"

"जहाँ गाना है, वहाँ सौभाग्य और ख़ुशहाली भी रहेगी ही!"

"मान लो गाने से तुम पर ख़ुशी के बदले दुख ही आ टूटे?"

"तो उससे क्या? अगर हालात अच्छे नहीं हुए तो बुरे होंगे और फिर बुरे से अच्छे के बीच ज़्यादा फ़ासला नहीं है!"

"यह गाना तुम्हें किसने सिखाया है?"

"किसी ने नहीं। मैं तो यों ही जो मन में आता है, वही गाने लगती हूँ; जिसके लिए गाती हूँ, वह ज़रूर सुन लेगा; बाकी लोगों की समझ में नहीं आयेगा।"

"अच्छा मेरी बुलबुल, नाम क्या है तुम्हारा?"

"जिसने मेरा नाम रखा, वही जाने!"

"और तुम्हारा नाम रखा किसने?"

"भला मैं क्या जानूँ!"

"तुम हो बड़ी चण्ट! लेकिन मैंने भी कुछ तुम्हारे बारे में जान लिया है!"

उसकी मुख-मुद्रा में कोई फ़र्क नहीं पड़ा, यहाँ तक कि होंठ भी नहीं फड़के, मानो इस सबसे उसका कोई मतलब न हो।

"मुझे पता है, रात को तुम तट पर गयी थीं।" बड़े महत्वपूर्ण अन्दाज़ में, गुरू-गम्भीर मुद्रा बनाकर, उसे घबरा देने की उम्मीद करते हुए, मैंने जो कुछ देखा था, सब उसे कह सुनाया। लेकिन मेरी कोशिश बेकार गयी। वह सिर्फ़ ठहाका लगा कर हँस पड़ी।

"आपने देखा तो बहुत कुछ, लेकिन जाना-समझा बहुत कम; और जो कुछ आपने जाना-समझा भी, उसे आप ताले-चाभी में ही रखें तो अच्छा होगा!"

"मान लो, अगर मेरे दिमाग़ में कमाण्डेण्ट को इस सबकी ख़बर देने की बात आ जाय तो...?" मैंने जान-बुझ कर अपने चेहरे का भाव बहुत ही गम्भीर और कठोर बना लिया।

सहसा वह छलाँग लगा कर दूर भाग गयी और गाना गाने लगी; फिर, डर कर उड़ान भरती किसी चिड़िया की तरह, वह ग़ायब हो गयी। मेरा आख़िरी जुमला बहुत बेमौक़ा और अनुपयुक्त था, हालाँकि उस समय मुझे कतई अन्दाज़ा नहीं था कि इसका क्या मतलब निकाला जा सकता है या इसके क्या नतीजे हो सकते हैं और बाद में उस जुमले के लिए बहुत पछताने का मुझे पर्याप्त कारण मिला।

अँधेरा होने लगा था और मैंने अपने कज़ाक अर्दली से चाय की केतली गर्म करने को कहा, एक मोमबत्ती जलायी और मेज़ पर बैठ कर अपना सफ़री पाइप फूँकने लगा। मैं चाय का दूसरा गिलास ख़त्म कर रहा था, जब दरवाज़ा अचानक

चरमराया और मुझे अपने पीछे कपड़ों की हल्की-हल्की सरसराहट और किसी के आने की धीमी पदचाप सुनायी दी। मैं चौक कर घूम गया वही थी मेरी नन्ही जलपरी! बिना एक भी शब्द बोले, वह मेरे सामने बैठ गयी और कुछ ऐसी नर्म निगाहों से मेरी ओर देखने लगी, जो न जाने किस अगम-अथाह कारण से मुझे बड़ी मधुर और प्यार से भरपूर लगीं; उन्हें देख कर मुझे अनायास ही उन आँखों की याद हो आयी, जो वर्षों पहले मेरे जीवन पर किसी निरंकुश तानाशाह की तरह राज किया करती थीं।

वह मेरे बात करने का इन्तज़ार करती-सी लगी, लेकिन मैं इतना चकरा गया था कि मेरे मुँह से एक शब्द भी न निकला। उसके चेहरे पर छायी मुर्दनी और पीलापन उसके हृदय के तूफ़ान की चुग़ली खा रहा था; उसका एक हाथ निरूद्देश्य-सा मेज़ पर इधर से उधर फिर रहा था और मैंने साफ़ देखा कि वह हल्के-हल्के काँप भी रहा था। कभी उसका वक्ष उत्तेजना से फूल उठता, कभी ऐसा लगता कि वह साँस रोके बैठी है। आख़िरकार यह नाटक बेमज़ा और ऊबाऊ होने लगा और मैं उसे एक गिलास चाय पेश करके बड़े सूखे और नीरस ढंग से बीच ही में पटाक्षेप करने वाला था कि उसने उछल कर अपनी बाँहें मेरे गले में डाल दीं और मेरे होंठों पर एक तरल, जलता हुआ चुम्बन जड़ दिया। मेरी आँखों के आगे अँधेरा छा गया, सिर चकरा उठा, और मैंने यौवन के पूरे आवेग से उसे अपनी बाँहों में भींच लिया; लेकिन वह, लचीली नागिन की तरह मेरी बाँहों की पकड़ से फिसलती हुई, मेरे कान में दबी आवाज़ में बोली, "जब सारे लोग सो जायें तो रात में तट पर मुझसे मिलिए।"

फिर तीर की तेज़ी से वह कमरे से बाहर हो गयी। जाते-जाते वह ड्योढ़ी में रखी चाय की केतली और फ़र्श पर जमी मोमबत्ती भी उलटती गयी।

"मर चुड़ैल!" मेरा कज़ाक अर्दली चिल्ला उठा, जो वहाँ पुआल पर बड़े आराम से पसरा हुआ था और केतली में बची हुई चाय से अपने आप को गर्म करने का मन्सूबा बाँध रहा था। सहसा चौंक कर मैं एकदम होश में आ गया।

क़रीब दो घण्टे बीत जाने पर, जब चारों ओर सन्नाटा छा गया, मैंने अपने कज़ाक अर्दली को जगाया।

"अगर तुम्हें पिस्तौल की आवाज़ सुनायी दे," मैंने उससे कहा, "तो फ़ौरन दौड़ कर समुद्र-तट पर चले आना।"

उसकी आँखें आश्चर्य से फैल गयीं, लेकिन उसने यत्रंवत इतना ही कहा, "जी, सरकार।"

मैंने पेटी के भीतर एक पिस्तौल खोंस ली और बाहर निकल आया। तट को जाने वाले ढलवाँ रास्ते के ऊपरी छोर पर खड़ी, वह मेरा इन्तज़ार कर रही थी। उसने बहुत झीने कपड़े, नाम करने भर को, पहन रखे थे और एक छोटा दुशाला उसकी छरहरी देह पर लिपटा हुआ था।

"मेरे पीछे-पीछे चले आइए," मेरा हाथ थामते हुए उसने कहा; और हम दोनों तेज़ी से उस ढलवाँ रास्ते पर नीचे तट की ओर उतर चले। मैं नहीं जानता कि उस दिन मैं अपनी गर्दन को टूटने से बचाने में कैसे सफल रहा। नीचे पहुँच कर हम दाहिनी ओर मुड़े और उसी रास्ते पर चलने लगे, जिस पर पिछली रात मैं उस अन्धे लड़के का पीछा करता हुआ गया था। चाँद अभी निकला नहीं था, और सिर्फ़ दो सितारे, कहीं दूर खड़े दो प्रकाश-स्तम्भों की तरह, गहरे-नीले आसमान में टिमटिमा रहे थे। अपनी बँधी हुई निश्चित ताल और लय पर आती हुई लहरें, किनारे से बँधी अकेली नाव को बहुत हल्के से उठाती हुई, तट से टकरा रही थीं।

"आइए, नाव पर चलें," मेरी साथिन ने कहा। मैं मन ही मन झिझका, क्योंकि ऐसे भावुकता-भरे समुद्र-भ्रमण के प्रति मेरी कभी कोई रुचि या इच्छा नहीं रही; मगर पीछे हटने का यह कोई समय नहीं था। वह एक ही छलाँग में नाव पर चढ़ गयी; उसके पीछे-पीछे मैं अभी मुश्किल से चढ़ ही पाया था कि उसने रस्सी खोल दी और नाव लहरों पर तैर चली।

"इसका क्या मतलब है?" झुँझला कर, मैंने कुछ नाराज़गी से पूछा।

"इसका यह मतलब है," उसने हल्का-सा धक्का देकर, मुझे नाव में बैठाते और अपनी बाँहें मेरे गिर्द लपेटते हुए कहा, "कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ।"

उसने अपना गाल मेरे गाल से सटा दिया; उसकी गर्म-गर्म साँसें मुझे अपने चेहरे पर महसूस हो रही थीं। अचानक पानी में छपाक से कुछ गिरा। मेरा हाथ फ़ौरन अपनी पेटी की ओर लपका; पिस्तौल ग़ायब थी। अब मेरे दिल में उसके प्रति भयंकर सन्देह जाग उठा और मेरा खून तेज़ी से सिर की तरफ़ दौड़ने लगा। चारों ओर निगाहें दौड़ाने पर मैंने देखा कि हम तट से क़रीब पचास सेज़ीन दूर आ चुके थे, और मुझे तो तैरना भी नहीं आता! मैं उसे धक्का दे कर अपने से दूर हटाना चाहता था, मगर

वह बिल्ली की तरह मेरे कपड़ों से चिपकी रही। फिर उसने मुझे एक ऐसा तेज़ धक्का दिया, जिसने मुझे नाव के बाहर फेंक ही दिया था; बड़ी मुश्किल से मैं पानी में गिरते-गिरते बचा। नाव ख़तरनाक ढंग से डोलने लगी, लेकिन मैं जैसे-तैसे ख़ुद को सँभाल कर फिर खड़ा हो गया और अब एक भयंकर संघर्ष हमारे बीच छिड़ गया। ग़ुस्से ने मुझे दुगनी ताकत दे दी थी, लेकिन जल्द ही मुझे पता लग गया कि मेरी दुश्मन मुझसे ज़्यादा फुर्तीली थी।

"आख़िर तुम चाहती क्या हो?" उसके छोटे-छोटे हाथों को कस कर पकड़ते हुए मैं चिल्लाया। मैंने अपने हाथों की पकड़ में उसकी उँगलियों को चटचटा उठते सुना, लेकिन उसके मुँह से उफ़ तक नहीं निकली; उसका साँप-जैसा स्वभाव इस छोटे-मोटे दर्द से कहीं अधिक जबर्दस्त था।

"जो कुछ हुआ, वह तुमने देख लिया है," उसने जवाब दिया, "और तुम हमारे ख़िलाफ़ शिकायत कर दोगे।" न जाने कैसी दानवी शक्ति लगा कर वह मुझे नाव की ऊपरी पट्टी पर इस तरह धकेल कर ले आयी कि हम दोनों के शरीर बेहद ख़तरनाक ढंग से नाव के बाहर पानी के ऊपर लटक आये और उसके खुले हुए बालों के छोर पानी को छूने लगे। यही लम्हा फैसलाकुन था। मैंने नाव के किनारे से घुटनों को टिका कर सहारा लिया और एक हाथ से उसके बालों को तथा दूसरे से उसके गले को पकड़ लिया। मेरे कपड़ों पर से उसके हाथों की गिरफ़्त छूट गयी और पलक झपकते ही मैंने उसे समुद्र में फेंक दिया।

अँधेरा काफ़ी घना हो चुका था, उसका सिर दो-एक बार फेन के ऊपर डूबता-उतराता दिखायी दिया, फिर वह मेरी आँखों से एकदम ओझल हो गयी।

मुझे नाव की पेंदी में पुराने डाँड़ का एक टुकड़ा पड़ा मिल गया, और बड़ी मुश्किल से मैं किसी तरह घाट तक पहुँच पाया। जब मैं समुद्र के किनारे-किनारे झोंपड़ी की ओर लौट रहा था तो अचानक मेरी निगाह उस स्थान पर चली गयी, जहाँ पिछली रात वह अन्धा लड़का उस साहसी निशाचरी नाविक का इन्तज़ार करता रहा था। चाँद निकल रहा था और उसकी रोशनी में मुझे लगा, जैसे सफ़ेद कपड़ों में लिपटी कोई आकृति तट पर बैठी हुई है। उत्सुकता ने मुझे कोंचा तो मैं दबे-पाँव उधर को चल दिया और तट से सीधी उठती चली गयी एक चट्टान के ऊपर, घास में छिप कर लेट गया। ज़रा-सा सिर उठाते ही, मैं साफ़-साफ़ देख सकता था कि नीचे क्या हो रहा है और अपनी उस जलपरी को वहाँ बैठा देख कर मुझे न तो ज़रा भी आश्चर्य

हुआ, न दुख। वह अपने बालों से समुद्र का जल निचोड़ रही थी और मैंने देखा, गीले कपड़ों ने उसके शरीर से चिपक कर उसकी छरहरी, लचीली देह और सीने की उठान को किस तरह नुमायाँ कर दिया था। कुछ ही देर बाद, दूर समुद्र पर एक नाव दिखायी दी और देखते-देखते तट से आ लगी। पिछली रात की तरह ही उसमें से एक आदमी नीचे उतरा, जिसके बाल कज़ाकों के ढंग से कटे हुए थे, हालाँकि उसने तातारी टोपी पहन रखी थी; एक बड़ा-सा छुरा उसकी पेटी में खुँसा हुआ था।

"यांको!" लड़की ने कहा, "सर्वनाश हो गया है!"

इसके बाद वे ऐसी दबी आवाज़ में बातचीत करने लगे कि मुझे एक शब्द भी नहीं सुनायी पड़ा।

"लेकिन वह सूरा कहाँ है?" आख़िरकार यांको ने ऊँचे स्वर में पूछा।

"मैंने उसे चलता कर दिया था," जवाब मिला।

कुछ ही मिनट बाद वह अन्धा लड़का अपनी पीठ पर एक बोरी-सी उठाये आ पहुँचा, जिसे नाव में रख दिया गया।

"सुन रे सूरे," यांको ने कहा, "उस जगह का ध्यान रखना, जानता है न, मेरा मतलब क्या है? वहाँ बेशुमार चीज़ों का ख़ज़ाना है... और उस (नाम मैं अच्छी तरह नहीं सुन सका) से कहना कि अब मैं उसका नौकर नहीं हूँ। मामला बहुत बिगड़ गया है और अब उसे मेरी सूरत भी दिखायी नहीं देगी। इस काम को ज़ारी रखना ख़तरनाक है। मैं काम खोजने कहीं और जा रहा हूँ; उसे मेरे जैसा जान पर खेलने वाला दूसरा नहीं मिलेगा। और यह भी उसे कह देना कि अगर उसने ज़रा दिल खोल कर पैसे दिये होते, तो यांको कभी उसे छोड़ कर न जाता। ख़ैर मेरा क्या है? जहाँ भी हवा बहती है और समुद्र गरजता है, वहाँ मैं हमेशा अपना रास्ता बना सकता हूँ।" थोड़ा रुक कर यांको ने बात जारी रखी, "इसे मैं साथ लिये जा रहा हूँ, क्योंकि इसका पीछे रहना ठीक नहीं है... और बुढ़िया से कहना कि बोरिया-बँधना समेट कर उसके स्वर्ग सिधारने का समय आ चुका है। काफ़ी जी चुकी है वह और उसे ख़ुद ही जानना चाहिए कि उसके दिन पूरे हो गये हैं। अब वह हमें कभी नहीं देख पायेगी।"

"और मैं, मेरा क्या होगा?" अन्धे लड़के ने रूँधी आवाज़ में पूछा।

"मुझे अब तेरी क्या ज़रूरत है?" जवाब मिला।

इस बीच वह जलपरी कूद कर नाव में चढ़ चुकी थी और अपने साथी को हाथ के इशारे से बुला रही थी। यांको ने अन्धे लड़के के हाथ पर कुछ रखा और धीरे-धीरे बुदबुदाते हुए कहा, "यह ले, अपने लिए सोंठ वाले कुछ केक खरीद लेना।"

"बस इतना ही?" अन्धे लड़के ने पूछा।

"अच्छा, अच्छा, यह और ले।" पत्थरों पर गिर कर सिक्का खनखना उठा। लेकिन अन्धे लड़के ने उसे उठाया नहीं। यांको नाव में जा चढ़ा, और चूँकि हवा समुद्र की ओर बह रही थी, इसलिए उन्होंने नाव के मस्तूल पर लिपटा छोटा-सा पाल ताना और जल्द ही समुद्र ही ओर दूर सरक चले। काफ़ी देर तक काली-काली लहरों पर चाँदनी में हिलता-डुलता वह सफ़ेद पाल दिखायी देता रहा। अन्धा लड़का तट पर बैठा रहा, और मुझे सागर की शाँ-शाँ से घुली-मिली कुछ ऐसी आवाज़ सुनायी दी, जैसे कोई सिसकियाँ ले रहा हो। हाँ, वही अन्धा लड़का रो रहा था और काफ़ी देर तक वह इसी तरह बैठा रोता रहा...

एक गहरा विषाद और उदासी मेरे मन-प्राण पर छा गयी। मुझे किस्मत ने इन ईमानदार तस्करों की शान्त, ठहरी हुई ज़िन्दगी में क्यों ला पटका था? कुएँ की शान्त, निश्चल सतह पर फेंके गये पत्थर की तरह मैंने उनके जीवन की थिरता और अमन-चैन को छिन्न-भिन्न कर दिया था, और पत्थर ही की तरह मैं क़रीब-क़रीब तल में डूबने से बाल-बाल बचा था।

आख़िरकार मैं उठा और डेरे पर लौट आया।

ड्योढ़ी में लकड़ी के एक बड़े-से तख़्ते पर एक मोमबत्ती अपनी अन्तिम साँसें गिनती हुई, चटचटा रही थी; और मेरे आदेश के बावजूद, मेरा कज़ाक अर्दली दोनों हाथों में कस कर बन्दूक पकड़े, गहरी नींद में खोया हुआ था। मैंने उसे जगाया नहीं और मोमबत्ती उठा कर कमरे के भीतर चला गया। मगर अफ़सोस, मेरा सूटकेस, चाँदी के जड़ाऊ, काम वाली तलवार और एक दोस्त से भेंट में मिला दागिस्तानी छुरा ग़ायब था। अब मेरी समझ में आया कि वह कम्बख़्त अन्धा छोकरा अपनी पीठ पर बोरी में क्या लाद ले गया था।

अपने कज़ाक अर्दली को, ज़रा भी शिष्टता के बिना झँझोड़ कर जगाते हुए, मैंने

काफ़ी बुरा-भला कहा; मैं ग़ुस्से से चिल्लाया और चीख़ा, मगर अब हो भी क्या सकता था? कितना हास्यास्पद और बेतुका लगता, अगर मैं अपने अफ़सरों से इस बात की शिकायत करता कि एक अन्धे छोकरे ने मुझे लूट लिया था और अठारह बरस की एक छोकरी ने समुद्र में डुबा कर मेरी जान ले लेने में कोई कसर न छोड़ी थी। ख़ुदा का लाख-लाख शुक्र है कि अगली सुबह ही मुझे आगे सफ़र करने का मौक़ा मिल गया और मैंने तमन से विदा ली। बाद में उस बुढ़िया और बेचारे अन्धे लड़के पर क्या बीती, मुझे नहीं मालूम। और फिर, सब कुछ के बावजूद, मनुष्यों के सुख-दुख से मुझे लेना-देना भी क्या था मैं तो एक खानाबदोश अफ़सर था, ऊपर से सरकारी काम से दौरे पर निकला हुआ...

पहला भाग समाप्त

दूसरा

खण्ड

पेचोरिन की डायरी का शेषांश

राजकुमारी मेरी

मई ११

कल ही मैं प्यातिगोर्स्क आ पहुँचा और मैंने रिहाइश के लिए माशूक पर्वत की तलहटी में, बस्ती के बाहर परिसर में एक मकान किराये पर ले लिया। कस्बे का यह सबसे ऊँचा भाग है, इतना ऊँचा कि आँधी-तूफ़ान के समय बादल नीचे आ कर मेरी छत छूने लगते हैं। आज सुबह पाँच बजे, जब मैंने अपनी खिड़की खोली तो घर के सामने वाली सीधी-सादी, छोटी-सी बगिया में उगते फूलों की भीनी-भीनी ख़ुशबू से मेरा कमरा महक उठा। फूलों से लदी, चेरी के दरख़्तों की टहनियाँ मेरी खिड़की के भीतर झाँकने चली आती हैं, और रह-रह कर आते हवा के झोंके, मेरी लिखने की मेज़ पर उनकी सफ़ेद-सफ़ेद पंखुड़ियाँ जब-तब छितरा देते हैं।

मकान के तीन तरफ़ का नज़ारा बहुत ही सुन्दर है। पाँच चोटियों वाला बेश्ताऊ पहाड़, अपने नीले-नीले विशालकाय सीने को ताने, पच्छिम में झूमता दिखायी देता है, जैसे 'थमते हुए तूफ़ान का इक आख़िरी बादल'। उत्तर की ओर किसी झबरी, फ़ारसी टोपी जैसा माशूक पर्वत, पूरे क्षितिज को एक छोर से दूसरे छोर तक अपने विस्तार में छिपाये हुए, अचल खड़ा नज़र आता है। पूरब की तरफ़ का नज़ारा ज़्यादा ख़ुशनुमा और दिलकश है। इस ओर, मेरे ठीक नीचे, कस्बे का साफ़-सुथरा नया-बसा हिस्सा, अपने सुन्दर रंग-बिरंगे परिवेश में फैला हुआ है, जहाँ से गन्धक के रोगहर झरनों की मरमर, देश-विदेश से आयी हुई बहुभाषी भीड़ के अस्पष्ट कोलाहल के साथ घुलती-मिलती मुझ तक पहुँचती है; उसके पार, इस विशालकाय अखाड़े को घेरे पहाड़ों का सिलसिला, दूर फ़ासले पर निरन्तर नीला, धुँधला और कुहरीला होता चला गया है; जबकि इन पहाड़ों के पीछे क्षितिज के झालरदार छोर पर, एक रूपहली ज़ंजीर की शक्ल में इस किनारे से उस किनारे तक, उन हिम-मण्डित पर्वतों के शिखर

फैले हुए हैं, जो काज़बेक पर्वत से शुरू हो कर दो शिखरों वाले एल्ब्रुस तक जा कर ख़त्म होते हैं...

ऐसे इलाके में रहना सचमुच कितना सुखद है! उल्लास की एक लहर रह-रह कर मेरी नस-नस में दौड़ जाती है। हवा किसी बच्चे के निश्छल और पवित्र चुम्बन की तरह ताज़ा और निर्मल है, धूप उजली और सुनहरी, और आकाश बेहद नीला और स्वच्छ इससे अधिक कोई और क्या चाह सकता है! तब फिर आदमी के तीव्र आवेगों और वासनाओं, उत्कण्ठा और लालसा या फिर पछतावों और दुखों के लिए भला कौन-सा स्थान बचता है?

लेकिन अब चलने का समय हो चुका है। एलिजाबेथ प्रपात तक मैं पैदल टहलता हुआ जाऊँगा, जहाँ मैंने सुना है कि स्पा में आने वाले लोगों की अच्छी-ख़ासी भीड़ सुबह के समय जुटा करती है।

कस्बे के बीचों-बीच पहुँच कर मैं उस मुख्य-पथ पर हो लिया, जिसके दोनों ओर ऊँचे छायादार पेड़ों की कतार चली गयी थी। वहाँ मुझे अवसाद-भरे और उदास चेहरों वाले लोगों की कई टोलियाँ धीरे-धीरे पहाड़ी पर चढ़ती हुई मिलीं। उनमें से ज़्यादातर परिवार नीचे मैदानों में रहने वाले जमींदार घरानों के थे, जैसा कि पुरुषों के जर्जर, पुरानी काट के कोटों और उनकी बीवियों और लड़कियों की नफ़ीस और उम्दा पोशाकों से साफ़ ज़ाहिर हो रहा था। जिस अपनत्व और स्नेह-भरी उत्सुकता से उन्होंने मेरी ओर देखा, उससे यह भी ज़ाहिर था कि झरने पर आने वाले सभी विवाह-योग्य नौजवानों को उन्होंने पहले ही से तड़ रखा है। पीटर्सबर्ग के दर्ज़ी द्वारा बनाये गये मेरे उम्दा कोट ने पहले तो उन्हें कुछ भ्रम में डाला, लेकिन फिर मेरे फ़ौजी झब्बों पर निगाह डालते ही उन्होंने नफ़रत से मुँह दूसरी तरफ़ फेर लिया।

अलबत्ता, स्थानीय अफ़सरों की बीवियाँ, जिन्हें एक तरह से इन झरनों की मेज़बान भी कहा जा सकता है, ज़्यादा कृपालु थीं। उनका रुख़ कुछ अधिक अनुकूल, नवाज़िश-भरा और शालीन था। वे हाथों में लॉर्न्येट लिये रहती हैं, और फ़ौजी वर्दी पर उतना ध्यान नहीं देतीं, न उसे नीची नज़र से ही देखती हैं, क्योंकि कॉकेशिया में रह कर वे पीतल के बड़े-बड़े फ़ौजी बटनों के भीतर जोशभरे, धड़कते हुए दिल और सफ़ेद फ़ौजी टोपियों के नीचे शिक्षित और उदार दिमाग़ खोज लेना सीख चुकी हैं। ये महिलाएँ बहुत आकर्षक होती हैं, और इनका आकर्षण काफ़ी समय तक ज्यों का त्यों बना

रहता है। इनके स्वभाव की अथक मिलनसारी और शालीनता का रहस्य यही है कि इन पर दिल निछावर करने वाले कद्रदान हर साल बदलते रहते हैं।

एलिज़ाबेथ प्रपात को जाने वाले सँकरे पथ की चढ़ाई पर कदम बढ़ाते हुए मैं पुरुषों के एक ऐसे झुण्ड की बगल से गुज़रा, जिस में फ़ौजी और शहरी दोनों तरह के लोग थे; झरने पर नियमित रूप से आने और वहाँ घूमने-टहलने वाले लोगों में इनका जैसा कि मुझे बाद में पता चला एक अपना ही वर्ग है; ये लोग अपनी हरकतों से बिलकुल अलग-थलग नज़र आते हैं। ये पीते ज़रूर हैं, पर झरने का पानी नहीं; बाहर निकलते हैं, पर बहुत कम; इश्कबाज़ी करते हैं, लेकिन बेहद बेतरतीबी और उखड़ेपन से। हर वक्त जुआ खेलना और ज़िन्दगी से ऊबने की शिकायत करना इनका शगल है। अव्वल दर्जे के छैल-चिकनिया, छिछोरे और बनतू हैं ये। सींक और बेंत की जाली से बुने अपने मगों को गन्धक के कुण्ड में डुबोते हुए, ये लोग अजीब-अजीब नाटकीय और बनावटी अदाएँ दिखाते हैं, ताकि आस-पास खड़े लोगों का ध्यान इनकी ओर खिंच जाय; शहरी युवक अपने पीले-नीले गुलूबन्द झलकाते हैं और फ़ौजी जवान अपनी गले में बँधी झालरों को लापरवाही से कॉलर के ऊपर निकाले घूमते हैं। कस्बे के समाज की ओर ये लोग एक गहरी हिकारत दर्शाते हैं, और राजधानी या बड़े शहरों की उन अभिजात वर्गीय बैठकों की याद में आहें भरते हैं, जिनके दरवाज़े इनके लिए कभी नहीं खुलते।

और लीजिए, आख़िरकार यह रहा चश्मा... इसके पास ही एक छोटी-सी चौकोर जगह में स्नान करने वालों की आड़ के लिए, बावड़ी के ऊपर, एक छोटी-सी लाल छत वाली इमारत खड़ी की गयी है, और इसके ज़रा आगे एक छता हुआ गलियारा है, जहाँ सैर करने वाले आँधी-पानी के समय आसरा ले सकते हैं।

कई घायल अफ़सर उदास और फीके चेहरों वाले पुरुष अपनी बैसाखियों को हाथ में पकड़े, एक बेंच पर बैठे हुए थे। कुछ महिलाएँ अभी-हाल पिये चश्मे के पानी का असर बढ़ाने और उसका भरपूर लाभ उठाने के लिए तेज़-तेज़ इधर से उधर चहलकदमी कर रही थीं। उनमें दो-तीन ख़ूबसूरत चेहरे भी थे। माशूक पर्वत की ढलान में बनी पगडण्डियों पर छायी लताओं के बीच से मुझे यदा-कदा किसी रंग-बिरंगी जनाना टोपी की झलक मिल जाती, जो स्पष्ट ही दो हृदयों का एकान्त मिलन चाहने वाली तरूणी की होती, क्योंकि उसके साथ, बिना किसी अपवाद के, कोई फ़ौजी टोपी या किसी शहरी आदमी का भद्दा, गोल हैट, छाया की तरह लगा रहता।

उस ऊँचे, खड़े कगार पर, जहाँ 'एयोलियन हार्प' के नाम से एक बारहदरी बनी हुई है, सैलानियों का एक झुण्ड एलब्रुस पर्वत की सुषमा को दूरवीन से देखने में व्यस्त था। उनमें दो अध्यापक भी थे, जिनके साथ उनकी तहबील में सुपुर्द किये गये शिष्य भी थे, जो कण्ठमाला का इलाज ढूँढ़ने के सिलसिले में यहाँ आये हुए थे।

चढ़ाई की वजह से हाँफता हुआ, मैं खड्ड के किनारे खड़ा हो गया और इमारत के कोने का सहारा लेते हुए, झुक कर, सामने फैली दिलकश और ख़ूबसूरत दृश्यावली का नज़ारा कर रहा था कि सहसा मुझे अपने पीछे से एक जानी-पहचानी आवाज़ सुनायी दी :

"अरे पेचोरिन! क्या बहुत दिनों से यहाँ हो?"

मैंने घूम कर देखा ग्रुश्नीत्स्की था! हमलोग एक-दूसरे के गले लग गये। उससे मेरा परिचय मोर्चे की एक टुकड़ी में हुआ था। उसकी एक टाँग गोली से ज़ख़्मी हो गयी थी और वह मुझसे एक हफ़्ता पहले ही इस पहाड़ी स्थान पर चला आया था।

ग्रुश्नीत्स्की अभी कैडेट ही है। फ़ौज में काम करते हुए उसे एक ही साल हुआ है और अपने निजी बाँकपन और शेख़ी की ख़ास निशानी के तौर पर वह सिपाहियों वाला लम्बा, भारी फ़ौजी कोट हमेशा लादे रहता है। उसे सन्त जॉर्ज का सैनिक-क्रॉस भी दिया गया है। उसकी देह हट्टी-कट्टी और सुगठित, रंग सँवलाया हुआ और बाल काले हैं; वह लगता पच्चीस-एक वर्ष का है, हालाँकि उसकी उम्र मुश्किल से इक्कीस की होगी। बातचीत करते समय सिर को अदा से पीछे की ओर झटका देने की उसे ख़ास आदत है और वह बायें हाथ से निरन्तर अपनी मूँछों पर ताव देता रहता है, क्योंकि दाहिने हाथ से तो वह बैसाखी पर झुका, उसे सँभाले रखता है।

वह अलंकारों से भरी और धाराप्रवाह बातें करता है; दरअसल वह उन आदमियों में से है, जो हर मौके के लिए एक भारी-भरकम, गढ़ा-गढ़ाया जुमला तैयार रखते हैं; जो सादगी-भरे, सहज सौन्दर्य से कतई प्रभावित नहीं होते और बड़ी गम्भीरता और शान से असाधारण भावनाओं; ऊँचे, उदात्त उद्वेगों और गहरी, सूक्ष्म मनोव्यथा की नुमाइश करते हैं। ऐसे व्यक्ति अपने इर्द-गिर्द के लोगों पर प्रभाव पैदा करके बहुत ख़ुशी हासिल करते हैं और नतीजे के तौर पर कस्बे की रूमानी, दिलफेंक महिलाएँ बेकरारी और दीवानेपन की हद तक इन छैलों से मोहित रहती हैं। बुढ़ापे में ये लोग या तो शान्त स्वभाव के जमींदार बन जाते हैं या फिर पियक्कड़, और कभी-कभी

दोनों। इनके अन्दर अक्सर कई अच्छे गुण भी होते हैं, लेकिन कविता या रसिकता की मात्रा रत्ती भर भी नहीं।

ग्रुश्नीत्स्की को लच्छेदार भाषा में जोशीले, भावुकता-भरे भाषण देने की भी एक ही लत थी। जहाँ बातचीत का रुख़ रोज़मर्रा के विषयों के ऊपर उठा नहीं कि वह सामने वाले आदमी पर शब्दों की बौछार लगा देता। मैं तो कभी उससे बहस-मुबाहिसे में पार नहीं पाता था, क्योंकि न तो वह अपनी बात के खण्डन का जवाब देता, न यही सुनता कि सामने वाला क्या कह रहा है। आपने ज़रा बोलना बन्द किया नहीं कि वह एक लम्बा-चौड़ा भाषण झाड़ना शुरू कर देता, जो ऊपर से तो आपकी बात से सम्बन्धित लगता, लेकिन दरअसल उसके अपने तर्कों और विचारों का ही विस्तार होता।

किसी हद तक वह हाज़िर-जवाब भी है। उसके जुमले अक्सर दिलचस्प होते हैं, मगर कभी तीखे या द्वेष-भरे नहीं। किसी को एक ही शब्द से ध्वस्त करना वह नहीं जानता। न तो उसे लोगों की पहचान है, न उनकी कमज़ोरियों या दुर्बलताओं की जानकारी; क्योंकि ज़िन्दगी भर वह अपने आप में ही डूबा और लवलीन रहा है। किसी रूमानी कथा का नायक बनना उसके जीवन का लक्ष्य और हार्दिक इच्छा है। इतनी बार उसने दूसरों को यह विश्वास दिलाने की कोशिश की है कि वह एक ऐसा आदमी है, जो इस संसार के लिए नहीं बना और इसीलिए उसकी तकदीर में किसी अनजान रहस्यमय मुसीबत का शिकार होना लिखा है कि उसने ख़ुद अपने आपको भी इस बात का क़रीब-क़रीब यकीन दिला दिया है। यही कारण है कि वह हमेशा अपने भारी-भरकम फ़ौजी कोट की इस कदर नुमाइश करता फिरता है।

मैं उसकी रग-रग से वाकिफ़ हूँ, और उसके भीतर तक झाँक सकता हूँ, इसीलिए वह मुझे पसन्द नहीं करता; यूँ ऊपर से हम लोगों का सम्बन्ध अच्छा-ख़ासा और गहरी दोस्ती का है। अपनी वीरता और अद्वितीय साहस के लिए ग्रुश्नीत्स्की बहुत प्रसिद्ध है; लेकिन मैंने उसे लड़ाई के मैदान में भी देखा है : वह अपनी तलवार नचाता हुआ, आँखें मूँद कर चिल्लाता हुआ, पागलों की तरह झपट कर धावा बोलता है। शूरता और साहस की यह किस्म कुछ अजीब और बहुत ग़ैर-रूसी लगती है।

मैं भी उसे ख़ास पसन्द नहीं करता, और मुझे लगता है कि एक न एक दिन हमारी एक-दूसरे से टक्कर होनी है, जिसका नतीजा हम दोनों में से किसी एक के हक में बहुत अफ़सोसनाक और दुखदायी साबित होगा।

उसका कॉकेशिया आना भी उसकी भावुक, रूमानी झक का ही नतीजा था।

मुझे पक्का यकीन है, अपने पैत्रिक गाँव से विदा होते समय किसी शाम उसने अपनी किसी सुन्दर पड़ोसिन से बड़ी कातर और दुख-भरी आवाज़ में कहा होगा कि वह फ़ौज में महज़ नौकरी करने नहीं, बल्कि मौत की तलाश में जा रहा है, क्योंकि... शायद इस जगह उसने हाथ से आँखें ढाँपते हुए कहा होगा, 'नहीं नहीं, तुम्हें इसका कारण नहीं जानना चाहिए! उसके विचार-मात्र से तुम्हारी सुकोमल पवित्र आत्मा काँप उठेगी। और मान लो, तुम जानना भी चाहो तो क्यों? मैं तुम्हारा क्या लगता हूँ? क्या तुम मेरे हृदय की भावनाओं को समझ सकती हो?' वग़ैरह, वग़ैरह।

उसने ख़ुद मुझे बताया था कि क- पल्टन में उसके भरती होने का कारण एक ऐसा रहस्य था, जिसे उसके और उसके ईश्वर के सिवा और कोई न जान सकेगा।

इस सबके बावजूद जब कभी ग्रुश्नीत्स्की अपने इस करूण, भावुक और दुख-भरे नकाब को उतार देता है, तब वह काफ़ी ख़ुशमिज़ाज, दिलचस्प और हँसमुख आदमी बन जाता है। मेरी इच्छा उसे महिलाओं की संगत में देखने की है, क्योंकि मेरा ख़याल है, उन्हीं के बीच वह अपने सबसे अच्छे और पसन्दीदा रूप में नज़र आने की कोशिश करता है।

पुराने दोस्तों की तरह हमने एक-दूसरे से सलाम-दुआ की और हाल-चाल पूछा। मैंने स्पा की ज़िन्दगी और वहाँ मुलाकात और मेल-जोल के काबिल दिलचस्प लोगों के बारे में ताबड़तोड़ प्रश्नों की झड़ी उस पर लगा दी।

"ख़ासी नीरस और ऊबाऊ ज़िन्दगी है हम लोगों की यहाँ," उसने ठण्डी साँस भरते हुए कहा, "जो लोग सुबह-सुबह यहाँ आ कर चश्मे का पानी पीते हैं, वे दुनिया के सारे मरीज़ों की तरह उत्साह-रहित और बेजान हैं, और जो शाम को बैठ कर शराबें उड़ाते हैं, वे दुनिया के उन सभी लोगों की तरह नाकाबिले-बर्दाश्त और असह्य हैं, जिन्हें भरपूर सेहत का वरदान मिला है। यों स्त्रियों की भी मण्डली है, मगर उससे कोई तसल्ली या ख़ुशी नहीं हासिल होती। बैठ कर ताश खेलना, फूहड़ तरीके से कपड़े पहनना और ग़लत-सलत फ्रेंच बोलना बस यही उनका शगल है। इस वर्ष मॉस्को से सैर करने के लिए आने वालों में सिर्फ़ रानी साहिबा लिगोव्स्काया और उसकी पुत्री ही हैं, लेकिन अभी उनसे मेरी मुलाकात नहीं हुई। मेरा यह फ़ौजी कोट ही जैसे मेरे बिरादरी-बाहर होने का ठप्पा हो। जो सहानुभूति और दया यह लोगों के दिलों में जगाता है, वह भीख और दान ही की तरह बेहद नागवार है।"

ठीक उसी समय दो महिलाएँ हमारे पास से होती हुईं, चश्मे की तरफ़ बढ़ गयीं; उनमें से एक अधेड़ और दूसरी एक दुबली-पतली, छरहरी नवयुवती थी। उनकी जनानी टोपियों के कारण मैं उनके चेहरे तो नहीं देख सका, मगर इतना ज़रूर कह सकता हूँ कि उन्होंने जो कपड़े पहन रखे थे, वे बेहद नफ़ीस और सुरुचि के उच्चतम स्तर के अनुरूप ही थे। युवती ने ऊँचे कॉलर वाली, हल्के सलेटी रंग की पोशाक पहन रखी थी और उसकी सुराहीदार लचीली गर्दन के गिर्द एक सुन्दर रेशमी रूमाल नफ़ासत से बँधा हुआ था। गहरे कत्थई रंग के जूतों ने उसके पतले-पतले नन्हें पैरों को टखनों तक इस नज़ाकत से ग़िलाफ़ की तरह ढँका हुआ था कि ख़ूबसूरती के भेदों से बिलकुल नावाकिफ़ आदमी भी, भले ही आश्चर्य से, अपनी साँस रोक लेता। उसकी नाजुक और हल्की, लेकिन गरिमा-भरी चाल में कुछ ऐसा कुँआरापन झलकता था, जिसे हालाँकि आँखों से छू कर महसूस किया जा सकता था, पर शब्दों में बयान करना सम्भव नहीं था। जब वह हमारे क़रीब से हो कर गुज़री तो उस समय कुछ वैसी ही मादक, मधुर गन्ध आस-पास के वातावरण में फैल गयी, जैसी किसी ख़ूबसूरत तरूणी के प्रेम-पत्र से कभी-कभी महक उठती है।

"यही रानी साहिबा लिगोव्स्काया हैं," ग्रुश्नीत्स्की ने बताया, "और उनकी बेटी, जिसे वे अंग्रेजी ढर्रे के मुताबिक 'मेरी' कहती हैं। इन लोगों को यहाँ आये अभी तीन ही दिन हुए हैं।"

"और तुम्हें तो इतने भर में ही उसका नाम तक पता चल गया लगता है।"

"यूँ ही इत्तफ़ाक से सुन लिया था," उसने संकोच से लाल पड़ते हुए जवाब दिया, "अलबत्ता मैं यह ज़रूर कबूल करूँगा कि उनसे मिलने की मुझे कत्तई इच्छा नहीं है। ये घमण्डी अभिजात-वर्गीय लोग हम सिपाहियों को निरे जंगली समझते हैं। उन्हें इससे क्या लेना-देना अगर एक नम्बरदार सैनिक टोपी के नीचे अक्ल और फ़ौजी कोट के भीतर धड़कता हुआ दिल भी छिपा हो?"

"बेचारा फ़ौजी कोट!" मुस्कुराते हुए मैंने कहा, "और ये साहब कौन हैं, जो उनकी ओर बढ़ कर इतनी विनम्रता से गिलास पेश कर रहे हैं?"

"अरे भई, वही मॉस्को का छैला रायेविच है! एक नम्बर का जुआरी, जैसा कि उसकी नीली वास्कट के ऊपर लटकती सोने की भारी ज़ंजीर से तुम पर ख़ुद-ब-ख़ुद ज़ाहिर हो जायेगा। ज़रा उसकी उस मोटी-सी छड़ी को तो देखो, एकदम जैसे रॉबिन्सन क्रूसो ही की हो! या उस दाढ़ी पर ग़ौर करो, जिसे उसने नुमाइशी ढंग से उगा रखा है! और उसके ये देहाती, मग्घा-कट बाल..."

"तुम तो आज मानो सारी मानव-जाति से ही ख़ार खाये बैठे हो।"

"और इसका उचित कारण है...."

"सच्च?"

अब तक वे दोनों महिलाएँ बावड़ी से चल दी थीं और फिर एक बार हमारे पास से गुज़र रही थीं। ग्रुश्नीत्स्की ने तुरन्त अपनी बैसाखी के सहारे एक नाटकीय मुद्रा धारण कर ली और पेंच में कुछ ऊँची आवाज़ में बोला, "मेरे दोस्त, मैं आदमियों से नफ़रत करता हूँ, ताकि उन्हें हिकारत से न देखूँ; अगर ऐसा न होता तो यह ज़िन्दगी एक घटिया स्वाँग बन कर रह गयी होती।"

इस पर उस ख़ूबसूरत राजकुमारी ने पीछे घूम कर इन शब्दों को बोलने वाले पर एक गहरी और खोजती हुई-सी नज़र डाली। हालाँकि वह नज़र बड़ी अस्पष्ट और भेद-भरी थी, मगर उपहास उसमें नाम को भी न था। इसके लिए मैंने मन-ही-मन ग्रुश्नीत्स्की को हृदय से बधाई दी।

"यह राजकुमारी मेरी वाकई बहुत ख़ूबसूरत है," मैंने उससे कहा, "उसकी आँखें तो बिलकुल मखमल की तरह हैं हाँ, हूबहू काली मखमल की तरह। मेरी सलाह है कि आगे से उसकी आँखों के बारे में बात करते समय तुम इसी फ़िकरे का इस्तेमाल किया करो। उसकी बरौनियाँ ऊपर की और नीचे की, दोनों इतनी घनी और लम्बी हैं कि सूरज की किरणों की छाया तक उसकी पुतलियों में नहीं पहुँच पाती। मुझे ऐसी आँखें बड़ी प्यारी लगती हैं ज़रा भी चमक के बिना और इतनी मुलायम कि लगता है, वे आपको सहला रही हों। और यह कि मेरे ख़याल से उसके पूरे चेहरे में उसकी आँखें ही सबसे अच्छी चीज़ हैं... क्या उसके दाँत भी सफ़ेद हैं? यह बहुत ज़रूरी है। अफ़सोस कि तुम्हारी शानदार उक्ति के जवाब में वह मुस्कुरायी तक नहीं।"

ग्रुश्नीत्स्की बुरा मान गया, "तुम तो एक ख़ूबसूरत युवती के बारे में इस तरह बात कर रहे हो, जैसे वह कोई ऊँची नस्ल की विलायती घोड़ी हो।" उसने नाराज़गी से कहा।

मैंने उसकी आवाज़ की नकल उतारते हुए पेंच ही में कहा, "मेरे दोस्त! मैं औरतों से नफ़रत करता हूँ, ताकि उनसे प्यार न कर सकूँ। अगर ऐसा न होता तो यह ज़िन्दगी एक भदेस नौटंकी बन कर रह गयी होती।"

यह कह कर मैं मुड़ा और चला आया।

आध घण्टे तक मैं लताओं से घिरी पगडण्डियों, कँकड़ीली चट्टानों और उनके बीच उगी हुई छोटी-छोटी झाड़ियों में टहलता-भटकता रहा। जब काफ़ी धूप चढ़ आयी तो मैं तेज़-तेज़ घर की ओर लौट पड़ा। बावड़ी के पास से गुज़रते समय, मैं उस छते हुए गलियारे की छाया में कुछ देर सुस्ताने को ठहर गया और यों अनायास एक अजीब-से तमाशे का चश्मदीद गवाह बनने का मौक़ा पा गया। अभिनेताओं के खड़े होने की स्थिति इस प्रकार थी : बुढ़िया रानी साहिबा उस मॉस्को वाले बाँके के साथ गलियारे में एक बेंच पर बैठी हुई थीं और ऐसा लगता था, वे किसी गम्भीर वार्तालाप में मशगूल थीं। राजकुमारी ने, प्रकट ही, पानी का अपना आख़िरी गिलास पिया था और बावड़ी के पास, सोच में डूबी, इधर से उधर टहल रही थी। ग्रुश्नीत्स्की बावड़ी के पास खड़ा था। आस-पास और कोई नहीं था।

मैं ज़रा नज़दीक सरक आया और गलियारे के एक कोने के पीछे छिप कर खड़ा हो गया। तभी ग्रुश्नीत्स्की ने अपना मग रेत पर गिरा दिया और झुक कर उसे उठाने की कोशिश करने लगा, मगर अपनी घायल टाँग की वजह से ऐसा करना उसके लिए मुश्किल हो गया था। बेचारा! अपनी बैसाखी पर झुकते हुए उसने मग को उठाने की कैसी-कैसी कोशिशें कीं, पर सब बेकार! भावों को सरलता से प्रकट करने वाले उसके सुन्दर चेहरे पर पीड़ा की गहरी छाप सचमुच उभर आयी थी।

राजकुमारी मेरी ने इस सबको मुझसे भी ज़्यादा अच्छी तरह देखा।

किसी चिड़िया से भी ज़्यादा फुर्ती से दौड़ कर वह उसके पास जा पहुँची, नीचे झुक कर गिलास उठाया और चेहरे पर एक अकथनीय मधुर भाव लाकर, कुछ झुकते हुए, उसे पकड़ा दिया। फिर शर्म से बुरी तरह सुर्ख़ पड़ते हुए, उसने गलियारे की ओर निगाहें फेंकीं; मगर यह अन्दाज़ा लगा कर कि उसकी माँ ने कुछ भी नहीं देखा है, उसने फिर इतमीनान और थिरता हासिल कर ली। ग्रुश्नीत्स्की धन्यवाद देने के लिए जब तक मुँह खोलता, वह काफ़ी दूर जा चुकी थी। मिनट भर बाद ही अपनी माँ और उस बाँके के साथ वह गलियारे से निकली, लेकिन ग्रुश्नीत्स्की के पास से गुज़रते समय उसके चेहरे का भाव फिर राजकुमारियों जैसा ही मर्यादित, औपचारिक और गम्भीर हो चुका था, यहाँ तक कि उसने ग्रुश्नीत्स्की की ओर एक बार भी सिर घुमा कर नहीं देखा। और इसीलिए वह यह भी नहीं देख पायी कि ग्रुश्नीत्स्की किन एकटक, उत्तप्त और आतुर निगाहों से तब तक उसका पीछा करता रहा जब तक कि वह पहाड़

की तलहटी में मुख्य-पथ के दोनों ओर खड़े नींबू के वृक्षों की ओट में ओझल न हो गयी। दूर, सड़क के दूसरे छोर पर, जब वह प्यातिगोर्स्क की सबसे शानदार इमारतों में से एक के फाटक में दौड़ती हुई-सी दाख़िल हुई, तब उसकी टोपी की एक आख़िरी झलक और मिली। बुढ़िया रानी साहिबा भी फाटक पर रायेविच को विदा करके राजकुमारी के पीछे-पीछे चली गयीं।

तब जा कर कहीं मुहब्बत के मारे उस बेचारे कैडेट को मेरी उपस्थिति का भान हुआ।

"क्या तुमने भी देखा?" मेरा हाथ कस कर पकड़ते हुए उसने पूछा, "वह सचमुच देवी है।"

"कैसे?" मैंने एकदम अनजान बनने का नाटक करते हुए पूछा।

"तो तुमने नहीं देखा?"

"हाँ, हाँ, मैंने यह ज़रूर देखा कि उसने किस तरह तुम्हारा गिलास उठाकर, तुम्हें दिया। लेकिन अगर बाग़ का कोई रखवाला कहीं आस-पास होता, तो निश्चय ही वह भी यही करता, बल्कि बख़्शीश की आशा और लालच में शायद कुछ और फुर्ती दिखाता। हालाँकि इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है कि उसने तुम पर तरस खाया; अपनी घायल टाँग पर खड़े होते समय तुमने चेहरा ही कुछ ऐसा दयनीय बना लिया था कि..."

"जब उसकी आत्मा की उज्ज्वल ज्योति उसकी आँखों में झिलमिला उठी थी, तब भी तुम पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा?"

"न्ना।"

मैं साफ़ झूठ बोल रहा था, लेकिन उसे भड़काना और उत्तेजित करना चाहता था।

दरअसल, प्रतिवाद करने की प्रबल इच्छा सहज रूप से मेरे स्वभाव का अंग बन गयी है। मेरा सारा जीवन हृदय या विवेक के आदेशों के ख़िलाफ़ दुखद और विफल विरोध का एक लम्बा सिलसिला रहा है। किसी उत्साही आदमी की मौजूदगी मुझे शिशिर के दिनों की तरह सर्द और ठण्डा बना देती है और मुझे यकीन है, लगातार कुछ दिनों तक किसी बेजान, भाव-शून्य और निरूत्साही आदमी की संगत मुझे एक उत्कट स्वप्न-द्रष्टा में बदल देगी। मैं यह भी माने लेता हूँ कि पल भर के लिए एक अप्रिय, लेकिन चिरपरिचित-सी भावना मेरे दिल में हौले से रेंग उठी थी और यह

भावना थी ईर्ष्या की। मैं इतने स्पष्ट रूप से 'ईर्ष्या' शब्द का प्रयोग इसलिए कर रहा हूँ कि मैं अपने साथ हमेशा ईमानदारी बरतने का आदी रहा हूँ। और यह असम्भव है कि कोई भी युवक (जो इसी दुनिया का हो और अपनी ख़ुद-पसन्दी, गर्व और दिखावे का अभ्यस्त हो) अपने मनचले खयालों को बाँध लेने वाली औरत से मिलने के बाद, उस औरत को अपने ही जैसे किसी दूसरे नितान्त अपरिचित व्यक्ति के प्रति अनुग्रह दिखाते हुए देखकर, अप्रिय प्रभावों से अछूता या ईर्ष्या-मुक्त रह सके।

ग्रुश्नीत्स्की और मैं ख़ामोशी से चलते हुए पहाड़ी के नीचे उतर आये और छायादार मुख्य पथ पर टहलते-टहलते उस मकान की खिड़कियों के सामने से गुज़रे, जिसमें हमारी वह सुन्दरी दाख़िल हुई थी। इत्तफ़ाक से वह खिड़की के पास ही बैठी थी। मेरी आस्तीन खींचते हुए, ग्रुश्नीत्स्की ने उसकी ओर कुछ ऐसी भीगी, रहस्यमयी और मृदु नज़र से देखा, जो अक्सर न तो औरतों को छू पाती हैं, न उनके दिल में कोई प्रतिक्रिया ही जगा पाती है। मैंने हाथ में पकड़े लार्न्येट को ऊँचा करके उधर देखा, और पाया कि जहाँ ग्रुश्नीत्स्की की दृष्टि से उसके मुख पर एक मधुर मुस्कान खेल गयी, वहीं मेरी अशिष्टता ने उसे बहुत नाराज़ कर दिया था। ठीक भी था, भला कॉकेशिया के एक आम फ़ौजी अफ़सर को, मॉस्को से आयी राजकुमारी की ओर अपनी दूरबीन उठाने की हिम्मत कैसे हुई?

मई १३

आज सुबह डॉक्टर मुझसे मिलने मेरे डेरे पर चला आया। नाम तो उसका वेर्नर है, मगर है वह रूसी! इसमें हैरत की कोई बात नहीं। एक बार मेरा परिचय इवामोव नाम के एक आदमी से हुआ था, जो जर्मन था।

वेर्नर कई मायनों में एक अजीबोग़रीब और अनोखा आदमी है। अधिकांश डॉक्टरों की तरह वह सन्देहशील और भौतिकवादी तो है ही, लेकिन वह कवि भी है, और वह भी पूरी गम्भीरता और सच्चाई से; अपनी सारी कारगुज़ारियों में, और अक्सर बातचीत में भी, वह शायराना है; हालाँकि उसने ज़िन्दगी में दो छन्द न लिखे होंगे। उसने आदमियों के दिलों के एक-एक ज़िन्दा तार को, उतनी ही बारीकी और गहराई से जाँचा-परखा

है, जितनी बारीकी और गहराई से लोग मुर्दे की चीर-फाड़ करके उसकी रग-रग को जाँचते-परखते हैं; लेकिन जिस तरह एक कुशल जर्राह, बुख़ार का इलाज नहीं कर पाता, उसी तरह वेर्नर भी आज तक अपने ज्ञान को काम में नहीं ला पाया है। उसूलन वह अपने मरीज़ों की पीठ-पीछे गुप-चुप उनकी हँसी उड़ाने का आदी है, मगर एक बार मैंने उसे एक मरते हुए सिपाही के लिए रोते हुए भी देखा।

वह ग़रीब था और करोड़ों हासिल करने के सपने देखा करता था, लेकिन क्या मज़ाल, जो पैसे के लालच में अपने रास्ते से रत्ती भर भी इधर-उधर हो जाय। एक बार उसने मुझे बताया कि अगर उसे मौक़ा मिले तो वह दोस्त की बजाय किसी दुश्मन का भला करना पसन्द करेगा, क्योंकि दोस्त पर किया गया उपकार, दान से फ़ायदा उठाने के बराबर है; जबकि इसके विपरीत नफ़रत उसी अनुपात में बढ़ती है, जिस अनुपात में दुश्मन की उदारता। उसकी ज़बान बड़ी ज़हरी थी और उसके जुमलों की छाप लग जाने पर न जाने कितने भले-मानसों की गिनती अच्छे-ख़ासे बेवकूफ़ों में होने लगी थी। उसके प्रतिद्वन्द्वियों स्पा के ईर्ष्यालु डॉक्टरों ने यह अफ़वाह उड़ा दी थी कि वह अपने मरीज़ों की नकलें उतार कर उनकी हँसी उड़ाता है। इस बात से वे जामे से बाहर हो गये और नतीजा यह हुआ कि वेर्नर को क़रीब-क़रीब अपने सभी मरीज़ों से हाथ धोना पड़ा। उसके दोस्तों, यानी कॉकेशिया में तैनात सचमुच भले और अच्छे लोगों ने, उसके खोये हुए सम्मान और इज़्ज़त को फिर से प्रतिष्ठित करने की काफ़ी कोशिशें कीं, लेकिन सफल न हुए।

उसका चेहरा-मोहरा कुछ इस किस्म का था, जो पहली नज़र में देखने वाले पर कोई ख़ास अच्छा प्रभाव नहीं छोड़ता, लेकिन बाद में चल कर आकर्षक लगने लगता है, जब आँखें बेडौल और ऊबड़-खाबड़ नख-शिख के पीछे एक उदात्त और आजमाई हुई आत्मा के लक्षण पहचानना सीख जाती हैं। कई बार ऐसा हुआ है कि औरतें उस जैसे आदमियों से पागलपन की हद तक प्रेम करने लगीं और उनकी कुरूपता को चिरयुवा कामदेव के सौन्दर्य से भी बदलने को तैयार नहीं हुईं। औरतों को इस बात का श्रेय तो देना ही पड़ेगा कि उनमें आत्मिक सौन्दर्य को परखने का एक सहज-स्वाभाविक गुण होता है, शायद यही कारण है कि वेर्नर जैसे लोग औरतों को इस शिद्दत से प्यार करते हैं।

वेर्नर नाटे कद का, दुबला-पतला और बच्चों जैसा सुकुमार आदमी है। बायरन की तरह उसकी भी एक टाँग दूसरी से कुछ छोटी है; शरीर के हिसाब से सिर बहुत बड़ा है। वह अपने बाल छोटे कटवा कर रखता है और इस वजह से उसकी खोपड़ी

की जो असमताएँ नुमायाँ होती हैं, वे अपने अजीबोग़रीब, परस्पर-विरोधी ऊबड़-खाबड़पन से कपाल-विज्ञान के विशेषज्ञों को भी हैरत में डाल देतीं। उसकी छोटी-छोटी, काली और चिर-चंचल आँखें निरन्तर सामने बैठे आदमी के विचारों की छान-बीन करती रहतीं। वह हमेशा बेदाग़, नफ़ीस और सलीकेदार कपड़े पहनता है, जिनसे उसकी सुरुचि का पता चलता है। उसके छोटे-छोटे, उभरी नसों वाले कृशकाय हाथों पर हल्दिया रंग के दस्ताने चढ़े रहते, कोट-टाई और वास्कट हमेशा काले ही रंग की होती! नौजवानों के गुट ने उसका नाम मेफ़िस्टोफ़ेलीस रख दिया था और ऊपर से हालाँकि वह इस नाम का बुरा मानता था और चिढ़ता था, लेकिन हकीकत यह थी कि इससे उसका अहं ही सन्तुष्ट होता था।

हमने बहुत जल्द एक-दूसरे को पहचान लिया और साथी बन गये क्योंकि मैं 'दोस्त' बन सकने के काबिल नहीं हूँ दोस्ती मेरे बस के बाहर की बात है। दो दोस्तों में एक हमेशा दूसरे का ग़ुलाम बन कर रहता है, हालाँकि इस बात को उनमें से कोई स्वीकार नहीं करेगा। ग़ुलाम मैं बन नहीं सकता, और दूसरे पर हावी होने, उसे अपना ग़ुलाम बनाने का काम बड़ा ही मुश्किल और तकलीफ़देह है, क्योंकि इसके लिए तिकड़म और धोखे की भी ज़रूरत होती है; इसके अलावा, हावी होने के लिए मेरे पास अपने नौकर हैं और अपना धन! एक-दूसरे से हमारी जान-पहचान कुछ इस तरह से हुई :

स में गुल-गपाड़ा मचाते और उधम जोतते नौजवानों की एक विशाल भीड़ के बीच मैं पहली बार वेर्नर से मिला। शाम ख़त्म होते-न-होते बातचीत के रुख़ ने एक दार्शनिक और आध्यात्मिक दिशा पकड़ ली। हम लोग विश्वासों और आस्थाओं पर बातें कर रहे थे, क्योंकि हममें से हरेक के अपने अलग-अलग विश्वास और मान्यताएँ थीं।

"भई, जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं तो सिर्फ़ एक ही चीज़ में विश्वास करता हूँ..." डॉक्टर ने कहा।

"वह क्या?" अब तक गुम-सुम बैठे इस आदमी की राय सुनने के लिए उत्सुक होकर, मैं पूछ बैठा।

"...कि देर या सबेर, किसी सुहानी सुबह मेरी मौत हो जायेगी," उसने जवाब दिया।

"तब तो मेरी स्थिति आपसे बेहतर है," मैंने कहा, "क्योंकि इसके अलावा मेरी

एक और भी धारणा है; वह यह कि मुझे एक निहायत ही गन्दी और घृणित रात में इस धरती पर आने का दुर्भाग्य प्राप्त हुआ।"

हम दोनों को छोड़ कर बाकी सब लोगों की यही राय थी कि हम शुद्ध बकवास कर रहे हैं, मगर सच्चाई यह थी कि किसी और के पास इससे ज़्यादा अक्लमन्दी और चतुराई की बात कहने के लिए नहीं थी। उसी क्षण से हम दोनों ने एक-दूसरे को भीड़ से अलग करके छाँट लिया। उसके बाद अक्सर हमलोग मिलते, और तब तक पूरी गम्भीरता से अमूर्त, गूढ़ और पेचीदा मसलों पर बहस करते, जब तक कि हमें यह न महसूस होने लगता कि हम एक-दूसरे की टाँग खींच रहे हैं। तब, एक-दूसरे की आँखों में अर्थ-भरी नज़रों से कुछ इस तरह देखकर, जैसे कि सिसेरो हमें बताता है, रोम के शकुन विचारने वाले देखा करते थे हम दोनों ठठा कर हँस पड़ते और इस बात से सन्तुष्ट हो कर विदा होते कि शाम बड़े मजे में बीती।

जिस समय वेर्नर ने कमरे में प्रवेश किया, मैं छत पर आँखें गड़ाये, हाथ सिर के पीछे टिकाये, दीवान पर लेटा हुआ था। उसने छड़ी एक कोने में टिकायी, आराम से कुर्सी पर आसन जमाया और जँभाई लेते हुए बताया कि बाहर गर्मी किस कदर बढ़ती जा रही थी। मैंने जवाब में उसे यह सूचना दी कि मक्खियों ने मुझे किस बुरी तरह तंग कर मारा है। फिर हम दोनों ख़ामोश हो गये।

"तुमने इस बात पर ज़रूर ध्यान दिया होगा, मेरे प्यारे डॉक्टर," मैंने कहा, "कि बेवकूफ़ों के बिना यह दुनिया कितनी ऊबाऊ और नीरस होती... अब यहाँ हम हैं दोनों के दोनों अक्लमन्द और समझदार इन्सान! हम दोनों पहले ही से यह जानते हैं कि हर चीज़ के बारे में अन्तहीन बहस की जा सकती है; यही वजह है कि हम लोग कभी बहस नहीं करते। हम एक-दूसरे के लगभग सभी अन्तरंग विचारों से वाकिफ़ हैं; महज़ एक शब्द हमें पूरी कहानी बता देता है, और तीन छिलके भेद कर हमलोग अपनी भावनाओं के सार को देख लेते हैं। उदास करने वाली या दुख-भरी बातें हमें हास्यास्पद लगती हैं और हास्यास्पद बातों पर हमें दुख होता है! अगर तुम जानना चाहो तो मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि अपने आप को छोड़कर, दुनिया की और किसी चीज़ में हमारी कोई दिलचस्पी नहीं है। इसलिए हम दोनों के बीच भावनाओं और विचारों का कोई आदान-प्रदान सम्भव नहीं है, क्योंकि एक-दूसरे के बारे में जो कुछ हम जानना चाहते हैं, वह सब हम जानते ही हैं, और उससे ज़्यादा कुछ भी

जानने की हमारी इच्छा नहीं है। तो, बात करने के लिए बस सिर्फ़ एक चीज़ बाकी रह जाती है और वह है ताज़ा ख़बरें! क्या तुम्हारे पास मुझे बताने लायक कोई ख़बर नहीं है?"

इस लम्बे भाषण से थक कर मैंने आँखें बन्द कर लीं और जँभाई ली!

"तुम्हारी इस लम्बी-चौड़ी बकवास के पीछे सिर्फ़ एक विचार या मकसद है," थोड़ा रुक कर सोचने के बाद उसने जवाब दिया।

"एक नहीं, दो!" मैंने छूटते ही कहा।

"अच्छा तो उनमें से एक तुम बताओ और मैं फ़ौरन बता दूँगा कि दूसरा क्या है।"

"ठीक! तुम शुरू करो!" मैंने उसी तरह छत की ओर देखते और मन ही मन मुस्कुराते हुए कहा।

"तुम किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में कुछ ब्योरे जानना चाहते हो, जो हाल ही में इस पहाड़ी कस्बे में आया है, और मैं इस बात का अन्दाज़ा लगा सकता हूँ कि वह कौन है, क्योंकि वह व्यक्ति ख़ुद तुम्हारे बारे में पहले ही पूछ-पड़ताल कर चुका है।"

"डॉक्टर! सचमुच हमें एक-दूसरे से बात करने की कोई ज़रूरत नहीं! हम यों ही एक-दूसरे के विचारों को पढ़ सकते हैं।"

"अच्छा तो अब दूसरा..."

"दूसरा विचार यह है कि ख़ुद कुछ कहने की बजाय मैं तुम्हें इस बात के लिए राजी करना चाहूँगा कि तुम्हीं कुछ कहो; अव्वल तो इसलिए कि बोलने की अपेक्षा सुनना कम थकाऊ है; दूसरे, सुनने में आदमी अपने आप से कुछ ज़ाहिर नहीं करता; तीसरे, आदमी को यह मौक़ा मिलता है कि वह दूसरे के रहस्यों को जान सके; और चौथी वजह यह है कि तुम जैसे बुद्धिमान लोग बोलने वाले की अपेक्षा, सुनने वाले को ही तरजीह के काबिल समझते हैं। अच्छा, अब हम अपनी बात पर आयें रानी साहिबा लिगोव्स्काया के पास तुमसे मेरे बारे में कहने के लिए क्या-कुछ था?"

"तुम्हें पूरा यकीन है कि राजकुमारी मेरी ने नहीं कहा होगा?"

"बिलकुल।"

"क्यों?"

"क्योंकि राजकुमारी मेरी ने ग्रुश्नीत्स्की के बारे में पूछा होगा।"

"मान गये भाई! तुम्हारे अन्दर कमाल की सूझ-बूझ और सियानापन है। राजकुमारी ने कहा उसे इस बात का पक्का यकीन था कि साधारण सिपाहियों वाला कोट पहने वह युवक, किसी द्वन्द्व-युद्ध में हिस्सा लेने के कारण ही, ओहदे से हटा कर आम सिपाही बना दिया गया है..."

"आशा है, तुमने उस बेचारी के दिमाग़ से इस प्यारी-सी ग़लत-फ़हमी को दूर करने का कष्ट नहीं किया होगा..."

"कतई नहीं।"

"मामला गहरा होता जा रहा है," मैं ख़ुशी से एकदम बोल उठा, "और हम कोशिश करेंगे कि इस मनोरंजक प्रहसन के लिए हम एक उपयुक्त उपसंहार जुटा सकें। ज़ाहिर है, तकदीर नहीं चाहती कि मैं ऊबा-उकताया बैठा रहूँ।"

"मेरा ख़याल है, इस बार बेचारा ग्रुश्नीत्स्की तुम्हारा शिकार बनेगा," डॉक्टर ने कहा।

"अच्छा तो फिर उसके बाद क्या हुआ डॉक्टर?"

"रानी साहिबा ने कहा कि तुम्हारा चेहरा तो जाना-पहचाना-सा लगता है। मैंने कहा, हो सकता है, सेण्ट पीटर्सबर्ग की किसी सभा-सोसाइटी में कहीं वे तुमसे मिली होंगी, और मैंने तुम्हारा नाम बताया। वे तुम्हारे बारे में जानती थीं। लगता है, तुम्हारे कारनामों ने वहाँ काफ़ी सनसनी फैला रखी है। उसके बाद रानी साहिबा ने विस्तार से तुम्हारी कारगुजारियों के बारे में बताना शुरू किया; शायद वे बीच-बीच में लोगों से सुनी-सुनायी बातों में अपनी तरफ़ से भी नमक-मिर्च मिला रही थीं। उनकी लड़की भी, आधुनिक शैली में लिखे गये किसी उपन्यास के नायक के रूप में तुम्हारी कल्पना करती हुई, उन बातों को दिलचस्पी से सुन रही थी। मैंने रानी साहिबा को बीच में नहीं टोका, हालाँकि मैं जानता था कि वे सरासर बकवास कर रही हैं।"

"वाह मेरे अच्छे और काबिल दोस्त!" मैंने अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा! डॉक्टर ने उत्साह और गर्म-जोशी से उसे दबाया और बोला :

"अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हारा परिचय करा दूँ..."

"भाई जान," मैंने दोनों हाथ फैलाते हुए कहा, "क्या आपने किसी को नायकों का बाकायदा परिचय कराते कभी सुना है? वे तो अपनी प्रेयसी का परिचय उसे किसी ख़तरे से बचाते हुए ही प्राप्त करते हैं..."

"तो क्या तुम सचमुच राजकुमारी के प्रेम के आकांक्षी हो?"

"अरे नहीं यार, कतई नहीं, बल्कि बात इसके एकदम उलट है। आख़िर बाज़ी मेरी ही रही न डॉक्टर, क्योंकि अभी तक तुम मुझे समझ नहीं पाये। फिर भी तुम्हारी नासमझी से मुझे कुछ खीझ-सी हो रही है," पल भर चुप रह कर मैंने बात ज़ारी रखी, "मैंने यह नियम बना रखा है कि अपने विचारों को मैं ख़ुद कभी प्रकट नहीं करता, और जब दूसरे उनके बारे में तरह-तरह की अटकलें लगाते हैं या उन्हें ताड़ लेते हैं, तब मुझे बड़ा मज़ा आता है; क्योंकि उस दशा में ज़रूरत पड़ने पर उनसे साफ़ मुकर जाने का रास्ता मेरे हाथ में रहता है। ख़ैर, तुम उन माँ-बेटी की बात सुनाओ। किस तरह के लोग हैं वे?"

"सबसे पहली बात तो यह कि ये रानी साहिबा पैंतालीस बरस की औरत हैं," वेर्नर ने बताया, "उनका हाजमा बिलकुल दुरूस्त, बल्कि कमाल का है, हालाँकि उनके खून का दौरा ठीक नहीं है, जैसा कि उनके गालों पर उभरे हुए सुर्ख़ चकत्तों से साफ़ ज़ाहिर होता है। अपनी ज़िन्दगी का बाद का आधा हिस्सा उन्होंने मॉस्को में गुज़ारा है, जहाँ निष्क्रियता, आलस और निठल्लेपन की वजह से उनके शरीर पर वजन और चर्बी बढ़ गयी है! उन्हें छोटे-छोटे, चटपटे लतीफ़ों का बड़ा शौक है और कई बार जब बेटी कमरे में नहीं होती, तो वे बहुत-सी ऐसी बातें भी कह जाती हैं, जिन्हें सभ्य समाज में अच्छा नहीं समझा जाता। उन्होंने मुझे बताया कि उनकी बेटी कबूतर की तरह अबोध और भोली-भाली है, हालाँकि इस बात का मुझसे क्या मतलब हो सकता था, मैं नहीं जानता? मैं तो उन्हें यह तसल्ली देने वाला था कि वे इतमीनान रखें, मैं इस राज को किसी से ज़ाहिर नहीं करूँगा। रानी साहिबा गठिया का इलाज करा रही हैं, लेकिन बेटी भगवान जाने किस चीज़ का! मैंने तो उन दोनों को रोज़ दो-दो गिलास गन्धक का पानी पीने और हफ़्ते में दो बार उसी में नहाने की सलाह दे दी है। प्रकट ही, रानी साहिबा लोगों को बात-बात में हुक्म देने की आदी नहीं जान पड़तीं और अपनी बेटी की बुद्धि और ज्ञान की काफ़ी कदर करती हैं, जिसने बायरन को अंग्रेजी में पढ़ा है और जो बीज-गणित भी जानती हैं... ऐसा लगता है, मॉस्को की युवतियों ने लिखने-पढ़ने की तरफ़ ध्यान देना शुरू कर दिया है और यह मेरे ख़याल में उनके हक में अच्छा ही है। आम तौर से हमारे देश के ज़्यादातर आदमी इतने बदतमीज होते हैं कि पढ़ी-लिखी समझदार महिलाओं को उनसे दोस्ती बढ़ाना या इश्कबाज़ी करना शायद बरदाश्त के बाहर लगता है। बुढ़िया रानी साहिबा को तो नौजवान बहुत पसन्द हैं, मगर राजकुमारी उन्हें किसी कदर उपेक्षा की निगाह से देखती है वही मॉस्को वालों की पुरानी आदत! मॉस्को की स्त्रियाँ तो सिर्फ़ चालीस वर्षीय बुद्धिमानों पर ही

टूटती हैं।"

"क्यों डॉक्टर, क्या तुम कभी मॉस्को में भी थे?"

"हाँ, मैं था। वहाँ मेरी मज़े की प्रैक्टिस थी।"

"अच्छा, अब मेहरबानी करके वह बात तो पूरी कर दो।"

"मेरा ख़याल है, जो कुछ बताने लायक है, वह सब मैं तुम्हें बता चुका हूँ... अरे हाँ, एक बात और है... राजकुमारी भावनाओं, जज़्बों और इसी तरह की दूसरी बातों के बारे में बातें करने की काफ़ी शौकीन जान पड़ती है। उसने एक जाड़ा पीटर्सबर्ग में गुज़ारा था, मगर वह शहर और ख़ास कर वहाँ का समाज उसे पसन्द नहीं आया। प्रकट ही, वहाँ उसकी आव-भगत जोश-ख़रोश से नहीं की गयी होगी।"

"उनकी कोठी पर आज तुम्हारी मुलाकात किसी और से तो नहीं हुई?"

"हाँ, हुई थी। एक एडजुटेण्ट था सेना की रक्षक-पंक्ति का एक लकदक, बदमिज़ाज अफ़सर; और एक महिला, जो हाल ही में आये लोगों में से थी, रानी साहिबा के पति की कोई रिश्तेदार! बड़ी सुन्दर, लेकिन मेरे ख़याल में बहुत बीमार भी! क्या उसे बावड़ी पर देखने का इत्तफ़ाक तुम्हें नहीं मिला? उसका कद मझोला, बाल सुनहरे, नख-शिख सुघड़ और रंग तपेदिक के रोगी-सा है, और उसके दायें गाल पर एक छोटा-सा काला तिल है। उसका चेहरा जिस ख़ूबी से उसके अन्दर के भावों को प्रकट करता है, उसे देख कर तो मैं चकित रह गया।"

"तिल!" मैंने बुदबुदा कर कहा, "क्या यह सम्भव है?"

डॉक्टर ने ग़ौर से मुझे देखा और मेरे सीने पर अपना हाथ रख कर थिर-गम्भीर स्वर में बोला, "तुम उसे जानते हो!"

मेरा दिल सचमुच आम तौर की अपेक्षा ज़्यादा तेज़ी से धड़क रहा था।

"इस बार ख़ुशी मनाने की बारी तुम्हारी है," मैंने कहा, "बस मुझे इतना विश्वास है कि तुम मेरा राज़ नहीं खोलोगे। मैंने अभी तक उसे देखा तो नहीं है, मगर मुझे यकीन है कि जो चित्र तुमने अभी-अभी खींचा है, वह उसी औरत का है, जिसे मैं बहुत पहले कभी प्यार करता था... मेरे बारे में उसे एक शब्द भी मत बताना, और अगर वह स्वयं ज़िक्र छेड़े, तो मेरी बुराई ही करना।"

"जैसी तुम्हारी इच्छा," वेर्नर ने कन्धे उचकाते हुए जवाब दिया।

उसके जाने के बाद, गहरी उदासी का एक ज्वार मेरी आत्मा पर छा गया। क्या तकदीर ही हम दोनों को एक साथ कॉकेशिया खींच लायी है या वह जानबूझ कर यहाँ आयी है इस ख़याल से कि मैं उसे यहाँ मिलूँगा? कैसी होगी हमारी यह मुलाकात? और फिर, यह वही है अथवा कोई और, इसका ही क्या भरोसा? मेरे अन्देशे ने कभी मुझे धोखा नहीं दिया था। दुनिया के पर्दे पर शायद ही कोई ऐसा दूसरा इन्सान हो, जिस पर अतीत इस तरह हावी, इस कदर छाया रहता हो, जितना कि मुझ पर। बीते हुए वक्त के हर सुख-दुख की याद अब भी मेरे दिल में दर्द की एक लहर पैदा करती है और निरपवाद रूप से हमेशा उन्हीं-उन्हीं तारों को झनझना देती है। मेरी मानसिक बनावट ही कुछ ऐसी बेवक़ूफ़ाना है, क्योंकि मैं कभी कुछ नहीं भूल पाता कुछ भी नहीं।

दोपहर के भोजन के बाद, छह बजे के क़रीब, मैं उसी छायादार मुख्य-पथ तक टहलता हुआ चला गया और मैंने पाया कि एक अच्छी-ख़ासी भीड़ वहाँ जमा थी। रानी साहिबा और उनकी बेटी एक बेंच पर बैठी थीं, उन्हें नौजवानों के एक झुण्ड ने घेरा हुआ था, जो लगातार उनकी तरफ़ मुखातिब थे और बड़े ग़ौर से उनकी बातें सुन रहे थे। मैंने ज़रा फ़ासले पर अपने लिए एक दूसरी बेंच खोज ली और उस पर जम गया; फिर, उधर से गुज़रने वाले, अपनी जान-पहचान के दो अफ़सरों को रोककर, मैं उन्हें एक क़िस्सा सुनाने लगा। प्रकट ही उन्हें उस क़िस्से में मज़ा आ रहा था, क्योंकि वे पागलों की तरह ठहाके लगा रहे थे। राजकुमारी को घेर कर खड़े हुए छैलों में से कुछेक, उत्सुकतावश, मेरी बेंच की ओर खिंच आये; फिर एक-एक करके बाकी लोगों ने भी राजकुमारी का साथ छोड़ दिया और मेरे ही दल में आ मिले। मैं बिना रुके, लगातार बातें करता रहा और उन्हें लतीफ़े के बाद लतीफ़ा सुनाता रहा, जो मूर्खता की हद तक मनोरंजक थे; इसके साथ-साथ मैं सड़क पर आने-जाने वाले अजीबोग़रीब लोगों का मज़ाक कुछ ऐसी दुष्टता से उड़ाता रहा, जो कहीं-कहीं तो द्वेष की सीमा को भी छू जाती थी। इसी तरह मैं सूरज डूबने तक अपने सुनने वालों का मनोरंजन करता रहा। राजकुमारी अपनी माँ की बाँह-में-बाँह डाले, एक लँगड़ाते हुए बुड्ढे को साथ लिये, चहलकदमी करती हुई कई बार मेरे पास से गुज़री और कितनी ही बार, जब उदासीनता और

उपेक्षा दर्शाने की कोशिश करने के लिए उसकी निगाहें मुझ पर टिकीं भी तो उनसे खीझ और झुँझलाहट ही व्यक्त हुई।

"वह तुम लोगों को क्या सुना रहा था?" उसने एक युवक से पूछा, जो सिर्फ़ शिष्टता के ख़याल से उसके पास लौट गया था। "ज़रूर कोई रोमांचकारी कहानी होगी लड़ाई के मैदान में उसकी बहादुरी और वीरता के बारे में, यकीनन।" उसने कुछ ऊँची आवाज़ में, स्पष्ट ही मेरा तिरस्कार करने के इरादे से कहा।

'आख़्ख़ाह!' मैंने मन-ही-मन कहा, "तो तुम बेतरह खीझ गयी हो मेरी प्यारी राजकुमारी! अभी रुको और देखती जाओ आगे और बहुत कुछ होना है।"

ग्रुश्नीत्स्की, पल भर के लिये भी उसे आँखों से ओझल होने का मौक़ा न देते हुए, किसी वन्य-पशु की तरह चुपचाप उसकी घात में लगा रहा है। मैं शर्त बद सकता हूँ कि कल वह रानी साहिबा से अपना परिचय करवाने के लिए किसी-न किसी को पकड़ लायेगा। वे भी उससे मिल कर बहुत ख़ुश होंगी, क्योंकि वे बुरी तरह उकतायी हुई हैं।

मई १६

पिछले दो दिनों में चीज़ें बड़ी तेज़ी से घटित हुई हैं। राजकुमारी यकीनन मुझसे नफ़रत करती है। मुझे लोगों से पता चला है कि उसने दो-तीन बहुत ही तीखे, लेकिन इसके बावजूद मेरे अहं को सन्तुष्ट करने वाले फ़िकरे मुझे लक्ष्य करके कहे हैं। उसे यह बहुत अजीब लगता है कि मैं जो सभ्य समाज और सभा-सोसाइटी का इस कदर आदी हूँ और इसके साथ ही पीटर्सबर्ग में रहने वाले उसके रिश्तेदारों काकियों-मामियों, बहनों-भाइयों से इतनी घनिष्टता के स्तर पर परिचित हूँ यहाँ उसके परिचित होने की कोई कोशिश नहीं कर रहा। बावड़ी और मुख्य-पथ पर रोज़ एक-दूसरे से हमारा आमना-सामना होता है और मैं हर बार, लगभग निरपवाद सफलता से, उसके चाहने वालों को भड़कीले, लक-दक एड्जुटेण्टों; फीके चेहरों वाले मॉस्कोवासियों और दूसरे प्रशंसकों को लुभा कर उससे छीनते हुए अपने दल में मिलाने की पूरी कोशिश करता हूँ। मेहमान-नवाज़ी करने से मुझे हमेशा बड़ी नफ़रत रही है, लेकिन मेरा घर आजकल रोज़ ही चाय पर, दोपहर के खाने पर, या ताश की महफ़िलों पर, मेहमानों से भरा रहता है; और लीजिए, उसकी आँखों की कशिश पर मेरी शैम्पेन का आकर्षण फ़तह हासिल करता है।

कल उससे मेरी मुठ-भेड़ चेलाख़ोव की दुकान में हो गयी, जहाँ वह एक निहायत उम्दा फ़ारसी ग़ालीचे के लिए मोल-भाव कर रही थी और अपनी माँ से मिन्नते कर रही थी कि वे पैसे का मुँह न देखें, क्योंकि वह गालीचा उसके कमरे में सचमुच बहुत खिलेगा... मैंने कीमत से चालीस रूबल अधिक दिये और उसकी नाक के नीचे से गालीचा ले कर शान से चला आया; और इसके इनाम में मुझे निहायत ही दिल-फ़रेब ग़ुस्से से भरी एक तिरछी नज़र पेश की गयी। दोपहर के भोजन के समय मैंने जान-बुझ कर गालीचे को अपने चेरकस घोड़े की पीठ पर डलवाया और उसे राजकुमारी के घर की खिड़कियों के सामने से घुमा लाने का आदेश दिया। वेर्नर ने, जो उस समय उनके यहाँ गया हुआ था, मुझे बाद में बताया कि इस तमाशे का बड़ा ही विचित्र और नाटकीय असर पड़ा।

राजकुमारी मेरे ख़िलाफ़ एक फ़ौज तैयार करना चाहती है औग मैंने यह भी देखा है कि उसकी मौजूदगी में दो एडजुटेण्ट मुझे बड़े रुख़े और संक्षिप्त 'नमस्कार' करते हैं, हालाँकि मज़ा यह है कि वे दोनों ही मेरे घर हर रोज़ दावतें उड़ाते हैं।

आजकल ग्रुश्नीत्स्की ने बड़ी रहस्यमय-सी चाल-ढाल अख़्तियार कर ली है; दोनों हाथ पीठ-पीछे बाँधे, वह अपने आस-पास के लोगों से जैसे बिसरा हुआ, अपने में ही खोया-खोया चलता है। उसके पैर का घाव भी सहसा बिलकुल भर गया है और वह अब चलते समय प्रायः नहीं ही लँगड़ाता। आख़िरकार उसने बुढ़िया रानी साहिबा से बात करने और राजकुमारी की सराहना में दो शब्द कहने का भी अवसर खोज ही लिया। राजकुमारी, प्रकट ही, बहुत ज़्यादा भेदभाव नहीं बरतती, क्योंकि उसी दिन से वह उसके अभिवादनों का उत्तर अत्यन्त मोहक मुस्कान से देने लगी है।

"तो क्या सचमुच तुम्हें लिगोव्स्की परिवार से मिलने की इच्छा नहीं है?" ग्रुश्नीत्स्की ने कल मुझसे पूछा था।

"बिलकुल।"

"वाकई! स्पा में तो उन्हीं का घर सबसे ज़्यादा सुखद और लुभावना है। यहाँ से सारे अच्छे-अच्छे स्थानीय लोग..."

"यार, स्थानीय लोगों की तो बात ही छोड़ो, मेरा जी तो अस्थानीय लोगों से भी भयंकर रूप से उकता चुका है। तुम तो इधर उनके यहाँ आने-जाने लगे हो न?"

"अभी तक तो नहीं। मैंने सिर्फ़ दो-एक मर्तबा ही रानी साहिबा और राजकुमारी से बातें की हैं। तुम तो ख़ुद जानते हो, घर बुलाये जाने के न्योते के लिए अपनी ओर से तिकड़म लड़ाना कितना भद्दा लगता है, हालाँकि यहाँ तो इसका रिवाज है.... हाँ, अगर मेरे पास भी बड़े-बड़े अफ़सरी झब्बे होते तो बात दूसरी थी..."

"अरे दोस्त! तुम जैसे हो, वैसे ही कहीं ज़्यादा दिलचस्प हो। बस तुम्हें अपनी अनुकूल स्थिति का लाभ उठाना नहीं आता। क्या तुम्हें सचमुच नहीं मालूम कि तुम्हारा यह फ़ौजी कोट तुम्हें किसी भी सम्वेदशील नवयुवती की नज़र में एक बहादुर ओजस्वी नायक और अमर शहीद बना देता है?"

ग्रुश्नीत्स्की भद्रता और आत्म-तुष्टि के भाव से मुस्कुराया। लेकिन प्रकट उसने कहा, "क्या बेकार की बात करते हो!"

"मुझे यकीन है," मैं कहता रहा, "राजकुमारी तुमसे प्रेम करने लगी है।"

शर्म से वह बालों की जड़ों तक लाल हो उठा, और एक बचकानी नाराज़गी से उसने होंठ फुला लिये।

ओ थोथे अभिमान! तू ही वह टेक है, जिसके सहारे आर्कीमिडीज ने धरती के गोले को ऊपर उठा लेने की आशा की थी।

"तुम हमेशा मज़ाक करते रहते हो," उसने नाराज़ होने का अभिनय करते हुए कहा, "पहली बात तो यह है कि अभी वह मुझे ठीक से जानती तक नहीं..."

"औरतें प्यार उन्हीं आदमियों से करती हैं, जिन्हें वे नहीं जानतीं।"

"लेकिन उसे ख़ुश करने की मेरी कोई ख़ास इच्छा नहीं है। मेरी इच्छा तो सिर्फ़ एक अच्छे दिलचस्प परिवार से मेल-जोल बढ़ाने की है; इसके अलावा और किसी तरह की उम्मीदें पालना बेवकूफ़ी होगी... हाँ, तुम पीटर्सबर्गिया कामदेवों की तो बात ही दूसरी है, तुम जैसों की तो एक ही नज़र से कोई भी औरत पिघल जायेगी।... अरे हाँ, पेचोरिन, क्या तुम्हें पता है, राजकुमारी तुम्हारे बारे में भी बात कर रही थी?"

"क्या? उसने इतनी जल्दी तुमसे मेरे बारे में बात करनी शुरू कर दी?"

"ख़ैर, तुम्हारे लिए इसमें ख़ुशी मनाने की कोई वजह नहीं है। एक बार इत्तफ़ाक ही से बावड़ी पर उससे मेरी बातचीत होने लगी; तीसरे वाक्य में ही उसने पूछा 'ये भारी-भारी, उदास-आँखों वाले महाशय कौन हैं, जिनके चेहरे पर ऐसा मनहूस भाव है 'उस समय भी तो ये आपके साथ थे, जब...' फिर वह शर्म से लाल हो गयी और

अपने छोटे-से, मधुर कारनामे की याद करके, उस दिन का ज़िक्र करने से झिझकी। मैंने कहा, 'आपको उस दिन के बारे में चर्चा करने की बिलकुल ज़रूरत नहीं, क्योंकि मैं उसे हमेशा-हमेशा याद रखूँगा।' दोस्त पेचोरिन, मैं तुम्हें बधाई नहीं दे सकता, क्योंकि तुम्हारे बारे में उसकी राय अच्छी नहीं है... वाकई बड़े दुख की बात है, क्योंकि मेरी सचमुच बड़ी ख़ूबसूरत और आकर्षक है।"

यहाँ मैं ध्यान दिला दूँ कि ग्रुश्नीत्स्की उन लोगों में से है, जिन्हें किसी औरत ने अगर अपनी ख़ुशकिस्मती से महज़ आकर्षित भर कर लिया तो, भले ही वे उसे जानते हों या नहीं, उसके बारे में बात करते समय हमेशा बड़ी बेतकल्लुफ़ी से 'अपनी मेरी' या 'मेरी सोफ़ी' कह कर उसका ज़िक्र करेंगे।

मैंने चेहरे पर एक गम्भीर-सी मुद्रा धारण करते हुए जवाब दिया :

"हाँ, वह लगती तो काफ़ी सुन्दर-सी है... पर ग्रुश्नीत्स्की, ज़रा ध्यान रखना। ये रूसी तरुणियाँ ज़्यादातर अफ़लातूनी किस्म का हवाई प्रेम ही किया करती हैं, शादी-वादी करने का इनका कतई इरादा नहीं होता; और तुम तो जानते हो, अफ़लातूनी प्रेम बड़ा ही बेचैन और हैरान कर देने वाला होता है। मुझे लगता है, यह राजकुमारी भी उन्हीं औरतों में से एक है, जो महज़ दिल्लगी या मन-बहलाव चाहती हैं; अगर तुम्हारी संगत में दो मिनट के लिए भी वह उकता गयी तो समझ लो, तुम्हारा बण्टाढार हो गया और मामला हाथ से निकल गया। तुम्हें ध्यान रखना चाहिए कि तुम्हारी ख़ामोशी उसकी जिज्ञासा को जगाये रखे; तुम्हारी बातचीत उसे कभी पूरी तरह सन्तुष्ट न करे; तुम उसे बराबर एक उत्सुकता और दुविधा की स्थिति में रखे रहो; दस बार वह तुम्हारी खातिर लोक-लाज और दुनिया की मान्यताओं को चुनौती देगी और इसे त्याग कहेगी; फिर, मुआवज़े के तौर पर वह तुम्हें सताना शुरू कर देगी और अन्त में बस इतना कह कर तुमसे नाता तोड़ लेगी कि वह तुम्हें बरदाश्त नहीं कर सकती। अगर तुम उस पर हावी नहीं हो गये तो उसका पहला चुम्बन भी तुम्हें दूसरे चुम्बन का हक नहीं दिला पायेगा। वह तुम्हारे साथ जी भर कर इश्क लड़ायेगी, खिलवाड़ करेगी, लेकिन दो-एक साल बाद अपनी माँ की मर्ज़ी के मुताबिक किसी कुरूप जाँगलू से शादी कर लेगी। फिर वह तुम्हें विश्वास दिलाना शुरू करेगी कि वह बड़ी दुखी है, कि उसने केवल एक ही आदमी को यानी तुम्हें प्यार किया है; लेकिन यह भाग्य में नहीं बदा था कि दोनों एक-दूसरे से विवाह में बँध जायँ, क्योंकि वह आदमी महज़ एक फ़ौजी कोट पहनता था, हालाँकि उस भारी-भरकम भूरे लबादे के भीतर एक निश्छल, महान और जोश-भरा दिल धड़कता था..."

ग्रुश्नीत्स्की ने झल्ला कर मेज़ पर घूँसा जमाया और कमरे में बेचैन से इधर-उधर टहलने लगा।

मैं मन-ही-मन हँसी से दुहरा हुआ जा रहा था और दो-एक बार तो मैं मुस्कुरा भी दिया। अच्छा हुआ, जो उसने ध्यान नहीं दिया। यह साफ़ है कि वह मुहब्बत के चक्कर में बुरी तरह फँस चुका है, क्योंकि वह अब पहले से ज़्यादा भोला और सहज-विश्वासी हो गया है; इतना ही नहीं, वह स्थानीय सुनार की बनायी हुई, मीने के काम वाली एक नयी चाँदी की अँगूठी भी पहने घूमता है। उसकी उँगली में यह नयी अँगूठी देख कर मेरे मन में सहज ही सन्देह जागा। क्या आप सोच सकते हैं कि ज़रा नज़दीक जा कर ग़ौर से देखने पर मैंने क्या पाया? उसके भीतरी हिस्से पर महीन-महीन अक्षरों में 'मेरी' का नाम और उसके आगे वह तारीख ख़ुदी हुई थी, जब उसने वह प्रसिद्ध गिलास उठा कर ग्रुश्नीत्स्की को पकड़ाया था। मैंने अपनी इस खोज के बारे में उसे कुछ नहीं कहा; मैं उससे जबर्दस्ती यह सब स्वीकार करवाना नहीं चाहता; मैं तो चाहता हूँ कि वह ख़ुद ही मुझे अपना राज-दाँ बना ले और जब ऐसा होगा, तब मैं इस सबका ख़ूब मज़ा लूँगा...

आज सुबह मैं देर से उठा, और जब बावड़ी पर पहुँचा, तब वहाँ कोई न था। गर्मी बढ़ रही थी और जल्दी ही आने वाले अन्धड़ की सूचना देते, रूई-जैसे सफ़ेद बादल, पहाड़ों से हिम-मण्डित शिखरों से उठ-उठकर, आसमान में दौड़ते चले जा रहे थे। माशूक की चोटी, बुझी हुई मशाल की तरह, धुँधुआ रही थी; और उसके इर्द-गिर्द सलेटी बादलों के जर्जर टुकड़े, उड़ान में बाधा पा कर और मानो पहाड़ी झाड़ियों में उलझ कर, साँपों की तरह रेंग रहे थे, बल खा रहे थे। हवा में जैसे बिजली भर गयी थी। मैं लताओं से छायी उस पगडण्डी पर हो लिया, जो वहीं पहाड़ में बनी एक सुन्दर-सी कन्दरा को जाती थी। मेरी तबियत बड़ी गिरी-गिरी और उदास थी और मैं गाल पर तिल वाली उसी युवती के बारे में सोच रहा था, जिस का ज़िक्र डॉक्टर ने किया था। वह यहाँ क्या कर रही थी? और क्या वह सचमुच वही थी? मेरे दिमाग़ में यह ख़याल क्यों आया कि यह वही होगी? मुझे इस बात का इतना यकीन क्यों कर हो गया? क्या दुनिया में गाल पर तिल वाली इतनी कम औरतें हैं? इसी तरह के विचारों में उलझा, मैं एक गुफा तक जा पहुँचा। गुफा की छत के नीचे, ठण्डी छाया में पत्थर की बेंच पर एक औरत बैठी हुई थी। उसने तिनकों से बुनी टोपी पहनी हुई थी और कन्धों के गिर्द एक काला दुशाला ओढ़ रखा था; उसका सिर नीचे झुका था,

जिससे उसका चेहरा टोपी के नीचे छिप-सा गया था। इस अजनबी औरत के सोच-विचार में ख़लल न डालने के उद्देश्य से मैं मुड़ने ही वाला था कि उसने अपनी निगाहें मेरी ओर उठायीं।

"वेरा!" अनायास मेरे मुँह से निकला।

वह एकदम चौंक पड़ी और उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया।

"मैं जानती थी, तुम यहाँ हो," उसने कहा।

उसके पास जा कर मैंने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसकी मीठी आवाज़ सुन कर मेरी नसों में युगों के भूली-बिसरी सिहरन दौड़ उठी। उसने अपनी गहरी शान्त आँखें मेरी आँखों से मिलायीं; उनमें दुख, व्यथा और कुछ-कुछ उलाहने जैसा भाव साफ़ पढ़ा जा सकता था।

"कितने लम्बे अर्से से हमने एक-दूसरे को नहीं देखा?" मैंने कहा।

"हाँ, और हम दोनों काफ़ी बदल भी तो गये हैं।"

"यानी कि तुम मुझे अब प्यार नहीं करतीं?"

"मेरी शादी हो गयी है!" उसने बताया।

"फिर से? कुछ साल पहले भी यही कारण था, लेकिन उसके बावजूद..."

उसने झटके से अपना हाथ खींच लिया और उसके गाल दहक उठे।

"शायद अपने दूसरे पति को तुम बहुत प्यार करती हो?"

बिना कोई जबाव दिये, उसने अपना मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

"या हो सकता है, वे बहुत ईर्ष्यालु हों?"

ख़ामोशी।

"ख़ैर, वे ज़रूर एक शानदार ख़ूबसूरत आदमी होंगे, बहुत धनी भी, ऐसा मेरा ख़याल है; और शायद तुम डरती हो कि..." मैंने उसकी ओर निगाहें उठायीं और चौंक पड़ा, उसके चेहरे पर गहरी व्यथा झलक रही थी, और उसकी डबडबायी आँखों में आँसू झिलमिला रहे थे।

"यह बताओ," आख़िरकार अस्फुट स्वर में उसने कहा, "क्या मुझे सता कर तुम्हें इस कदर ख़ुशी मिलती है? मुझे तो तुमसे नफ़रत करनी चाहिए। जब से हमारा परिचय हुआ है, तुमने मुझे तकलीफ़ और दुख के सिवा और दिया ही क्या है..."

उसका गला रूँध गया, आवाज़ भर्रा आयी, और मेरी ओर झुक कर उसने अपना सिर मेरी छाती पर टिका दिया।

'शायद इसीलिए तुम मुझे प्यार भी करती रही हो!' मैंने मन-ही-मन कहा, 'क्योंकि इन्सान सुख को भूल जाता है, लेकिन दुख कभी नहीं...'

मैंने उसे अपने से सटा लिया, और काफ़ी देर तक हम लोग इसी तरह बैठे रहे। फिर हमारे होंठ मिले और बेख़ुदी से भरे एक जलते-जोशीले चुम्बन में घुल-मिल गये। उसके हाथ बर्फ़ की तरह ठण्डे थे और सिर जैसे बुखार में तप रहा था। इसके बाद हमारे बीच कुछ इस तरह की बातें शुरू हुईं, काग़ज़ पर जिनका कोई मतलब नहीं होता; जिन्हें न तो दुहराया जा सकता है, न याद ही रखा जा सकता है, क्योंकि शब्दों में अभिप्राय का स्थान स्वर या ध्वनियाँ ले लेती हैं उसमें और भी अर्थ जोड़ती हुई, जैसे कि इतालवी ऑपेरा में होता है।

वेरा ने ठान लिया है कि मुझे उसके पति से नहीं मिलना चाहिए, जो वही लँगड़ा बूढ़ा आदमी है, जिसकी एक झलक मुझे उस दिन मुख्य-पथ पर मिली थी। वेरा ने अपने बेटे की खातिर ही उससे शादी की थी। वह धनी और गठिया का रोगी है। मैंने अपने मुँह से उसके बारे में तिरस्कार का एक शब्द भी नहीं निकलने दिया, क्योंकि वह पिता की तरह उसका आदर करती है... और पति के रूप में उसके साथ धोखा करेगी... कैसी अजीब चीज़ है मनुष्य का हृदय ख़ास तौर पर एक औरत का हृदय।

वेरा के पति, सेम्योन वासिलियेविच, रानी साहिबा के दूर के रिश्तेदार हैं। यहाँ दोनों पास-पास के मकानों में ठहरे हुए हैं और वेरा अक्सर रानी साहिबा के घर आती-जाती रहती है। मैंने उससे वादा किया है कि मैं लिगोव्स्की-परिवार में मेल-जोल बढ़ाऊँगा और राजकुमारी से इश्क जताऊँगा, ताकि वेरा और मेरे सम्बन्धों पर किसी का ध्यान न जाये। मगर इससे मेरी योजनाओं में कोई बाधा नहीं पड़ेगी, और मेरा समय बड़े मज़े में गुज़रेगा...

हाँ, मजे में ही तो! उस मानसिक अवस्था को मैं कभी का पार कर आया हूँ, जब लोग सिर्फ़ सुख खोजते हैं और जब दिल किसी को पूरे जोश-खरोश से प्यार करने और अपना बनाने की ज़रूरत बुरी तरह महसूस करता है। अब तो मैं सिर्फ़ प्यार पाना चाहता हूँ और वह भी सिर्फ़ कुछ ही लोगों का। सच्ची बात तो यह है कि मुझे यकीन हो चला है, मेरे लिए अब कोई एक स्थिर और निरन्तर स्नेह-सम्पर्क ही काफ़ी

होगा कम्बख़्त, वही भावुकता-भरी आदत!

यह मुझे हमेशा बहुत अजीब लगता रहा है कि मैं उन औरतों का कभी ग़ुलाम नहीं बना, जिनसे मैंने प्रेम किया। इसके विपरीत, अपनी ओर से कोई भी प्रयास किये बिना, मैं हमेशा ही उनके दिल और दिमाग़ पर अजेय रूप से हावी रहा हूँ। क्यों है ऐसा? क्या इसका कारण यह है कि मैंने कभी विशेष रूप से किसी चीज़ की कदर नहीं की और वे मुझे घड़ी भर को भी अपने हाथों से सरक जाने की मुहलत देने से डरती रहीं। या इसके पीछे मेरी शारीरिक शक्ति का, चुम्बक-जैसा, आकर्षण रहा है? या फिर महज़ इसलिए कि आज तक मेरी मुलाकात किसी ऐसी औरत से नहीं हुई, जिसमें चरित्र-बल रहा हो।

मैं मानता हूँ कि मुझे ऐसी औरतें पसन्द नहीं, जिनका ख़ुद का दिमाग़ हो यह बात उन्हें जँचती नहीं।

यूँ, अब मुझे याद आता है कि एक बार, सिर्फ़ एक बार, मैंने दृढ़ विचारों वाली एक औरत से प्यार किया था, जिसके शक्तिशाली दिमाग़ को मैं जीत नहीं सका था... हम एक-दूसरे के दुश्मन बन कर ही अलग हुए थे; तो भी, अगर मैं उससे पाँच साल बाद मिला होता, तो शायद हमारे अलग होने का रूप कुछ दूसरा ही होता...

वेरा बीमार है बहुत बीमार, हालाँकि वह इस बात को मानती नहीं। मुझे डर है कि उसे तपेदिक है, या फिर वह रोग, जिसे 'फ़ीवर लेण्ट' कहते हैं चूँकि यह बीमारी रूस में नहीं पायी जाती, इसलिए हमारी भाषा में इसके लिए कोई शब्द नहीं है।

हम अभी गुफा ही में बैठे थे कि अन्धड़ ने हमें घेर लिया, और हमें आधा घण्टा और वहीं रुकना पड़ा। न तो वेरा ने मुझसे वफ़ादारी का कोई वादा लिया और न यही जानने की उत्सुकता दिखायी कि उससे अलग होने के बाद मैंने औरों से भी प्यार किया था या नहीं... हर बार की तरह इस बार भी उसने अपना सम्पूर्ण विश्वास मुझे सौंप दिया और मैं भरसक उसे धोखा नहीं दूँगा। दुनिया में केवल वही एक औरत है, जिसे धोखा देने की बात मेरा दिल कभी कबूल नहीं करेगा। यह भी मैं जानता हूँ कि हम लोग जल्दी ही एक-दूसरे से फिर बिछुड़ जायेंगे; इस बार शायद हमेशा के लिए। हम दोनों अपनी अलग-अलग राहों पर चलते हुए कब्र तक पहुँच जायेंगे, लेकिन उसकी याद को मैं हमेशा आत्मा में सँजोये रखूँगा। मैंने हर बार उससे यही कहा है और मन-ही-मन वह मेरी बात का विश्वास भी करती है, चाहे ऊपर से वह कहती

यही हो कि उसे मेरा बिलकुल विश्वास नहीं है।

आख़िरकार हम विदा हुए, और जब तक उसकी टोपी झाड़ियों और चट्टानों के पीछे ओझल नहीं हो गयी, तब तक मैं वहीं खड़ा, उसे जाते हुए देखता रहा। मेरा दिल दर्द से मसोस उठा; उसी तरह, जैसे पहली बार विदा होने पर मसोस उठा था। आह, किस मजे से मैं इस अनुभूति का रस ले रहा था! क्या यह जवानी थी, अपने मेहरबान और हित कर तूफ़ानों के साथ, फिर से अपने हकों के लिए दावा करती हुई, नया जन्म लेती हुई; या महज़ उसकी विदाई के समय की अन्तिम कृपा-दृष्टि थी जुदा होने के समय का आख़िरी तोहफ़ा एक यादगार! नहीं, यह नहीं हो सकता... यह यौवन का अन्तिम चरण नहीं हो सकता! और फिर मैं तो अभी तक किशोरों जैसा ही दिखता हूँ; मेरा मुँह कुछ मलिन और फीका ज़रूर पड़ गया है, लेकिन अभी तक उस पर स्वास्थ्य और ताज़गी है; मेरे अंग लचीले और जिस्म सजीला है; लटें घनी और घुँघराली हैं; आँखों में कौंध और चमक है और मेरा खून आज भी मेरी रगों में तेज़ी से दौड़ता है...

घर आकर, मैं घोड़े पर सवार हुआ और स्तेप की ओर निकल गया, क्योंकि मुझे एक फुर्तीले, जानदार घोड़े पर सवार हो कर ऊँची-ऊँची घासों के बीच से, अपने चेहरे पर रेगिस्तानी हवाओं के सीधे थपेड़े खाते हुए, फेफड़े खोल कर महकती हवा को जी भर कर पीते हुए, नीले विस्तारों में पल-पल पर पास आती, और भी स्पष्ट होती हुई, धुँधली-धुँधली आकृतियों की रूप-रेखाओं पर निगाह जमाये, उन्हें पहचानने की कोशिश करते हुए, सरपट दौड़ते चले जाना बेहद पसन्द है। जो भी दुख या व्यथा दिल पर बोझ बनी हुई हो, जो भी चिन्ता दिमाग़ को रह-हर कर कचोट रही हो सब पलक मारते ही काफ़ूर हो जाती हैं और ज्यों-ज्यों दिमाग़ की बेचैनी पर देह की थकान हावी होती है, आत्मा पर एक अपूर्व शान्ति और चैन छा जाता है। जब मैं इस दक्खिनी सूरज की किरणों में नहाते, जंगलों से लदे पहाड़ों को एकटक देखता हूँ, खुले नीले आकाश पर ध्यान जमाता हूँ या चट्टान-दर-चट्टान पछाड़ खाती हुई गिरती धारा की गरज सुनता हूँ, तब शायद ही संसार में ऐसी कोई औरत हो, जिसकी आँखें मुझे याद रह जायें।

मेरा ख़याल है कि अपनी-अपनी चौकियों के बुर्जों पर खड़े, ऊँघते कज़ाक पहरेदार, मुझे इस तरह दिशाहीन और निरूद्देश्य सरपट घोड़ा दौड़ाते देख कर बुरी

तरह चकराये होंगे; क्योंकि मेरे कपड़ों की वजह से बहुत करके उन्होंने मुझे कोई चेरकस ही समझा होगा। दरअसल मुझे कई बार लोगों ने यह बताया है कि चेरकसी पोशाक पहनकर, जब मैं घोड़े पर सवार होता हूँ तो बहुत-से कबार्डा-निवासियों से भी ज़्यादा कबार्डियन दिखायी देता हूँ। और सचमुच, जहाँ तक लड़ाई की इस शानदार पोशाक की बात है, मैं पक्का छैला हूँ फ़ालतू एक फ़ीता नहीं; सादा म्यानों में कीमती हथियार; टोपी में लगी खाल के रोएँ न बहुत बड़े, न बहुत छोटे; पिंडलियों पर चमड़े के चौड़े पट्टे और पैरों में चुस्ती से चढ़े हुए, मुलायम चमड़े के ऊँचे बूट; सफ़ेद बेश्मेत और कत्थई चेरकस कोट! काफ़ी दिनों तक मैंने पहाड़ी लोगों की तरह घुड़सवारी करने का अभ्यास किया था; कॉकेशियन लोगों की तरह घुड़सवारी करने की मेरी क्षमता की तारीफ़ से ज़्यादा मेरे अहं को और कोई चीज़ सन्तुष्ट नहीं कर पाती। मैंने चार घोड़े रख छोड़े हैं, एक अपने लिए और तीन अपने दोस्तों के लिए, ख़ास तौर पर इसलिए कि मैदान में अकेले ही घुड़सवारी करने की ऊब से मैं बच सकूँ; हालाँकि वे सैर के लिए मेरे घोड़े ख़ुशी-ख़ुशी ले जाते हैं, लेकिन घुड़सवारी के लिए मेरे साथ कभी नहीं जाते।

शाम के क़रीब छह बज रहे थे, जब मुझे ख़याल आया कि खाने का समय हो चुका है; इसके अलावा मेरा घोड़ा भी बेचारा थक-टूट चुका था। मैंने घोड़े को उस रास्ते पर मोड़ दिया, जो प्यातिगोर्स्क से उस जर्मन बस्ती को जाता है, जहाँ 'झरना-समाज' के लोग अक्सर सैर-सपाटे और पिकनिक के लिए जाया करते हैं। झाड़ी-झुरमुटों के बीच से बल खाता हुआ यह रास्ता, उन छोटी-मोटी खाई-खन्दकों को पार करता हुआ आगे बढ़ता है, जिनमें लम्बी-लम्बी घास की छाँह में छोटे-छोटे नदी-नाले शोर मचाते हुए बहते हैं। चारों ओर बेश्ताऊ, ज़्मेईनाया, ज़ेलेज़्नाया और लिसाया पर्वतों के गगन-चुम्बी, नीले पठार फैले हुए हैं। अपने घोड़े को पानी पिलाने के लिए मैं इन्हीं खाइयों में से एक में रुका हुआ था, जब देर रास्ते के परले छोर पर शोर-गुल मचाते घुड़सवारों का एक भड़कीला जुलूस आता दिखायी दिया, जिसमें शामिल महिलाओं ने काले और आसमानी रंग की घुड़सवारी की पोशाकें और पुरुषों ने चेरकस तथा निज़्नी-नोवगोरोद के मिले-जुले ढंग के कपड़े पहने हुए थे। ग्रुश्नीत्स्की और राजकुमारी सबसे आगे चल रहे थे।

इस इलाके में गन्धक के पानी से सेहत बनाने के लिए आने वाली महिलाएँ अभी तक इन कहानियों पर यकीन करती हैं कि चेरकस लुटेरे दिन-दहाड़े लोगों पर

हमला करके उन्हें लूट ले जाते हैं; शायद यही कारण है कि ग्रुश्नीत्स्की ने अपने लम्बे फ़ौजी कोट के ऊपर पेटी बाँध कर उससे एक तलवार लटका रखी थी और ऊपर से दो पिस्तौलें भी खोंस रखी थीं। अपनी इस बहादुराना पोशाक में, इतने हथियारों से लैस, वह काफ़ी उजबक-सा लग रहा था। मुझे तो एक लम्बी झाड़ी ने उनकी निगाह से छिपा रखा था, लेकिन पत्तियों और टहनियों के बीच से मैं उन्हें साफ़-साफ़ देख सकता था और उनके चेहरों के हाव-भाव से मुझे यह साफ़ अन्दाज़ा लग रहा था कि उस समय उनके बीच बड़ी भावुकता-भरी बातें हो रही थीं। आख़िरकार वे सड़क को बीच से काटने वाले नाले की ढलान के पास आ पहुँचे। ग्रुश्नीत्स्की ने राजकुमारी के घोड़े की लगाम पकड़ ली और अब उनके बीच चल रही बातचीत का आख़िरी हिस्सा मेरे कानों में पड़ा।

"तो आपका इरादा कॉकेशिया में ही अपनी सारी ज़िन्दगी बिता देने का है?" राजकुमारी कह रही थी।

"रूस मेरे लिए है ही क्या?" राजकुमारी के उस सजीले निगाहवान ने जवाब दिया, "एक ऐसा देश, जहाँ हज़ारों लोग सिर्फ़ इसीलिए मेरी उपेक्षा करेंगे कि वे मुझसे ज़्यादा अमीर हैं; जबकि यहाँ... हाँ, यहाँ तो मेरा यह भारी-भरकम फ़ौजी कोट आपसे परिचय प्राप्त करने में आड़े नहीं आया..."

"बल्कि इसके विपरीत ही..." शर्म से लाल होते हुए राजकुमारी ने कहा।

ग्रुश्नीत्स्की इस उत्तर से काफ़ी ख़ुश दिखायी दिया। उसने बात ज़ारी रखी, "यहाँ मेरे दिन बर्बर कबाइलियों की सनसनाती गोलियों की छाया के नीचे तूफ़ानी हलचल में, तेज़ और नामालूम ही बहते चले जायेंगे; बस ख़ुदा ही मेहनबानी से हर साल किसी तन्वी की एक उजली, चमकीली कृपा-दृष्टि नसीब होती रहे जैसी कि..."

अब तक वे ठीक मेरे बराबर आ पहुँचे थे; मैंने घोड़े को चाबुक लगाया और झाड़ियों के पीछे से तीर की तरह बाहर निकला।

"हे भगवान! चेरकस लुटेरा!" राजकुमारी भय से फ्रेंच में चीख़ पड़ी।

उसे आश्वस्त करने के लिए, मैंने आदर से थोड़ा झुकते हुए, फ्रेंच ही में उत्तर दिया, "घबराइए मत मदाम, मैं आपके बाँके शहसवार से ज़्यादा ख़तरनाक नहीं हूँ।"

पता नहीं क्यों, वह एकदम अचकचा कर उलझन में पड़ गयी। अपनी ग़लती की वजह से या इसलिए कि उसे मेरा उत्तर गुस्ताख़ी-भरा लगा। सचमुच मेरी यही कामना है कि उसके अचकचाने की वजह मेरी गुस्ताख़ी ही हो। ग्रुश्नीत्स्की ने खिसिया

कर, मेरी ओर नाराज़ निगाहों से देखा।

उसी रात काफ़ी देर गये, यानी ग्यारह बजे के क़रीब, मैं नींबू के पेड़ों से छाये उस छोटे-से रास्ते पर घूमने निकला, जो मुख्य-पथ का ही एक हिस्सा है। सारी बस्ती गहरी नींद में सोयी पड़ी थी और केवल इक्की-दुक्की खिड़कियों में रोशनी चमकती दिखायी दे रही थी। मेरे तीनों ओर दूर-दूर तक माशूक पर्वत के काले-काले विशाल कन्धे ऊपर तक छाये हुए आतंकित-से कर रहे थे। माशूक की सबसे ऊँची चोटी पर एक मनहूस-सा बादल अड्डा जमाये बैठा था। पूरब में चाँद निकल ही रहा था और सुदूर, बर्फ़ में लिपटी ऊँची चोटियों की कतार, रूपहली झालर की तरह झिलमिला रही थी। रात में बहने के लिए खोल दिये गये गर्म पानी के झरनों के शोर में पहरेदारों की पुकारें घुल-मिल रही थीं। रह-रह कर पथरीली सड़क पर घोड़ों के टापों की गूँज के साथ-साथ किसी छत वाली बैलगाड़ी की चरर-चूँ-चरर-चूँ और किसी तातारी गीत का विषाद-भरा, मधुर आलाप भी सुनायी दे जाता। मैं एक बेंच पर बैठ कर विचारों में डूब गया। मुझे किसी के साथ मित्रता-भरी बातचीत में अपने मन का बोझ हलका करने की ज़रूरत महसूस हो रही थी।... मगर किसके साथ? वेरा इस समय क्या कर रही होगी? मैंने सोचा। उस समय प्यार से उसका हाथ दबाने के लिए मैं क्या कुछ न कुर्बान कर देता।

सहसा मैंने तेज़-तेज़ ऊँचे-नीचे कदमों की आहट सुनी... शायद ग्रुश्नीत्स्की... सचमुच वही था।

"कहाँ तशरीफ़ ले गये थे?"

"रानी साहिबा के यहाँ," उसने गम्भीरता और रोब से जवाब दिया। "मेरी कमाल का गाती है!"

"एक बात जानते हो," मैंने कहा, "मैं शर्त लगा सकता हूँ कि उसे यह नहीं मालूम, तुम अभी महज़ कैडेट हो; वह तो तुम्हें एक अपदस्थ अफ़सर ही समझती है।"

"हो सकता है! मैं क्या परवाह करता हूँ!" उसने खोये-खोये, अनमने-से स्वर में उत्तर दिया।

"ख़ैर, मैंने तो यों ही एक बात कही..."

"क्या तुम्हें पता है कि तुमने उसे बुरी तरह नाराज़ कर दिया है? उसका ख़याल है, तुम्हारी वह हरकत सरासर गुस्ताख़ी थी। उसे यह यकीन दिलाने में मुझे काफ़ी मुश्किल उठानी पड़ी कि तुम अच्छे लोगों में उठने-बैठने के इतने ज़्यादा अभ्यस्त और इतने शिष्ट हो कि उसका अपमान करने का तुम्हारा कतई इरादा नहीं रहा होगा। वह कहती है कि तुम्हारे चेहरे से गुस्ताख़ी और अक्खड़ता टपकती है और तुम ज़रूर घोर दम्भी हो।"

"ठीक ही कहती है... मगर लगता है, जैसे तुम उसकी तरफ़ से बोल रहे हो, है न यही बात?"

"अफ़सोस कि अभी तक मुझे यह अधिकार नहीं मिला।"

"अच्छा जी!" मैंने सोचा, "इसका मतलब है, हज़रत ने अभी से इसकी आशाएँ बाँध रखी हैं..."

ग्रुश्नीत्स्की ने आगे जोड़ा, "यह तुम्हारे हक में ख़राब ही होगा। अब उन लोगों का परिचय प्राप्त करना तुम्हारे लिए और भी मुश्किल हो जायेगा अफ़सोस! मेरी नज़र में उनका घर यहाँ के सारे घरों से ज़्यादा ख़ुशनुमा और दिलकश है..."

मैं मन-ही-मन मुस्कराया।

"इस समय तो मेरे लिए सबसे ज़्यादा दिलकश और सुखद घर मेरा अपना है," मैंने जँभाई लेते हुए कहा और जाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

"ख़ैर, तुम्हें यह तो मानना ही होगा कि तुम्हें इसका खेद है?"

"बकवास! मैं चाहूँ तो कल शाम ही राजकुमारी के घर जा सकता हूँ..."

"यह भी देख लेंगे...."

"चाहो तो मैं राजकुमारी से मुहब्बत भी करके दिखा सकता हूँ..."

"अर्थात, अगर वह तुमसे बात करने को तैयार हुई तो..."

"मैं उस वक्त का इन्तज़ार करूँगा, जब वह तुम्हारी बातों से ऊब उठेगी... अच्छा नमस्कार!.."

"मैं तो ज़रा घूमने-फिरने जाऊँगा इस समय तो किसी कीमत पर नहीं सो सकता... अच्छा सुनो, आओ हम लोग रेस्तराँ में चलें; वहाँ ताश की एकाध बाज़ी भी लग सकती है... वहाँ फड़ जमी होगी... आज रात मैं सनसनी और उत्तेजना की ज़रूरत महसूस कर रहा हूँ।"

"मुझे उम्मीद है, तुम हारोगे..."

और मैं घर लौट आया।

मई २१

क़रीब एक हफ़्ता गुज़र चुका है और मैं अभी तक लिगोव्स्की-परिवार से नहीं मिल पाया। मौके की ताक में हूँ। ग्रुश्नीत्स्की छाया की तरह राजकुमारी के पीछे-पीछे घूमता है, और वे घण्टों लगातार बातें करते रहते हैं। मैं सोचता हूँ, जाने कब वह उससे ऊबेगी! इन दोनों के बीच क्या-कुछ चल रहा है, इस पर उसकी माँ कोई ध्यान नहीं देतीं, क्योंकि उनकी नज़र में वह राजकुमारी के लिए उपयुक्त पात्र नहीं है। यह है माताओं की बुद्धि! दो-तीन बार तो मैं ख़ुद उनके बीच मीठी-मीठी नज़रों के आदान-प्रदान को देख चुका हूँ इस पर अब रोक लगानी ही पड़ेगी।

कल वेरा पहली बार झरने पर आयी। पहाड़ की उस गुफा में हमारी मुलाकात के बाद से वह घर के बाहर निकली ही नहीं थी। हम दोनों ने एक साथ ही अपने-अपने गिलास पानी में डुबोये। नीचे झुकते वक्त उसने धीमे स्वर में मुझसे कहा :

"तुम लिगोव्स्की-परिवार के यहाँ जाना नहीं चाहते! वही एक जगह है, जहाँ हम दोनों एक-दूसरे से मिल सकते हैं।"

वही उलाहना कितना ऊबाऊ है! लेकिन मैं इसके काबिल था भी।

हाँ, एक बात और, रेस्तराँ के हॉल में चन्दा करके एक बॉल होने जा रहा है और मेरा इरादा इसमें राजकुमारी के साथ मजूर्का नाचने का है।

मई २९

रेस्तराँ का हॉल जैसे नोबल्ज़ क्लब के हॉल में बदल दिया गया था। नौ बजते-बजते सभी आ पहुँचे। रानी लिगोव्स्काया और राजकुमारी सबसे आख़िर में तशरीफ़ लाने वालों में से थे। राजकुमारी को देख कर बहुत-सी महिलाओं की नज़रों में ईर्ष्या और दुर्भाव झलक उठा, क्योंकि उसने बेहद सुरुचिपूर्ण कपड़े पहने हुए थे। जो औरतें अपने को स्थानीय रईसों में गिरती थीं, उन्होंने अपनी जलन मन ही में दबा ली और राजकुमारी के साथ जा कर जुड़ गयीं। और क्या अपेक्षा की जा सकती थी? जहाँ भी

महिलाएँ इकट्ठी होती हैं, वहाँ फ़ौरन उन्हें ऊपर के और नीचे के दो वर्गों में बँटने में देर नहीं लगती! ग्रुश्नीत्स्की खिड़की के काँच से अपना चेहरा सटाये, हॉल के बाहर भीड़ में खड़ा, अपनी हृदयेश्वरी को आँखों से जैसे निगल रहा था। उधर से गुज़रते समय राजकुमारी ने बड़े नामालूम ढंग से उसकी ओर सिर हिलाया। बस, उसका चेहरा सूरज की तरह खिल कर दमक उठा...

नाच का श्रीगणेश पोलोनेज़ से हुआ; फिर ऑर्केस्ट्रा ने वॉल्ट्ज़ की धुन छेड़ दी। महमेज़ें छनकने लगीं, एड़ियों की खटखटाहट से हॉल भर गया और कोटों के दामन चकफेरियाँ लेते हुए लहराने लगे।

मैं एक भारी-भरकम महिला के पीछे खड़ा था, जिसने गुलाबी रंग के परों की एक बड़ी-सी कलग़ी अपनी टोपी पर लगा रखी थी। उसके गाउन की शानशौकत घेरदार लहँगों के ज़माने की थी और उसकी रूखी, खुरदरी त्वचा पर पड़े हुए चकत्ते जवानी के उस युग की याद दिला रहे थे, जब ख़ूबसूरती बढ़ाने के लिए युवतियाँ अपने गालों पर गहरे धूप-छाँही ताफ़्ता जैसे धब्बे बना लेती हैं। उसकी गर्दन का सबसे बड़ा मस्सा उसकी पोशाक पर लगे बकसुए के नीचे छिपा हुआ था। वह अपने साथी घुड़सवार सिपाहियों के एक कप्तान से कह रही थी :

"बड़ी ढीठ छोकरी है यह राजकुमारी लिगोव्स्काया! ज़रा सोचो तो, मुझे कैसा धक्का मार कर चली गयी और माफ़ी तक नहीं माँगी, उलटा घूम कर लान्येंट से मुझे घूरने लगी बदतमीज़ कहीं की!... यह बर्दाश्त के बाहर है! और आख़िर इसके पास है क्या, जो यह इतनी हवा लेती है? इसे एक बार सबक दे दिया जाय तो ठीक हो जायेगी!"

"ठीक है, इसे मुझ पर छोड़ दो।" कह कर वह भला, उपकारी कप्तान दूसरे कमरे में चला गया।

स्थानीय रिवाज के मुताबिक कोई भी व्यक्ति किसी अजनबी महिला या पुरुष के साथ नाच सकता था; इस आज़ादी का फ़ायदा उठाते हुए, मैं सीधा राजकुमारी के पास जा पहुँचा और मैंने उसे वॉल्ट्ज़ के लिए अपना साथी बनने के लिए आमंत्रित किया।

कोशिश करने पर भी वह अपने होंठों पर मुस्कान की हल्की-सी थिरकन और उससे ज़ाहिर होती विजय की भावना को छिपा नहीं सकी, लेकिन प्रकट रूप से वह

एक नितान्त उदासीन, बल्कि कठोर-सी मुद्रा चेहरे पर लाने में सफल हो गयी। उसने लापरवाही से अपना एक हाथ मेरे कन्धे पर रखा, सिर को हल्का-सा एक ओर झुकाया और हम नाच की ताल पर थिरक उठे। इतनी लुभावनी और लचकदार कमर मैंने आज तक नहीं देखी। उसकी मीठी साँसें मेरे चेहरे को हल्के-हल्के सहला रही थीं; चकफेरी लेते समय जब-तब उसके बालों की कोई लट अपनी सहेलियों से छूट कर मेरे जलते गालों को सहला देती... हमने हॉल के तीन चक्कर लगाये। (ग़ज़ब का नाचती है वह) तीसरे चक्कर के बाद मैंने देखा, वह हाँफ रही थी, उसकी आँखों में थकान का धुँधलापन था, और उसके अध-खुले होंठ, आराम करने के लिए कहा जाने वाला ज़रूरी फ़िकरा, जैसे-तैसे ही बुदबुदा सके.: "बस मोसिये, क्षमा कीजिए।"

कुछ क्षणों की ख़ामोशी के बाद मैंने चेहरे पर बेहद नम्रता लाते हुए कहा :

"मैंने सुना है राजकुमारी, कि आपसे अभी परिचय न होते हुए भी मैंने दुर्भाग्य से आपकी नाराज़गी मोल ली है और आपको लगा कि मैं गुस्ताख़ हूँ.... क्या यह सच है?"

"और अब आप क्या उसी एहसास को और गहरा करना चाहते हैं?" उसने व्यंग्य से ज़रा मुँह बना कर जवाब दिया। सचमुच उसकी वह मुद्रा उसके नाक-नक्शे और चेहरे की चंचलता के साथ गजब का मेल खाती थी।

"ख़ैर, अगर मैंने अपनी किसी गुस्ताख़ी से आपको नाराज़ कर ही लिया है तो क्या अब आप मुझे माफ़ी माँगने की और भी बड़ी गुस्ताख़ी करने की इजाज़त देंगी? सचमुच, मैं तहे-दिल से यह साबित करना चाहूँगा कि मेरे बारे में अपनी वह धारणा बनाते वक्त आप भूल कर रही थीं..."

"यह काम आपके लिए ज़रा मुश्किल होगा..."

"क्यों?"

"क्योंकि आप हमारे घर तो आते नहीं; और ऐसे नृत्यों के आयोजन जल्दी-जल्दी दुहराये नहीं जायेंगे।"

इसका मतलब यह है, मैंने सोचा, कि उसके दरवाज़े मेरे लिए हमेशा बन्द रहेंगे।

"आपको पता है राजकुमारी," मैंने हल्की-सी खीझ के साथ कहा, "कि पछताते हुए अपराधी को कभी ठुकराना नहीं चाहिए, क्योंकि हो सकता है, हताश हो कर वह दुगना अपराध कर बैठे... और तब...."

सहसा हमारे चारों ओर से आती हुई खिलखिलाहट और काना-फूसी की दबी आवाज़ों ने मुझे अपनी बातचीत बीच ही में छोड़ कर अपने इर्द-गिर्द देखने को विवश कर दिया। कुछ ही कदम पर पुरुषों की एक टोली खड़ी थी, और उन्हीं में घुड़सवार सिपाहियों का वह कप्तान भी था, जिसने इस सुन्दर राजकुमारी के प्रति अपने शत्रुता-भरे इरादे ज़ाहिर किये थे। अपनी हथेलियाँ मलता, ज़ोर-ज़ोर से हँसता और अपने साथियों को आँखें मार-मार कर उनके इशारों का जबाव देता हुआ, वह किसी बात पर बड़ा ख़ुश नज़र आ रहा था।

तभी, टेल-कोट पहने, लम्बी मूँछों और सुर्ख़ चेहरे वाले एक सज्जन, उस भीड़ के बीच से निकले और डगमगाते कदमों से राजकुमारी की ओर बढ़े। प्रकट ही वे नशे में धुत्त थे। अपने दोनों हाथ पीठ पीछे ही किये हुए, वे बौखलायी हुई राजकुमारी के सामने जा खड़े हुए, और ज़रा आगे झुककर, नशे से धुधली अपनी सलेटी आँखों को सीधे उसकी ओर केन्द्रित करके, फटे बाँस के-से कर्कश, घरघराते स्वर में बोले :

"परमेत्तेज़... उँह मारो गोली... मैं तो सिर्फ़ मजूर्का नाचना चाहता हूँ..."

"आप का इरादा क्या है, जनाब?" मेरी ने कातर निगाहें इधर-उधर डालते हुए, कँपकँपाती आवाज़ में पूछा। मगर अफ़सोस, उसकी माँ दूर पर थीं, और आस-पास मदद के लिए उसकी जान-पहचान के उन बहादुर प्रेमियों में से कोई नहीं था, सिवाय एक एडजुटेण्ट के, जिसने मेरा ख़याल है, पूरी घटना को देखा, मगर इस झगड़े में उलझने से बचने के लिए भीड़ में छिप गया।

"ठीक-ठीक!" घुड़सवार सिपाहियों के उस कप्तान को, जो प्रोत्साहन-भरे इशारों से उन्हें उकसा रहा था, आँख मारते हुए वे शराबी महाशय बोले, "आप शायद नहीं चाहतीं? एक बार फिर मैं मजूर्का के लिए आपसे अनुरोध करता हूँ... आप सोचती होंगी कि मैं पिये हुए हूँ? ख़ैर, कोई बात नहीं! नाच और भी अच्छा होगा, मैं यकीन दिलाता हूँ...."

मैंने देखा कि वह भय और अपमान से बेहोश होने वाली थी।

कदम बढ़ा कर मैं उस मदहोश लफंगे के पास जा पहुँचा और मज़बूती से उसकी बाँह पकड़कर, सख़्ती से उसकी आँखों में सीधे देखते हुए, मैंने उसे चलता-फिरता नज़र आने को कहा, क्योंकि मैंने उसे बताया, राजकुमारी पहले ही मेरे साथ मजूर्का नाचने का वादा कर चुकी है।

"ओह, यह बात है! अच्छा, फिर कभी सही!" उसने खीसें निपोर कर कहा, और अपने साथियों से जा मिला, जो हतोत्साह-से दिखते हुए, दुम-दबाये अपने टूटे दिल लिये, उसे हॉल के बाहर ले गये।

इनाम में मुझे एक बड़ी दिलकश नज़र मिली।

अपनी माँ के पास जा कर राजकुमारी ने उन्हें बताया कि क्या कुछ हो गुज़रा था और रानी साहिबा ने भी धन्यवाद देने के लिए मुझे फ़ौरन भीड़ में से खोज निकाला। उन्होंने बताया कि वे मेरी माँ को जानती थीं और मेरी आधी दर्जन चाचियों-मौसियों से उनकी अच्छी-ख़ासी दोस्ती भी थी।

"मैं बस यह नहीं समझ पा रही कि हम लोगों की मुलाकात पहले क्यों नहीं हुई?" उन्होंने कहा, फिर आगे जोड़ा, "ख़ैर, इतना तो तुम मानोगे कि इसमें ग़लती सिर्फ़ तुम्हारी है। तुम अपने आप को इतना अलग-थलग जो रखते हो। हाँ सचमुच! मुझे उम्मीद है, मेरी बैठक की हवा तुम्हारा सारा चिड़चिड़ापन और उदासी दूर कर देगी। क्यों, क्या ख़याल है?"

ऐसे मौक़ों के लिए हर शख़्स के पास जो गढ़े-गढ़ाये औपचारिक फ़िकरे होते हैं, उन्हीं में से एक को कह कर मैंने उनकी बात का उत्तर दे दिया।

एक के बाद दूसरे क्वाड्रिल नाचों का क्रम बहुत लम्बे समय तक खिंचता रहा; लेकिन आख़िरकार मज़ूर्का शुरू हो ही गया और मैं जा कर राजकुमारी की बगल में जम गया।

न तो मैंने उस पियक्कड़ का कोई ज़िक्र किया, न अपने पिछले व्यवहार का और न ही ग्रुश्नीत्स्की का! उस अप्रिय घटना का जो असर उस पर पड़ा था, वह धीरे-धीरे ग़ायब हो गया, उसका चेहरा खिल उठा और वह बड़े ही मोहक अन्दाज़ में चहकने लगी। उसकी बातें तीखी ज़रूर थीं, पर उनमें सायास हाज़िर-जवाबी दिखाने का प्रयत्न नहीं था; वह बड़ी सहज-स्वाभाविक, ज़िन्दादिल और सरस बातें कर रही थी। उसके कुछ विचार तो सचमुच काफ़ी गम्भीर और गहरे थे... मैंने बड़े ही उलझे ढंग से, घुमा-फिराकर, उसे यह जता दिया कि मैं बहुत दिनों से उसकी ओर आकर्षित हूँ। उसने अपना सिर झुका लिया और उसके मुख पर संकोच की हल्की-सी लाली छा गयी, फिर कुछ पल बाद अपनी मखमली आँखें मेरी ओर उठाते हुए, एक दबी मुस्कान के साथ वह बोली, "आप बड़े अजीब आदमी हैं!"

"मैं जान-बूझ कर ही आपसे मिलना नहीं चाहता था," मैंने अपनी बात ज़ारी रखी, "क्योंकि आप हमेशा इतने सारे प्रशंसकों से घिरी रहती हैं कि मुझे डर था, मैं उनमें कहीं खो न जाऊँ?"

"आपको डरने की कोई ज़रूरत नहीं थी; वे तो सब निहायत ही ऊबाऊ और नीरस किस्म के लोग हैं..."

"सभी?... यकीनन सब तो नहीं ही होंगे?"

उसने ग़ौर से मेरी ओर देखा, जैसे कुछ याद करने की कोशिश कर रही हो; एक बार फिर उसके चेहरे पर हल्की-सी लाली दौड़ गयी और आख़िरकार उसने निश्चय-भये स्वर में कहा, "हाँ, सब के सब!"

"मेरा दोस्त ग्रुश्नीत्स्की भी?"

"वे आपके दोस्त हैं, क्या?" उसने दुविधा में पड़ कर झिझकते हुए पूछा।

"हाँ, है तो।"

"उन्हें बेशक ऊबाऊ लोगों की कोटि में नहीं रखा जा सकता!"

"पर शायद अभागा ज़रूर कहा जा सकता है, क्यों?" हँसते हुए मैंने कहा।

"बेशक! मगर आप हँस क्यों रहे हैं? उनकी जगह पर आप होते तो मैं देखती!"

"क्यों? मैं ख़ुद भी तो कभी एक कैडेट था; और विश्वास मानें, मेरे जीवन का वह सबसे बढ़िया समय था!"

"तो क्या वे कैडेट हैं?" उसने एकदम पूछा, फिर पल भर चुप रह कर बोली, "मैं तो समझी थीं कि..."

"क्या समझी थीं आप?"

"कुछ नहीं। कुछ भी नहीं... अरे, वह महिला कौन है?"

बातचीत ने दूसरा रुख़ ले लिया और यह विषय फिर नहीं उठा।

मजूर्का समाप्त हो गया और अगली मुलाकात तक के लिए हम लोग विदा हुए। महिलाएँ अपने-अपने घर चली गयीं। भोजन के लिए भीतर जाते समय मेरी भेंट वेर्नर से हो गयी।

"अच्छा जी," उसने कहा, "तो यह है मामला! और आप फ़रमाते थे कि सामने खड़ी मौत से या और किसी बड़े ख़तरे से राजकुमारी को बचा कर ही आप उसका परिचय हासिल करेंगे?"

"मैंने उससे कुछ बेहतर ही किया," मैंने जवाब दिया, "मैंने उसे नाच के दौरान ग़श खा कर गिरने से बचाया।"

"क्यों, क्या हुआ? बताओ न?"

"नहीं, तुम्हें ख़ुद ही अक्ल दौड़ानी पड़ेगी। सोचो, बूझो। तुम जो पक्के अन्तर्यामी हो।"

मई ३०

साँझ के क़रीब सात बजे मैं मुख्य-पथ पर चहलकदमी कर रहा था। ग्रुश्नीत्स्की, दूर से मुझे देखकर, पास चला आया; उसकी आँखों में उल्लास-भरी बेख़ुदी की एक अजीब हास्यास्पद-सी चमक थी। उसने कस कर मेरा हाथ पकड़ लिया और एक दुख-भरे नाटकीय स्वर में बोला :

"मेरा शुक्रिया लो पेचोरिन... समझ गये न, किसलिए?"

"नहीं, मैं कतई नहीं समझा। ख़ैर, जो भी हो, मुझे शुक्रिया अदा करने की तो कोई बात नहीं है।" मैंने जवाब दिया, क्योंकि मुझे सचमुच कोई ऐसा अच्छा काम याद नहीं आ रहा था।

"क्यों, कल क्या हुआ था? भूल गये क्या? मेरी ने मुझे सब कुछ बता दिया है..."

"तुम्हारा मतलब है कि तुम अभी से उसकी हर चीज़ में हिस्सा बँटाने लगे हो? यहाँ तक कि कृतज्ञता में भी?"

"सुनो!" ग्रुश्नीत्स्की ने बड़े गम्भीर लहजे में शान और बड़प्पन जताते हुए कहा, "अगर तुम मेरे दोस्त बने रहना चाहते हो तो कृपा करके मेरे प्यार का मज़ाक मत उड़ाओ... सच कहूँ, मैं उसे जी-जान से प्यार करता हूँ... और मुझे विश्वास है आशा है कि वह भी मुझे प्यार करती है... मुझे तुमसे एक मदद चाहिए। आज शाम तुम उनसे भेंट करने जाओगे ही, वादा करो कि वहाँ जो कुछ हो, उस पर तुम निगाह रखोगे। मुझे मालूम है, तुम इन बातों में उस्ताद हो और तुम औरतों को मुझसे बेहतर

तौर पर जानते हो। आह, ये औरतें, औरतें! कौन सचमुच उन्हें पूरी तरह समझ पाया है? उनकी निगाहें कुछ कहती हैं और मुस्कराहटें कुछ और; उनके शब्द आश्वासन देते और ठगते हैं, लेकिन उनका लहजा परे हटाता है। या तो वे आपके अन्तर में छिपे ख़यालों को बिजली की तेज़ी से भाँप लेंगी या फिर साफ़ इशारा भी उनकी पकड़ में नहीं आयेगा... अब इस राजकुमारी को ही लो कल तक मुझे देखते ही उसकी आँखें प्यार से दहक उठती थीं, लेकिन आज वे निष्प्रभ और ठण्डी हैं..."

"शायद यह गन्धक के पानी का असर है," मैंने जवाब दिया।

"तुम्हारी नज़र हमेशा चीज़ों के बुरे पहलू की तरफ़ ही जाती है... वस्तुवादी कहीं के!" उसने चिढ़ कर उपेक्षा से कहा, "लेकिन छोड़ो, अब दूसरी वस्तुओं पर आया जाय।" अपने इस बचकाने श्लेष से ख़ुश हो कर उसका मन फिर खिल उठा।

नौ बजे हम दोनों साथ-साथ राजकुमारी के यहाँ पहुँचे।

वेरा की खिड़की के सामने से गुज़रते हुए मैंने देखा, वह बाहर झाँक रही थी। बड़े सरसरी तौर पर हमारी आँखें चार हुईं। कुछ क्षण बाद ही वह भी रानी साहिबा की बैठक में दाख़िल हुई और रानी साहिबा ने, वेरा को अपनी एक रिश्तेदार बताते हुए, उससे मेरा परिचय कराया। फिर चाय का दौर शुरू हुआ। मेहमान बहुत-से थे और बातचीत साधारण विषयों पर ही होती रही! मैंने रानी साहिबा को ख़ुश करने और उनका मन मोह लेने की पूरी कोशिश की। ढेरों लतीफ़े सुनाये और कई बार उन्हें ख़ूब खुल कर हँसाया भी। राजकुमारी के मन में भी कई बार हँसने की इच्छा हुई, मगर उसने हर बार अपनी इच्छा को दबा लिया, ताकि उसने जो भंगिमा धारण की है, चेहरे पर जिस मुद्रा को निरन्तर बनाये रखने का अभ्यास किया है वह कहीं भंग न हो जाय; क्योंकि उसका ख़याल है कि उदास, खोया-खोयापन उसकी सूरत पर जँचता है और शायद वह ठीक सोचती है। मेरा ख़याल है, ग्रुश्नीत्स्की को इस बात से काफ़ी ख़ुशी हुई कि राजकुमारी पर मेरी चुहलबाज़ी और ज़िन्दादिली का कोई ख़ास असर नहीं पड़ा।

चाय के बाद हम सभी लोग बैठक में चले आये।

"अब तो तुम मेरी हुक्म-बरदारी से ख़ुश हो वेरा?" उसके पास से गुज़रते हुए मैंने पूछा।

उसने प्यार और कृतज्ञता से छलकती निगाह मेरी ओर फेंकी। अब तो मैं इन

निगाहों का आदी हो गया हूँ, लेकिन एक समय था, जब ये निगाहें मेरे दिल की ख़ुशी और सुख का स्रोत थीं! रानी साहिबा ने अब अपनी पुत्री को पियानो बजाने के लिए कहा और सभी मौजूद लोग उससे गाने का अनुरोध करने लगे। मैं चुप रहा और इस हो-हल्ले का फ़ायदा उठाते हुए, वेरा के साथ एक खिड़की की ओर खिसक आया, क्योंकि उसने मुझे सूचना दी थी कि वह मुझे एक ऐसी बात बताना चाहती है, जो हम दोनों के लिए बहुत ज़रूरी और महत्वपूर्ण है। लेकिन जो कुछ उसने कहा, वह निरी बकवास निकली।

मेरी उदासीनता राजकुमारी को खल गयी जैसा कि उस नाराज़, कौंधती निगाह से मैंने अन्दाज़ा लगाया, जो उसने मेरी ओर फेंकी... बातचीत के इस मूक, लेकिन फिर भी बहुत कुछ कहने वाले, अर्थ-भरे माध्यम को मैं कितनी अच्छी तरह समझता हूँ कितना संक्षिप्त, फिर भी कितना सशक्त।

वह गाने लगी। उसकी आवाज़ तो मधुर है, पर उसे ठीक से गाना नहीं आता.. सच कहूँ तो मैंने उसका गाना सुना ही नहीं मगर ग्रुश्नीत्स्की पियानो पर दोनों कुहनियाँ टिकाये, राजकुमारी के सामने खड़ा, उसे निगाहों से पिये जा रहा था, और बार-बार 'गजब है! कमाल है!' की रट लगाये हुए था।

"सुनो," वेरा मुझसे कह रही थी, "मैं यह कतई नहीं चाहती कि मेरे पति से तुम्हारा परिचय बढ़े, मगर रानी साहिबा की कृपा-दृष्टि तुम्हें हर हालत में प्राप्त करनी होगी; तुम बड़ी आसानी से कर सकते हो; तुम तो जो चाहो, सो कर सकते हो। हम लोग यहाँ ही मिला करेंगे..."

"और कहीं नहीं?"

वह शर्म से लाल हो गयी, फिर बोली :

"तुम जानते हो, मैं तुम्हारी दासी हूँ; तुम्हारी बात टालना हमेशा मेरे बस के बाहर रहा है। मुझे इसकी सजा भी मिलेगी क्योंकि तुम मुझे प्यार करना छोड़ दोगे। मैं कम-से-कम अपनी प्रतिष्ठा को बचा कर रखना चाहती हूँ; अपने लिए नहीं यह तुम बहुत अच्छी तरह जानते हो। पर दया करके पहले की तरह व्यर्थ के सन्देहों और दिखावटी अवहेलना से मुझे और अधिक मत सताना। हो सकता है, मैं ज़्यादा दिन ज़िन्दा न रहूँ, क्योंकि मुझे लगता है, मैं दिन-पर-दिन कमज़ोर होती जा रही हूँ... इसके बावजूद मौत के परे किसी और ज़िन्दगी की बात मैं नहीं सोच पाती, मैं तो बस सिर्फ़ तुम्हारे बारे में सोचती हूँ। बेख़ुदी-भरे जोश के उस जज़्बे का एहसास तुम मर्दों

को नहीं है, जिसे कोई व्यक्ति एक निगाह या हाथ के स्पर्श भर से हासिल कर सकता है; लेकिन मैं कसम खा कर कहती हूँ, तुम्हारी आवाज़ सुन कर मैं ख़ुशी के एक ऐसे गहरे, अजीब एहसास से भर उठती हूँ, जिसे कई आवेग-भरे चुम्बन भी नहीं पैदा कर सकते।"

इस बीच राजकुमारी गीत समाप्त कर चुकी थी। उसके चारों ओर प्रशंसा और 'वाह-वाह' की झड़ी लग गयी। मैं बिलकुल आख़िर में उसके पास पहुँचा और मैंने उसकी आवाज़ की तारीफ़ में यों ही कुछ शब्द लापरवाही से कह दिये।

उसने नाराज़गी से होंठ फुला लिये, फिर व्यंग-से झुक कर मेरी तारीफ़ का शुक्रिया अदा किया।

"आप की तारीफ़ सुन कर मुझे इसलिए भी ख़ुशी हुई," उसने कहा, "क्योंकि आप गाना कतई नहीं सुन रहे थे। पर शायद आप संगीत पसन्द नहीं करते?"

"नहीं-नहीं राजकुमारी, इसके विपरीत मैं संगीत ज़रूर पसन्द करता हूँ, ख़ास तौर से दोपहर के भोजन के बाद।"

"ग्रुश्नीत्स्की ठीक ही कहता है कि आप की रुचियाँ बेहद नीरस और रूखी हैं। यहाँ तक कि मैं भी देख सकती हूँ, आप संगीत को एक चटोरे आदमी के दृष्टिकोण से पसन्द करते हैं..."

"आप फिर भूल कर रही हैं। मैं कतई चटोरा नहीं और मेरा हाजमा भी कमज़ोर है। फिर भी, खाने के बाद संगीत आपको धीरे-धीरे सुला देता है और खाने के बाद एक झपकी सेहत के लिए बहुत फ़ायदेमन्द है; सो इस तरह आप यह कह सकती हैं कि मैं दवा के तौर पर संगीत पसन्द करता हूँ। इसके विपरीत, शाम के समय संगीत मेरी नसों को बहुत उत्तेजित कर देता है और मेरी तबियत या तो बेहद भारी-भारी और उदास हो जाती है, या बहुत उत्फुल्ल। जब तक उदास होने या ख़ुशी मनाने का कोई ख़ास कारण न हो, ये दोनों ही जज़्बे बड़े उकताने वाले हैं; इसके अलावा बहुत-से लोगों की मौजूदगी में मुँह लटका कर बैठे रहना हास्यास्पद है और बेमतलब ज़िन्दादिली अशोभनीय..."

मेरी बात पूरी होने की प्रतीक्षा किये बिना ही वह चल दी और जा कर ग्रुश्नीत्स्की की बगल में बैठ गयी। दोनों भावुकता-भरी बातें करने में व्यस्त हो गये ग्रुश्नीत्स्की की विद्वतापूर्ण बातों का उत्तर राजकुमारी बड़े अन्यमनस्क और असंगत तरीके से दे रही लगती थी, हालाँकि ऊपर से वह उसकी बातों में रुचि लेने का दिखावा कर रही

थी और बेचारा ग्रुश्नीत्स्की जब-तब उसके चेहरे को ऐसी विस्मय-भरी निगाह से देख रहा था, मानो उसकी आँखों में झलकती व्याकुलता का कारण जानने और उसकी आन्तरिक उद्विग्नता की थाह लेना चाह रहा हो।

लेकिन मैंने तुम्हारा भेद खोल लिया है, मेरी प्यारी राजकुमारी, इसलिए होशियार! मेरे अहम को ठेस लगा कर तुम शायद मियाँ की जूती मियाँ के सिर ही मारना चाहती हो मगर ऐसा कर पाने में तुम सफल नहीं हो पाओगी! और अगर तुमने मेरे ख़िलाफ़ लड़ाई छेड़ दी तो याद रखना, मैं कोई दया-माया नहीं जानता!

उस शाम के दौरान मैंने कई बार उनकी बातचीत में जान-बूझ कर हिस्सा लेना चाहा, मगर उसने हर बार बड़ी रुखाई से मेरी बातों को काट दिया, और आख़िरकार नाराज़गी का अभिनय करता हुआ, मैं वहाँ से हट आया। राजकुमारी अपनी इस विजय पर बड़ी उल्लसित हुई, ग्रुश्नीत्स्की भी। मना लो दोस्तो, जब तक मौक़ा है, जीत की ख़ुशियाँ मना लो... बहुत देर तक ख़ुशियाँ नहीं मना पाओगे। फिर क्या होगा? मुझे कुछ-कुछ पूर्वाभास-सा हो रहा है... किसी औरत से पहली बार मिलने पर ही मैं हमेशा दावे के साथ यह कह सकता हूँ कि वह मेरे प्यार में फँसेगी या नहीं...

शाम का बाकी समय मैंने वेरा के साथ गुज़ारा, और हमने जी भर कर बीते हुए समय के बारे में बातें कीं। मैं सचमुच यह नहीं समझ पाता कि वह मुझे क्यों इतना प्यार करती है। ख़ासकर तब, जबकि दुनिया में वही एक औरत है, जो मेरी तमाम छोटी-छोटी कमज़ोरियों और बुराइयों के साथ मुझे पूरी तरह समझ पायी है... क्या सचमुच बुराई में ऐसा आकर्षण हो सकता है?

मैं ग्रुश्नीत्स्की के साथ ही वहाँ से निकला। बाहर आ कर उसने मेरी बाँह पकड़ी और काफ़ी देर की ख़ामोशी के बाद बोला "हाँ, तो अब बताओ, क्या ख़याल है तुम्हारा?"

मन में आया, कह दूँ 'तुम पूरे काठ के उल्लू हो।' लेकिन मैंने ख़ुद को रोक लिया और सिर्फ़ कन्धे उचका दिये।

जून ६

मैं इन तमाम दिनों में अपने ढर्रे से ज़रा भी इधर-उधर नहीं हटा। राजकुमारी अब धीरे-धीरे मेरी बातों में रस लेने लगी है। मैंने अपनी ज़िन्दगी की कुछ अद्‌भुत घटनाएँ उसे सुनायी हैं, और वह मुझे एक असाधारण व्यक्ति समझने लगी है। मैं हर चीज़ की खिल्ली उड़ाता हूँ, ख़ास तौर से भावुकता की, और इससे वह डरने लगी है। अब मेरी मौजूदगी में वह ग्रुश्नीत्स्की से लम्बी-लम्बी भावुकता-भरी बहस करने से कतराती है और इस बीच कई मौक़ों पर तो उसने ग्रुश्नीत्स्की की बातों का जवाब एक व्यंग्य-भरी मुस्कान के साथ भी दिया है। फिर भी जब-जब ग्रुश्नीत्स्की उसके पास आता है, मैं हर बार बड़ी ही विनीत मुद्रा बना कर उन दोनों को अकेला छोड़ देता हूँ। जब मैंने पहली बार ऐसा किया तो उसे ख़ुशी हुई, या यों कहूँ कि उसने ख़ुश दिखने की कोशिश की; दूसरी बार वह मुझ पर झुँझला उठी, और तीसरी बार ग्रुश्नीत्स्की पर।

"आप में बहुत कम आत्म-सम्मान है!" उसने कल मुझसे कहा, "आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि ग्रुश्नीत्स्की का साथ मुझे ज़्यादा पसन्द है?"

मैंने जवाब दिया कि मैं तो दोस्त की ख़ुशी के लिए अपना सुख कुर्बान कर रहा था।

"और साथ-साथ मेरा सुख भी!" वह बोली।

मैंने ग़ौर से उसकी ओर देखा और एक गम्भीर मुद्रा बना ली। उसके बाद मैं दिन भर उससे एक शब्द नहीं बोला... कल रात वह उदास हो गयी थी, और आज सुबह झरने पर तो वह और भी मायूस दिखायी दी। जब मैं उसके पास पहुँचा, तो वह बेमन से ग्रुश्नीत्स्की की बातें सुन रही थी, जो मेरा ख़याल है प्रकृति के सौन्दर्य पर अपना वही घिसा-घिसाया राग अलाप रहा था; लेकिन जैसे ही राजकुमारी का ध्यान मेरी ओर गया, वह मुझे अनदेखा करके खिलखिला कर हँसने लगी; हालाँकि उसकी हँसी कुछ अप्रासंगिक और असम्बद्ध-सी थी। ज़रा परे को हट कर मैंने कनखियों से उस पर नज़र रखी; मैंने देखा, अपने साथी की ओर से मुँह फेर कर उसने दो बार जँभाई ली। अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह गया है : वह ग्रुश्नीत्स्की से उकता गयी है। लेकिन अभी दो दिन और मैं उससे नहीं बोलूँगा।

जून ११

मैं अक्सर अपने आपसे सवाल करता हूँ कि जिस युवती को मैं न तो बहका कर भगा ले जाना चाहता हूँ और न जिससे मैं कभी शादी ही करूँगा, उसका प्यार जीतने के लिए मैं क्यों इस तरह लगातार कोशिश कर रहा हूँ? यह औरतों जैसी चोंचलेबाज़ी क्यों? वेरा मुझे इतना प्यार करती है, जितना राजकुमारी कभी नहीं कर पायेगी। वह अगर अजेय सुन्दरी ही होती, तो शायद उसे प्राप्त करने की कठिनाइयाँ मेरे लिए प्रलोभन का काम करतीं...

लेकिन बात इससे बिलकुल उलट है! इसलिए यह प्यार पाने की वह बेचैन, अनवरत लालसा भी नहीं है, जो हमारी जवानी के आरम्भिक दिनों में इस कदर हमें सताती है; जो हमें एक औरत से दूसरी औरत की तरफ़ फेंकती रहती है, जब तक कि हमारी मुलाकात अन्ततः उस औरत से नहीं हो जाती, जो हमें बर्दाश्त नहीं कर सकती; बस यहीं से हमारी थिरता और निष्ठा की शुरुआत होती है वह सच्चा अन्तहीन आवेग, जिस गणित में एक ऐसी रेखा द्वारा अभिव्यक्त किया जा सकता है, जो किसी बिन्दु से शुरू हो कर किसी दिशा में निरन्तर खिंचती चली गयी हो और जिसकी अन्तहीनता का रहस्य सिर्फ़ मंजिल यानी कि अन्त को पाने की नाकामयाबी में ही निहित हो।

फिर क्या है, जो मुझे उकसाता रहता है? ग्रुश्नीत्स्की के प्रति ईर्ष्या? बेचारा! वह कतई इस काबिल नहीं! तो फिर क्या यह अपने किसी साथी मनुष्य के सुखद सपनों, आनन्द-भरे भ्रमों को ध्वस्त करने की द्वेष-भरी, लेकिन साथ ही दुर्निवार भावना का परिणाम है, ताकि जब वह हताश हो कर हमारे पास सहानुभूति के लिए आये, तो हम उसे यह बताने का ओछा सन्तोष पा सकें कि :

"मेरे भाई, ठीक यही सब मेरे साथ भी घटित हुआ है! फिर भी, जैसा कि तुम ख़ुद ही देख रहे हो, मैं उसी तरह खाता-पीता हूँ और मज़े में सोता हूँ; और उम्मीद करता हूँ कि जब वक्त आयेगा तो बिना ज़्यादा गुल-गपाड़ा मचाये या रोये-धोये, इस दुनिया से चल दूँगा।"

इस पर भी उस तरूण हृदय पर अधिकार हासिल करना, जिसमें अभी-अभी कल्ले फूटे हों, कितने अथाह सुख का स्रोत है। ऐसा हृदय उस फूल सरीखा होता है, जिसकी मधुरतम सुगन्ध सूरज की पहली किरण का स्वागत करने निकल पड़ती है; ठीक उसी क्षण उसे तोड़ लेना चाहिए, और जी भर कर उसकी महक सूँघ कर, उसे इस आशा में फेंक देना चाहिए कि कोई दूसरा उसे उठा लेगा। मुझे अपने भीतर शिद्दत से उसी बेइन्तहा हवस का एहसास होता है, जो अपने रास्ते में पड़ने वाली हर चीज़

को हड़प लेती है। दूसरों के सुख-दुख को भी मैं सिर्फ़ अपने से जोड़ कर, अपनी आन्तरिक शक्ति को बनाये रखने के लिए आहार के रूप में देखता हूँ। तीव्र-से-तीव्र आवेग अब इस काबिल नहीं रहे कि मुझसे मेरा मानसिक सन्तुलन छीन पायें। हालाँकि परिस्थितियों ने मेरी महत्वाकांक्षा को कुचल दिया है, लेकिन वह नये रूप में प्रकट हुई है, क्योंकि महत्वाकांक्षा अधिकार-लोलुपता के सिवा और कुछ नहीं है। और मुझे सबसे ज़्यादा सुख अपने आस-पास की हर चीज़ पर हावी रहने में, उसे अपनी इच्छा के अधीन रखने में ही मिलता है। क्या अधिकार का पहला लक्षण और साथ ही उसकी महानतम विजय, दूसरों के भीतर प्रेम, श्रद्धा और डर की भावनाओं को प्रेरित करना नहीं है? किसी पर रंच मात्र अधिकार न होते हुए भी उसके सुख-दुख का एकमात्र कारण बन बैठना, क्या हमारे अहं के लिए सबसे मीठी खुराक नहीं है? और सुख क्या है? अहं की सन्तुष्टि! अगर वाकई मैं अपने आपको दुनिया के बाकी सब लोगों से बेहतर और अधिक शक्तिशाली समझ सकता, तो मैं निश्चय ही सुखी होता; अगर सभी मुझे प्यार करने लगते, तो मेरे भीतर भी प्यार के अन्तहीन सोते उमड़ पड़ते। बुराई से बुराई पैदा होती है। तकलीफ़ के पहले एहसास ही से हमें यह पता चल जाता है कि दूसरे को तकलीफ़ पहुँचा कर कैसा सुख मिलता है। बुराई को व्यवहार में लाने की इच्छा के बिना, बुराई की धारणा आदमी के दिमाग़ में जड़ें नहीं जमा सकती। किसी ने कहा है कि विचारों का अपना सजीव अस्तित्व होता है। उनका जन्म ही उन्हें रूप भी दे देता है कार्य ही वह रूप है! जिस आदमी के दिमाग़ में जितने ज़्यादा विचार जन्मते हैं, वह दूसरों के मुकाबले में उतना ही अधिक क्रियाशील भी होगा। यही कारण है कि दफ़्तर की कुर्सी से जकड़ दिया गया प्रतिभाशाली आदमी या तो मर जायेगा या पागल हो जायेगा; ठीक वैसे ही, जैसे एक शक्तिशाली और तन्दुरूस्त आदमी, जो निष्क्रिय और सादी ज़िन्दगी बिताने लगता है, लकवे के दौरे से चल बसता है।

आवेग, अपने विकास की पहली अवस्था में, विचारों से ज़्यादा और कुछ नहीं होते। वे तभी कायम रहते हैं, जब तक दिल जवान रहता है और वह आदमी, जो यह सोचता है कि वे ज़िन्दगी भर उसे उत्तेजित करते रहेंगे, बेवकूफ़ है। न जाने कितनी शान्त, गम्भीर नदियाँ गरजते-उमड़ते झरनों से शुरू होती हैं, लेकिन उनमें से एक भी नदी ऐसी नहीं, जो उसी तरह उछलती-कूदती और फेन उगलती, सागर तक पहुँचती हो? अक्सर यह बाहरी गम्भीरता या शान्ति, अदम्य, लेकिन छिपी हुई, शक्ति का चिह्न होती है। भावों और विचारों की गहराई और उनका भरा-पूरापन, तीव्र और उग्र भावनाओं पर रोक लगा देता है, क्योंकि सुख और दुख मनाते समय आत्मा, जो घटित हो रहा

होता है, उससे पूरी तरह अवगत रहती है और इस बात के प्रति भी सचेत रहती है कि ऐसा ही होना चाहिए। वह अच्छी तरह जानती है कि अगर तूफ़ान और बारिश न हों, तो सूरज की निरन्तर गर्मी उसे सुखा देगी। अपनी ही ज़िन्दगी में शराबोर, वह उसी तरह अपने आपको दुलराती और फटकारती रहती है, जैसे एक माँ अपने लाडले बच्चे को! आत्म-ज्ञान के इस उच्चतम धरातल पर पहुँच कर ही मनुष्य दैवी न्याय को ठीक-ठीक समझ सकता है।

इस पृष्ठ को शुरू से पढ़ने पर मैंने ग़ौर किया है कि मैं अपने विषय से बहुत दूर भटक आया हूँ। मगर इससे क्या? चूँकि यह डायरी मैं ख़ुद अपने ही लिए लिख रहा हूँ, इसलिए जो कुछ भी मैं इस समय लिखूँगा, समय बीतने पर वह मेरे लिए यादगार बन जायेगा।

ग्रुश्नीत्स्की मेरे कमरे में दाख़िल होते ही मेरे गले से लिपट गया उसे आख़िर कमीशन मिल गया था। हमने थोड़ी-सी शैम्पेन चढ़ायी। इसके फ़ौरन बाद ही डॉक्टर वेर्नर भी आ पहुँचा।

"मैं तुम्हें बधाई नहीं दूँगा," उसने ग्रुश्नीत्स्की से कहा।

"क्यों?"

"क्योंकि वह फ़ौजी कोट तुम पर बहुत फबता है; और इतना तो तुम भी मानोगे कि इस कस्बे में सिली हुई फ़ौजी अफ़सर की वर्दी तुम्हारे आकर्षण में कुछ भी नया नहीं जोड़ पायेगी... देखो, अब तक तुम एक अपवाद रहे हो, लेकिन अब तुम उन बहुत-से नत्थू-ख़ैरों में ही गिने जाओगे।"

"कुछ भी कहो डॉक्टर, लेकिन ख़ुशियाँ मनाने से तुम मुझे नहीं रोक सकते।" फिर वह मेरे कान में फुसफुसा कर बोला, "यह बेचारा क्या जाने, इन झब्बों से मैंने क्या-क्या उम्मीदें जोड़ रखी हैं? आह, झब्बे! झब्बे! इनमें जड़े सितारे ही तो मेरे छोटे-छोटे चमकदार भाग्य-नक्षत्र हैं... नहीं! अब मैं पूरी तरह सुखी हूँ।"

"तुम हमारे साथ खड्ड तक घूमने चलोगे?" मैंने पूछा।

"उँह नहीं! जब तक मेरी नयी वर्दी तैयार नहीं हो जाती, मैं किसी भी कीमत

पर राजकुमारी को शक्ल नहीं दिखाऊँगा।"

"क्या मैं तुम्हारे इस सौभाग्य की ख़बर उसे दे दूँ?"

"नहीं, नहीं भाई, ऐसा मत करना! मैं उसे चौंकाना चाहता हूँ।"

"ख़ैर, एक बात बताओ, कैसा चल रहा है तुम्हारा उसके साथ?"

वह झेंप गया और दुविधा में पड़ा, कुछ देर सोचता रहा। अपने प्रेम के बारे में शेखी बघारना और झूठ बोलना उसे निश्चय ही अच्छा लगता, लेकिन उसके विवेक ने उसे रोक दिया; दूसरी ओर, सच्ची बात मान लेने में भी उसे शर्म लग रही थी।

"तुम्हारा ख़याल है, वह तुम्हें प्यार करती है?"

"मुझे प्यार करती है? भगवान के लिए पेचोरिन, तुम्हारे दिमाग़ में भी क्या-क्या बातें आती हैं? इतनी जल्दी इसकी आशा तुम कैसे कर सकते हो? और अगर वह प्यार करती भी हो, तो कोई सम्भ्रान्त महिला यह सब कहती थोड़े ही है..."

"ठीक! तो शायद तुम यह मानते हो कि एक सम्भ्रान्त पुरुष को भी अपना प्रेम प्रकट नहीं करना चाहिए।"

"अरे भले आदमी, हर काम को करने का एक सही तरीका होता है। बहुत-सी बातों को खोल कर नहीं कहा जाता, उनके बारे में अन्दाज़ लगाया जाता है..."

"बिलकुल ठीक... लेकिन औरत की आँखों में दिखने वाले प्यार का भरोसा नहीं किया जा सकता; उससे वह बँधती नहीं; जबकि उसके शब्द... बच कर रहो ग्रुश्नीत्स्की, वह तुम्हें धोखा दे रही है..."

"वह!" उसने आसमान की ओर आँखें उठाते और आत्म-तुष्टि से मुस्कराते हुए कहा, "तुम पर तरस आता है, पेचोरिन!"

और वह चला गया।

शाम को लोगों का एक अच्छा-ख़ासा दल पैदल ही खड्‌ड की तरफ़ रवाना हुआ।

स्थानीय पण्डितों की राय में यह खड्‌ड एक बुझा हुआ ज्वालामुखी है। यह कस्बे से लगभग एक वर्स्ट दूर, माशूक की ढलान पर स्थित है। एक सँकरी पगडण्डी, झाड़ियों और चट्‌टानों के बीच से बल खाती हुई, इस खड्‌ड तक जाती है। पहाड़ की ढलान पर चढ़ते समय मैंने सहारा देने के लिए राजकुमारी की ओर अपनी बाँह बढ़ा

दी, जिसे पूरे रास्ते भर उसने छोड़ा नहीं।

हमारी बातचीत परनिन्दा से शुरू हुई। मैंने एक-एक करके, उपस्थित और अनुपस्थित, दोनों तरह के अपने परिचितों की ख़बर लेनी शुरू की; पहले तो मैंने उनके हास्यास्पद पहलुओं को लिया, फिर उसने दुर्गुणों को। मेरे अन्दर कटुता उभर रही थी और मज़ाक-मज़ाक ही में शुरू करके, मैं अन्त तक आते-आते काफ़ी गम्भीर हो उठा। मेरी बातें सुन कर पहले तो उसे भी मज़ा आया, लेकिन बाद में घबरा कर वह चौंक उठी।

"आप तो बड़े ख़तरनाक आदमी हैं!" उसने मुझसे कहा, "आपकी ज़बान से हलाल होने की अपेक्षा मैं जंगल में किसी हत्यारे के छुरे से मरना ज़्यादा पसन्द करूँगी। सच, मैं हाथ जोड़ती हूँ कि अगर आपके मन में कभी मेरी बुराई करने की बात आये, तो ऐसा करने की बजाय छुरे से मेरा काम तमाम कर दीजियेगा। मुझे यकीन है, आपके लिए ऐसा करना बहुत मुश्किल नहीं होगा।"

"तो क्या मैं किसी हत्यारे-सा दिखता हूँ?"

"शायद इससे भी ज़्यादा..."

पल भर मैंने सोचा, फिर गहरे मर्माहत स्वर में बोलना शुरू किया :

"हाँ, बचपन से ही मेरी तकदीर कुछ ऐसी रही है। लोगों को मेरे चेहरे पर ऐसी-ऐसी बुराइयाँ दिखायी देतीं, जिनका दरअसल कोई वजूद ही नहीं था। मगर चूँकि उनके वहाँ होने की अपेक्षा की जाती थी, इसलिए वे सचमुच उभर आयीं और दिखने लगीं। चूँकि मैं अपने में ख़ामोश सिमटा रहता था, इसलिए उन्होंने कहा कि मैं धूर्त्त हूँ, लिहाजा मैं और भी चुप्पा और घुन्ना बन गया। भले बुरे का भी मुझे पूरा-पूरा एहसास था, लेकिन दुलार की जगह मुझे हमेशा तिरस्कार ही मिला, इसलिए मैं विद्वेषी बन गया। मैं रूठा और खीझा-खीझा रहता था, जबकि दूसरे बच्चे हँस-मुख और बातूनी थे, लेकिन यद्यपि मैं अपने आपको उनसे बेहतर समझता था, लोग मुझे उनसे घटिया ही समझते रहे; इसलिए मैं ईर्ष्यालु हो गया। मैं पूरी दुनिया को प्यार करने के लिए तैयार था, मगर किसी ने मुझे समझा नहीं, किसी ने मेरे प्यार की कीमत नहीं जानी और मैं नफ़रत करना सीख गया। मेरी मायूस और उदास जवानी ख़ुद अपने आप से और समाज से लड़ने-झगड़ने में ही गुज़र गयी, और उपहास के डर से मैंने अपनी श्रेष्ठतम भावनाओं को दिल की अतल गहराइयों में दबा दिया और वहीं दबे-दबे वे ख़त्म हो गयीं। मैं सच बोलता

था, लेकिन किसी ने मेरा विश्वास नहीं किया, सो मैंने छल-कपट और झूठ का अभ्यास कर लिया। समाज और उसकी प्रमुख धाराओं को पहचान कर, मैं जीने की कला में निपुण हो गया और मैंने पाया कि इस दक्षता के बिना भी लोग कितने सुख से रहते हैं अकारण और मुफ़्त में ही उन वरदानों का मज़ा लूटते हुए, जिन्हें पाने की कोशिश करने में मैंने इतनी तकलीफें उठायी थीं। बस, ठीक उसी समय मेरे सीने में हताशा का जन्म हुआ ऐसी हताशा नहीं, जिसका इलाज पिस्तौल की गोली हो बल्कि दिलकश मुस्कान और विनम्र चेहरे-मोहरे के नीचे छिपी हुई ठण्डी, जड़ और नपुंसक हताशा! मैं नैतिक रूप से पंगु हो गया। अपनी आत्मा का आधा हिस्सा मैं खो चुका था, क्योंकि वह सूख कर मुरझा गया था, मर गया था और मैंने उस हिस्से को काट कर फेंक दिया था, जबकि बचा हुआ बाकी हिस्सा हर नये आदमी के काम आने की अनुरूपता में ढल कर ज़िन्दा रहा धड़कता और हरकत करता रहा। किसी ने इस पर ग़ौर नहीं किया, क्योंकि किसी को यह शक ही नहीं हुआ कि इस आत्मा का कोई दूसरा हिस्सा कभी था भी। ख़ैर, अब आपने उस खोये हुए हिस्से की यादें कुरेद कर जगा दी हैं। और मैंने अभी-अभी जो कुछ कहा, वह उस खोये हुए हिस्से का मर्सिया उसकी कब्र पर जड़े पत्थर पर ख़ुदा पंक्तियाँ ही हैं। कुछ लोग मर्सियों को हास्यास्पद समझते हैं, मगर मैं ऐसा नहीं समझता; ख़ास कर तब, जब मुझे ध्यान आता है कि उनके नीचे क्या कुछ दफ़्न है। बेशक, मैं आप को अपनी राय से सहमत होने के लिए नहीं कहता; अगर आपको मेरी बात बहुत बेतुकी लगती हो, तो आप बड़ी ख़ुशी से हँसिए, हालाँकि यह भी मैं बता दूँ कि आपकी हँसी का मैं रत्ती भर बुरा नहीं मानूँगा।"

उसी क्षण हमारी आँखें चार हुईं, और मैंने देखा कि उसकी आँखें आँसुओं में तैर रही थीं; मेरी बाँह पर रखी उसकी बाँह काँप रही थी और उसके गाल तमतमा उठे थे। वह मन-ही-मन मेरे लिए अफ़सोस कर रही थी। करूणा वह भावना, जिसके आगे सभी औरतें इतनी आसानी से झुक जाती हैं उसके नातजुर्बेकार दिल को अपने पंजों की गिरफ़्त में ले चुकी थी। रास्ते भर वह अन्यमनस्क-सी चलती रही और उसने किसी से ज़रा भी चुहलबाज़ी नहीं की! सचमुच यह एक महत्वपूर्ण शकुन है।

आख़िरकार हम खड्ड के पास पहुँच गये। दूसरी सभी महिलाओं ने अपने-अपने साथियों को छोड़ दिया, लेकिन उसने मेरा हाथ नहीं छोड़ा। स्थानीय छैलों की दिल्लगी भी उसे ख़ुश न कर सकी। जिस चट्टान के कगार पर वह खड़ी थी, उसकी खड़ी

ढलान का उसे कोई भय नहीं लग रहा था, जबकि दूसरी युवतियों ने तो भय से चीख़ कर अपनी-अपनी आँखें बन्द कर ली थीं।

वापसी पर मैंने उस उदास बातचीत को फिर नहीं उठाया, लेकिन मेरे साधारण प्रश्नों और हल्की-फुल्की चुटकियों का जवाब भी उसने बड़े उखड़े-उखड़े और संक्षिप्त शब्दों में दिया।

"क्या आपने कभी किसी को प्यार किया है?" आख़िरकार मैंने उससे पूछा।

उसने ग़ौर से मुझे देखा, सिर हिलाया, और फिर विचारों में खो गयी। यह ज़ाहिर था कि वह कुछ कहना तो अवश्य चाहती थी, मगर उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि कैसे और कहाँ से शुरू करे। साँसों के साथ उसका सीना उठ-गिर रहा था... सच ही, मलमल की आस्तीन आख़िर कितना बचाव कर सकती थी मेरी बाँह से बिजली जैसी एक सिरहन उसकी बाँह में दौड़ गयी। ज़्यादातर प्रम इसी तरह शुरू होते हैं, और हम अक्सर यह सोच कर अपने आपको धोखा देते हैं कि फ़लाँ औरत हमारे शारीरिक या नैतिक गुणों के कारण हमसे प्यार करती है; यह ठीक है कि ये गुण भी ज़मीन तैयार करते हैं उस पवित्र लौ का स्वागत करने के लिए हृदय को तत्पर बनाते हैं लेकिन इस सब के बावजूद, यह पहला स्पर्श ही है, जो सारी चीज़ों को तय कर देता है।

"आज तो मैं बड़ा सुशील और मिलनसार रही हूँ। है न?" सैर से लौटने पर राजकुमारी ने जबरन होंठों पर मुस्कान ला कर पूछा

और हमने विदा ली।

वह अपने-आपसे नाराज़ है, अपने रूखे व्यवहार के लिए ख़ुद को ही दोष देती है। आह, यह मेरी पहली और सबसे मार्के की विजय है। कल वह मुझे इसका इनाम देना चाहेगी।

मैं यह सब जैसे रटे बैठा हूँ और यही इस सारे व्यापार को इतना ऊबाऊ और नीरस बना देता है।

जून १२

मैं अभी-अभी वेरा से मिल कर आया हूँ। उसने ईर्ष्या के मारे मेरी नाक में दम

कर दिया। लगता है, राजकुमारी ने अपने दिल के राज बताने के लिए वेरा को ही चुना है। वाह क्या ख़ूब चुनाव किया है!

"मैं अन्दाज़ा लगा सकती हूँ कि इसका नतीजा क्या होगा," वेरा मुझसे बोली, "बेहतर होगा, अगर तुम मुझसे यह साफ़-साफ़ कह दो कि तुम उसे प्यार करने लगे हो।"

"और मान लो, मैं उसे प्यार नहीं करता?"

"तो फिर उसके पीछे पड़ने, उसे तंग करने और उसके मन में आशा जगाने की क्या ज़रूरत है? अरे, मैं तुम्हारी नस-नस पहचानती हूँ! अगर तुम मुझे अपनी बात का विश्वास दिलाना चाहते हो, तो आज से सात दिनों के भीतर किस्लोवोद्स्क चले जाओ। हमलोग वहाँ परसों जाने वाले हैं। रानी साहिबा अभी कुछ दिन और यहाँ ठहरेंगी। हमारे घर के बगल का घर किराये पर ले लो; हमलोग फ़व्वारे के पास वाले बड़े घर की बीच वाली मंजिल पर ठहरेंगे। रानी साहिबा का डेरा उसी मकान की निचली मंजिल में होगा। उस मकान से लगा हुआ ही उसी मकान-मालिक का एक दूसरा मकान है, जो अभी किराये पर नहीं उठा है... तो आ रहे हो न?"

मैंने वादा किया, और उसी दिन एक आदमी को किराये पर कमरे लेने के लिए किस्लोवोद्स्क भेज दिया।

शाम को छह बजे ग्रुश्नीत्स्की आ पहुँचा और उसने यह ख़बर सुनायी कि उसकी वर्दी अगले दिन, नाच के लिए ठीक समय पर, सिल कर तैयार हो जायेगी।

"आख़िरकार अब मैं उसके साथ सारी शाम नाचूँगा... और जी भर कर बातें करूँगा!" उसने आगे कहा।

"यह नाच है कब?"

"कल! तुम्हें नहीं मालूम था क्या? भई, बड़ा ही ज़ोरदार आयोजन है, और स्थानीय अफ़सर ही इसका प्रबन्ध कर रहे हैं।"

"आओ, ज़रा बड़ी सड़क तक सैर कर आयें।"

"इस घिनौने फ़ौजी कोट में? ना बाबा, मुझे नहीं जाना..."

"क्या कहा? तुम्हारा मतलब है कि तुम अब इसे पसन्द नहीं करते?"

मैं अकेला ही निकल पड़ा और मुख्य-पथ पर राजकुमारी से मुलाकात होने पर मैंने उसे अगले दिन मजूर्का में मेरा साथ देने के लिए पूछा। वह बड़ी विस्मित और प्रसन्न दिखायी दी।

"मैंने तो सोचा था, आप सिर्फ़ लाचारी में ही नाचते हैं, जैसे पिछली बार।" उसने बड़ी ही मोहक मुस्कान के साथ कहा।

ऐसा लगता था कि ग्रुश्नीत्स्की की अनुपस्थिति से वह बिलकुल बेख़बर है।

"कल आपको एक सुखद आश्चर्य मिलने वाला है," मैंने उसे बताया।

"क्या?"

"अभी तो यह एक भेद है... हाँ, नाच के समय आप ख़ुद ही देख लेंगी।" वह शाम मैंने रानी लिगोव्स्काया के यहाँ ही बितायी। वहाँ वेरा और एक बड़े ख़ुश-मिज़ाज बुज़ुर्ग को छोड़ कर और कोई मेहमान नहीं था। मैं ज़रा मौज में था, इसलिए तरह-तरह की ऊट-पटाँग कहानियाँ गढ़-गढ़ कर सुनाता रहा। राजकुमारी मेरे सामने बैठी हुई, ऐसी तन्मयता, उत्कण्ठा और स्नेह से मेरी बातें सुन रही थी कि मुझे अफ़सोस और पछतावे की एक गहरी चुभन का एहसास हुआ। क्या हो गया था उसकी ज़िन्दादिली और नाज-नखरों को, उसकी चंचलता और गुमान को, उसकी गर्वीली अदा, उपेक्षा-भरी मुस्कराहट और खोयी-खोयी निगाहों को कहाँ ग़ायब हो गया था वह सब?

वेरा की निगाहों से यह सब छिपा नहीं रहा और एक गहरी उदासी उसके बीमार, मुर्झाये चेहरे पर झलक आयी; वह खिड़की के पास अँधेरे में एक बड़ी-सी आराम-कुर्सी में धँसी बैठी थी। उसके लिए दुख से मेरा मन भर आया....

तब मैंने नाम बदल कर उससे अपनी मित्रता और प्रेम की नाटकीय कहानी वहाँ बैठे लोगों को पूरी-की-पूरी कह सुनायी।

अपनी नाजुक भावनाओं, चिन्ताओं और खुशियों का ऐसा सजीव वर्णन मैंने किया, और वेरा के व्यवहार तथा चरित्र को ऐसी अच्छी रोशनी में चित्रित किया कि उसके सामने राजकुमारी से मेरी इश्कबाज़ी को माफ़ कर देने के सिवा और कोई चारा न रहा।

वह अपनी जगह से उठी, हमारे पास आ बैठी और अपनी मायूसी को भूल कर

फिर चहकने लगी... और फिर रात के क़रीब दो बजे ही हमें ख़याल आया कि डॉक्टरों का आदेश तो ग्यारह बजे तक सो जाने का है!

जून १३

बॉल शुरू होने के आध घण्टा पहले, फ़ौजी अफ़सर की शानदार वर्दी पहने, पूरी तड़क-भड़क और रोब के साथ ग्रुश्नीत्स्की मेरे कमरे में आ धमका। उसके कोट के तीसरे बटन में काँसे की एक ज़ंजीर फँसी थी, जिससे दो शीशों वाल लॉर्न्येट झूल रहा था। उसने ज़रूरत से ज़्यादा बड़े झब्बे लगा रखे थे; बायें हाथ में उसने मेमने की खाल के भूरे दस्ताने और टोपी पकड़ रखी थी और दाहिने से वह माथे के बालों के छोटे-छोटे छल्ले बनाने के लिए उन्हें बल दिये जा रहा था। उसके चेहरे पर कुछ अजीब-से संकोच का पुट लिये, आत्म-तुष्टि का भाव नज़र आता था। अगर मुझे अपने इरादे के नष्ट हो जाने का डर न होता तो उसकी वह उत्सवी शान-शौकत और अहंकार-भरे हाव-भाव देख कर मैं ठठा कर हँस दिया होता।

उसने टोपी और दस्ताने मेज़ पर फेंक दिये और शीशे के सामने खड़ा हो कर कोट के झूलते पुछल्ले को खींचने-खाँचने लगा और पचीसों तरह से घूम-घूम कर बनाव-सिंगार करने लगा। गुलूबन्द के कड़ेपन को कायम रखने के लिए बल दे कर तैयार किया गया एक बहुत बड़ा काला रूमाल, उसके गले में इतना ऊँचा बँधा था कि कॉलर से भी आध इंच ऊपर निकला हुआ था और उसकी कलफ़ लगी सिलवटों पर उसकी ठोड़ी तक टिक जाती थी। ग्रुश्नीत्स्की को वह रूमाल अभी काफ़ी नीचा लगा, और उसने उसे खींच कर कानों तक ऊँचा कर लिया। इस श्रम से उसका चेहरा बैंगनी हो उठा, क्योंकि वर्दी के कोट का कॉलर बहुत तंग तथा कष्टदायी था।

"लोगों का कहना है कि तुम आजकल मेरी राजकुमारी के पीछे हाथ धो कर पड़े हो," मुझसे निगाहें मिलाये बिना, उसने कुछ लापरवाही से कहा।

"चाय पीना हम जैसों की किस्मत में कहाँ?" मैंने जवाब में पुराने ज़माने के उस घुटे हुए लम्पट का तकिया-कलाम दुहरा दिया, जिसका अद्‌भुत चित्रण पुश्किन ने अपनी रचना में किया है।

"अच्छा, यह तो बताओ कि यह वर्दी मुझ पर फबती है? भाड़ में जाये वह कम्बख़्त यहूदी! साले ने इसे बगलों में बहुत तंग कर दिया है। कोई इत्र-वित्र नहीं रखते क्या तुम?"

"अब रहम भी करो! और क्या चाहते हो तुम? तुम्हारी लटें तो गुलाब के तेल की ख़ुशबू से पहले ही गँधा रही हैं।"

"कोई बात नहीं... लाओ, कुछ और सही..."

उसने इत्र की लगभग आधी शीशी अपने कॉलर, रूमाल और आस्तीनों पर उँड़ेल ली।

"नाच में हिस्सा लोगे?" उसने पूछा।

"ख़याल तो नहीं है।"

"मुझे डर है राजकुमारी और मुझे ही मजूर्का की शुरुआत करनी पड़ेगी और मुझे तो नाच के कदम भी ठीक से नहीं आते..." उसने कहा।

"मजूर्का के लिए तुमने उससे पूछ लिया है?"

"नहीं, अभी तो नहीं..."

"ध्यान रखो, किसी को तुम्हारे पहुँचने की ख़बर नहीं है।"

"कसम ख़ुदा की, तुमने बिलकुल ठीक कहा!" वह अपना माथा ठोंकते हुए बोला, "अच्छा, मैं चलूँ... अभी से जा कर दरवाज़े पर उसका इन्तज़ार करूँगा।" उसने झपट कर अपनी टोपी उठायी और भागा।

आध घण्टे बाद तैयार हो कर मैं भी रवाना हुआ। सड़कें अँधेरी और वीरान थीं। क्लब-घर या सराय उसे जो भी नाम देना चाहें के आस-पास लोगों के झुण्ड इकट्ठे हो रहे थे। खिड़कियों में रोशनी हो गयी थी, और फ़ौजी बैण्ड की धुन शाम की हवा पर तैरती हुई मुझ तक आ रही थी। गहरी उदासी में डूबा, मैं आहिस्ता-आहिस्ता चला जा रहा था। क्या यह सम्भव है, मैं सोच रहा था, कि मेरे दुनिया में आने का एकमात्र उद्देश्य दूसरों की उम्मीदों को नष्ट करना ही है? जब से मैंने ज़िन्दगी और उसका काम-काज शुरू किया, तभी से भाग्य ने मुझे किसी-न-किसी रूप में दूसरों की दुखान्त जीवन-लीलाओं के उपसंहार से जोड़े रखा है; मानो मेरे बिना न तो कोई मर सकता हो, न हताशा में डूब सकता हो। मैं नाटक के अन्तिम अंक का वह अनिवार्य चरित्र बन गया हूँ अनचाहे ही खलनायक या जल्लाद की घृणित भूमिका अदा करता हुआ। आख़िर इस सबमें भाग्य का क्या उद्देश्य रहा है? क्या उसने मध्यवर्गीय दुखान्त-नाटकों और सामाजिक प्रेम-कथाओं के लेखक की नियति मुझे दी है अथवा 'पाठकों का पुस्तकालय' की चटपटी, सनसनीखेज कहानियों के लिए मसाला जुटाने

का काम सौंपा है! कौन जाने? क्या दुनिया में ऐसे लोग कम हैं, जो सिकन्दर या लॉर्ड बायरन जैसा बनने के स्वप्न ले कर ज़िन्दगी की शुरुआत करते हैं, लेकिन ज़िन्दगी भर मामूली अफ़सर बने, एड़ियाँ रगड़ते रहते हैं।

हॉल में दाख़िल हो कर मैं लोगों की भीड़ में घुल-मिल गया और हर चीज़ पर ग़ौर से नज़र रखने लगा। ग्रुश्नीत्स्की राजकुमारी के पास खड़ा हुआ, बड़े प्यार और उत्साह से बातें कर रहा; वह अन्यमनस्क-सी उसकी बातें सुन रही थी, और अपने हाथ में पकड़े पंखे को बार-बार होंठों से लगाती हुई, रह-रह कर चारों ओर देख रही थी; उसके चेहरे से अधीरता टपक रही थी उसकी आँखें जैसे किसी को बेचैनी से खोज रही थीं। मैं चुपचाप खिसक कर उनके पीछे आ गया, ताकि उनकी बातचीत को सुन सकूँ।

"राजकुमारी, आप मुझे क्यों इतना सताती हैं?" ग्रुश्नीत्स्की कह रहा था, "पिछली मुलाकात के बाद आप बहुत ज़्यादा बदल गयी हैं।"

"आप ख़ुद भी तो बदल गये हैं," सहसा उसकी ओर देख कर राजकुमारी ने कहा, लेकिन उन निगाहों में छिपा हुआ उपहास उसके ऊपर से गुज़र गया।

"मैं? बदल गया हूँ? कभी नहीं! आप ख़ुद जानती हैं कि यह असम्भव है। जिसने भी आपको एक बार देखा है, वह मरते दम तक आपकी मोहिनी सूरत को नहीं भूल सकेगा..."

"बस कीजिए..."

"जिस बात को आप अभी कल तक बार-बार सुनने के लिए स्वयं कान लगाये उत्सुक रहती थीं, उसको अब आप क्यों सुनना नहीं चाहतीं?"

"क्योंकि मुझे एक ही बात का दोहराव पसन्द नहीं है," उसने हँसते हुए जवाब दिया।

"ओह, मैंने कैसे भयंकर भूल की है! मैं सोचता था, मूर्ख तो मैं हूँ ही, कि कम-से-कम ये झब्बे मुझे यह उम्मीद रखने का अधिकार दे ही देंगे कि.... हाँ, इससे अच्छा तो यही होता। कि मैं बाकी ज़िन्दगी उसी घटिया फ़ौजी कोट में गुज़ार देता, जिसके कारण ही शायद आपका ध्यान मेरी ओर गया था।"

"सचमुच, वह कोट आप पर कहीं ज़्यादा फबता है।"

ठीक उसी समय आगे बढ़कर, कुछ झुकते हुए, मैंने राजकुमारी का अभिवादन किया। हल्की-सी लाली उसके चेहरे पर आ गयी, फिर उसने जल्दी से कहा :

"क्यों मोसिये पेचोरिन, क्या आप ऐसा नहीं सोचते कि वह सलेटी फ़ौजी कोट मोसिये ग्रुश्नीत्स्की पर अधिक फबता है?"

"मैं आपसे सहमत नहीं हूँ," मैंने जवाब दिया, "इस वर्दी में तो ये और भी कमसिन लगते हैं।"

ग्रुश्नीत्स्की इस वार को नहीं सँभाल सका, क्योंकि सभी किशोरों की तरह वह भी उम्र-रसीदा होने का दम भरा करता है। उसका ख़याल है कि उसके चेहरे पर उभरी हुई तीव्र आवेगों की गहरी छाप उम्र की कमी को पूरा कर देती है। बेहद नाराज़ हो कर उसने एक सुलगती हुई निगाह मेरी ओर फेंकी, ज़ोर से पैर पटका और मुड़ कर तेज़-तेज़ चला गया।

"यह तो आपको मानना ही पड़ेगा," मैंने राजकुमारी से कहा, "यद्यपि वह हमेशा से ही बहुत हास्यास्पद और उजबक-सा रहा है, फिर भी वह कुछ समय पहले तक आपको ख़ासा दिलचस्प लगता था... अपने उसी भारी-भरकम सलेटी रंग के फ़ौजी कोट में।"

उसने नज़रें झुका लीं, पर बोली कुछ नहीं!

पूरी शाम ग्रुश्नीत्स्की राजकुमारी का पीछा करता रहा, कभी उसके साथ वाली, तो कभी सामने की कतार में नाचता रहा। वह बराबर आँखों से उसे निगले जा रहा था, सर्द आहें भर रहा था और उलाहनों तथा प्रार्थनाओं से उसकी नाक में दम कर रहा था। क्वाड्रिल का तीसरा दौर ख़त्म होते-होते, वह उससे बुरी तरह नफ़रत करने लगी थी।

"मुझे तुमसे इसकी उम्मीद नहीं थी," उसने पास आ कर मेरी बाँह पकड़ते हुए कहा।

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा। किस चीज़ के बारे में बात कर रहे हो?"

"क्या उसके साथ मजूर्का तुम नाचने वाले हो?" उसने गम्भीर आवाज़ में मुझसे पूछा, "उसने ख़ुद मुझसे स्वीकार किया है कि..."

"अरे, तो क्या हुआ? यह भी कोई भेद है क्या?"

"निश्चय ही... उस कुलटा, उस छिनाल से मुझे इसी की उम्मीद करनी चाहिए थी... ख़ैर, कोई परवाह नहीं! मैं भी बदला ले लूँगा!"

"अपने फ़ौजी कोट को गाली दो, या अपने झब्बों को, लेकिन उस पर इल्ज़ाम क्यों लगाते हो? क्या यह उसका दोष है कि वह तुम्हें अब नहीं चाहती?"

"उसने मुझे उम्मीद रखने का कारण क्यों दिया?"

"तुमने उम्मीद रखी ही क्यों? किसी चीज़ को चाहना और उसे पाने के लिए प्रयत्न करना तो मेरी समझ में आता है, लेकिन आशा लगा कर भला कौन बैठा रहता है?"

"तुम शर्त जीत गये हो, लेकिन पूरी नहीं," उसने तिरस्कार-भरे स्वर में कहा।

मजूर्का शुरू हुआ। ग्रुश्नीत्स्की अपने साथ नाचने के लिए हर बार सिर्फ़ राजकुमारी को ही आमंत्रित कर रहा था, दूसरे बाँके-छैले भी हर क्षण उसी को चुन रहे थे; ज़ाहिर ही मेरे ख़िलाफ़ साज़िश रची गयी थी लेकिन ख़ैर, यह तो और भी अच्छा ही था। वह मुझसे बात करना चाहती थी। और ऐसा करने से उसे रोका जा रहा था ठीक ही है। इससे तो उसकी इच्छा और भी बढ़ेगी!

मैंने एक-आध बार उसका हाथ दबाया; दूसरी बार उसने बिना कुछ बोले, अपना हाथ खींच लिया।

"आज रात मैं ठीक से सो नहीं पाऊँगी," मजूर्का ख़त्म होने पर उसने मुझसे कहा।

"इसमें दोष तो ग्रुश्नीत्स्की ही का है।"

"अरे नहीं!" और उसका चेहरा ऐसा उदास और सुस्त हो उठा कि मैंने तय कर लिया, आज रात उसका हाथ ज़रूर चूमूँगा।

लोग छँटने लगे थे। जब सहारा दे कर मैंने राजकुमारी को गाड़ी पर चढ़ा दिया, तो फ़ुर्ती से उसका नन्हा-सा हाथ अपने होंठों से लगा लिया। अँधेरा था और किसी को कुछ नज़र नहीं आ सकता था।

मन-ही-मन बेहद ख़ुश होता हुआ मैं हॉल की तरफ़ लौट आया।

सभी नौजवान एक बड़ी-सी मेज़ को घेर कर डटे हुए, खाना खा रहे थे; उन्हीं में ग्रुश्नीत्स्की भी था। जैसे ही मैं दाख़िल हुआ, वे सब एकदम चुप हो गये; ज़रूर मेरे ही बारे में बातें कर रहे होंगे। पिछले बॉल के वक्त से ही उनमें से कई ख़ास तौर से घुड़सवार सिपाहियों का वह कप्तान मुझसे बुरी तरह खार खाये बैठे थे, और अब तो ऐसा लगता है कि ग्रुश्नीत्स्की के कमान में एक पूरा-का-पूरा जत्था मेरे ख़िलाफ़ संगठित किया जा रहा है। उसके चेहरे पर कैसा उद्दण्ड और गर्वीला भाव है।

इन सबसे मुझे बड़ी ख़ुशी हुई है क्योंकि मुझे दुश्मनों से प्यार है, हालाँकि ईसाइयों के अर्थ में नहीं। उनसे मेरा जी बहलता है, और नब्ज तेज़ हो जाती है। हमेशा चौकन्ने रहना, हर निगाह और हर शब्द का महत्व ताड़ना, इरादों को भाँपना, साज़िशों को नाकाम करना, धोखा खाने का अभिनय करना और फिर एक ही चोट में, इतनी मेहनत और प्रयत्न से खड़ी की गयी, छल-कपट, चालाकी और साज़िश की उस विशाल इमारत को नेस्तनाबूद कर देना इसी को मैं ज़िन्दगी कहता हूँ।

खाने के दौरान ग्रुश्नीत्स्की लगातार उस कप्तान से फुसफुसा कर बातों और इशारों का आदान-प्रदान करता रहा।

जून १४

आज सुबह वेरा अपने पति के साथ किस्लोवोद्स्क के लिए रवाना हो गयी। जब मैं रानी साहिबा के यहाँ जा रहा था तो रास्ते में उसकी गाड़ी मेरे पास से गुज़री। मुझे देख कर उसने सिर हिलाया। उसकी निगाहों में उलाहना था।

आखिरकार इसमें दोषी किसे माना जाय? क्यों वह मुझे अकेले मिलने का ज़रा-सा भी मौक़ा नहीं देना चाहती? आग की तरह, प्यार भी ईंधन के बिना बुझ जाता है। हो सकता है, जहाँ मेरे निवेदन बेकार गये, वहाँ ईर्ष्या कामयाब हो जाय।

मैं रानी साहिबा के यहाँ क़रीब-क़रीब घण्टा भर ठहरा। राजकुमारी की तबियत कुछ नासाज़ थी, इसलिए वह नीचे नहीं उतरी। शाम के समय वह बड़ी सड़क पर भी दिखायी नहीं दी। उस नये-नये बने जत्थे ने ख़ुद को लॉर्न्येटों से लैस कर लिया था और काफ़ी विकट नज़र आ रहा था। मुझे ख़ुशी है कि राजकुमारी की तबियत ठीक नहीं, वरना किसी-न-किसी रूप में वे लोग ज़रूर उसका अपमान करते। ग्रुश्नीत्स्की के बाल बिखरे हुए थे और वह हताशा से पगलाया लगता था; वह तल्खी से भरा दिखायी देता है और ख़ास कर उसके आत्माभिमान को गहरी ठेस लगी है। लेकिन

सचमुच कुछ लोग हताश होने पर और भी दिलचस्प हो जाते हैं।

घर लौटने पर मुझे एक अस्पष्ट-सी कसक महसूस हुई। मैंने उसे देखा नहीं! वह बीमार थी। तो क्या सच ही मैं उससे प्यार करने लगा हूँ? हुँह, कैसी बेतुकी बात है!

जून १५

सुबह के ग्यारह बजे, जब अमूमन रानी साहिबा अपने नियम के मुताबिक 'येरमोलोव स्नान-गृह' में पसीना निकाल रही होती हैं, मैं टहलता-टहलता उनके घर के पास से गुज़रा। राजकुमारी खिड़की के पास विचारों में खोयी हुई बैठी थी। मुझे देखते ही वह उछल कर खड़ी हो गयी।

मैं ड्योढ़ी में दाख़िल हो गया! आस-पास कोई दिखायी नहीं दिया और स्थानीय रिवाज की आज़ादी का फ़ायदा उठा कर मैं बिना किसी से अन्दर ख़बर भिजवाये, सीधा बैठक में चला गया।

राजकुमारी के आकर्षक चेहरे पर एक निष्प्रभ पीलापन छाया हुआ था। वह पियानो की बग़ल में, एक कुर्सी की पीठ पर बाँह टिकाये, झुकी खड़ी थी; उसकी बाँह आहिस्ता-आहिस्ता काँप रही थी। मैं चुपचाप उसके पास तक गया और बोला :

"क्या आप मुझसे नाराज़ हैं?"

उसने अपनी आँखें मेरी ओर उठायीं, एक गहरी, थकी-थकी और उदास नज़र मुझ पर डाली और अपना सिर हिला दिया; उसके होंठ जैसे कुछ कहने के लिए फड़के, पर कह नहीं पाये; उसकी आँखों में आँसू छलछला आये थे; वह एक कुर्सी में धँस गयी और उसने हाथों से अपना चेहरा ढँक लिया।

"बात क्या है?" मैंने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा।

"आपकी निगाह में मेरी कोई इज़्ज़त नहीं है। उफ़, मुझे अकेली छोड़ दीजिए!"

मैं कुछ कदम पीछे हट गया। वह कुर्सी पर बैठे-बैठे ही तन गयी और उसकी आँखें कौंधने लगीं...

मैं रुका और एक हाथ से दरवाज़े के हत्थे को पकड़े हुए बोला :

"माफ़ी चाहता हूँ राजकुमारी! मैंने उतावलेपन में बिना सोचे काम किया। मैं इसका ध्यान रखूँगा कि ऐसा फिर कभी न हो। आपको यह पता ही क्यों चले कि मेरे दिल पर क्या गुज़र रही है। आपको इसका कभी पता नहीं चलेगा, जो आपके लिए तो और भी अच्छा ही है। अच्छा, अलविदा!"

बाहर जाते समय ऐसा लगा कि उसकी सिसकियों की आवाज़ मुझे सुनायी दी।

शाम तक मैं माशूक पर्वत के आस-पास, तराइयों में, ढलानों पर भटकता रहा, और जब बुरी तरह थक कर लस्त हो गया तो घर लौट कर बेजान और निढाल-सा बिस्तर पर जा पड़ा।

वेर्नर मुझसे मिलने चला आया।

"क्या यह सच है," उसने पूछा, "कि तुम्हारा राजकुमारी लिगोव्स्काया से शादी करने का इरादा है?"

"तुम यह क्यों पूछ रहे हो?"

"सारा कस्बा इसकी चर्चा कर रहा है। मेरे सारे मरीज़ इस महत्वपूर्ण ख़बर के सिवा और कुछ सोच ही नहीं पा रहे, और फिर इस इलाके की भीड़ से कुछ छिपा थोड़े ही रहता है।"

'ज़रूर यह ग्रुश्नीत्स्की का शिगूफ़ा है,' मैंने सोचा।

"सिर्फ़ यह बताने के लिए कि ये अफ़वाहें कितनी निराधार हैं डॉक्टर, मैं तुम पर भरोसा करते हुए यह बता रहा हूँ कि मैं कल किस्लोवोद्स्क चला जाऊँगा।"

"और साथ ही राजकुमारी भी?"

"नहीं, वह यहाँ एक हफ़्ता और ठहरेगी।"

"तो तुम्हारा शादी का कोई इरादा नहीं है?"

"अरे डॉक्टर! ज़रा मेरी ओर देखो! क्या मैं दूल्हा या उस जैसी कोई चीज़ लगता हूँ?"

"मैं तो नहीं कह रहा कि तुम ऐसे लग रहे हो..." कुटिलता से मुस्कराते हुए डॉक्टर ने आगे जोड़ा, "मगर तुम तो जानते हो, कभी-कभी एक सम्भ्रान्त आदमी को शादी करने के लिए विवश होना पड़ता है; और ऐसी लाड़ लड़ाने वाली अम्माओं की

भी कमी नहीं है, जो ऐसी सम्भावनाओं को कम-से-कम अपनी ओर से नहीं रोकना चाहतीं... इसलिए दोस्त के नाते, मैं तुम्हें और ज़्यादा होशियार रहने की सलाह दूँगा। इन चश्मों की हवा बड़ी ख़तरनाक है। मैंने ख़ुद न जाने कितने होनहार नौजवानों को, जो कहीं बेहतर किस्मत के लायक थे, यहाँ से सीधे शादी के मण्डप में जाते देखा है। तुम्हें यकीन नहीं आयेगा, वे तो मेरी भी शादी कर डालने के फ़िराक में थे। यह पुण्य-प्रयत्न इसी इलाके की एक बहुत ही ज़र्द और बेरौनक लड़की की माँ का था। कहीं बद-किस्मती से मैंने उसे यह बताया था कि शादी के बाद उसकी लड़की स्वस्थ हो जायेगी; बस, फिर क्या था, कृतज्ञता से डबडबायी आँखों से उसने अपनी लड़की का हाथ, अपनी सारी जायदाद के साथ, मुझे पेश कर दिया पचास नौकर थे, मेरा ख़याल है। बहरहाल, जैसे-तैसे मैंने उसे समझाया कि मैं कतई शादी के काबिल नहीं हूँ।"

वेर्नर इस विश्वास और सन्तोष के साथ विदा हुआ कि उसने मुझे बड़े मौके पर चेतावनी दे दी है।

उसकी बातचीत से मुझे इतना तो पता लग ही गया था कि राजकुमारी और मेरे बारे में तरह-तरह की गन्दी अफ़वाहें उड़ायी गयी हैं। ग्रुश्नीत्स्की को इस सबका फल भुगतना पड़ेगा!

जून १८

आज मुझे किस्लोवोद्स्क आये तीन दिन हो चुके हैं। वेरा से रोज़ ही बावड़ी के पास या कस्बे की बड़ी सड़क पर टहलते हुए मुलाकात होती है। सुबह उठते ही मैं खिड़की के पास बैठ कर उसके बारजे की तरफ़ लार्न्येट लगा कर देखने लगता हूँ। वह बहुत पहले से, कपड़े पहन कर तैयार बैठी, तय किये गये इशारे की प्रतीक्षा करती रहती है। फिर हम लोग एक-दूसरे से, मानो संयोगवश, उस बगीचे में मिलते हैं, जो हमारे घरों से शुरू हो कर नीचे बावड़ी तक चला गया है। यहाँ की स्वास्थ्य कर पहाड़ी आबो-हवा से उसकी शक्ति और चेहरे की सुर्ख़ी लौट आयी है। नरज़ान को लोग 'गबरूओं का चश्मा' यों ही तो नहीं कहते। यहाँ के रहने वालों का तो यह दावा है कि किस्लोवोद्स्क की आबो-हवा प्रेम के बहुत अनुकूल पड़ती है और वे सभी प्रेम, जो कभी माशूक की तराई में शुरू हुए, निरपवाद रूप से यहीं आ कर अंजाम तक पहुँचे।

और सचमुच जैसे यहाँ के ज़र्रे-ज़र्रे में एकान्त बसा है यहाँ की हर चीज़ रहस्यमय

है पहाड़ी नाले की प्रचण्ड धारा पर झुके हुए नींबू के वृक्षों की कतारों के घने साये; एक चट्टानी कगार से दूसरे चट्टानी कगार पर गिर कर शोर मचाती और झाग उड़ाती हुई धारा, जो हरे पहाड़ों को चीरती हुई अपने लिए रास्ता बनाती चली जाती है; तारीक उदासी-भरे ख़ामोश खड्ड, जो यहाँ से सभी दिशाओं में पहाड़ों के साथ-साथ फैलते चले जाते हैं; सफ़ेद बबूल के वृक्षों और इस दक्खिनी इलाके की ऊँची घास की महक से लदी हवा की ख़ुशबूदार ताज़गी, और उन ठण्डे नालों की अन्तहीन, निद्रालु कलकल, जो घाटी के अन्त में एक-दूसरे में घुल-मिल कर पोदकूमोक नदी में समा जाने के लिए दौड़ते चले जाते हैं। इस ओर यह खड्ड कुछ चौड़ा है और एक हरी-भरी घाटी में बदल गया है, जिससे हो कर एक कच्ची सड़क मँडराती हुई चली गयी है।

जब-जब मैं इस सड़क पर नज़र डालता हूँ, मुझे कल्पना-ही-कल्पना में एक गाड़ी आती दिखायी देती है और उसकी खिड़की से एक सुर्ख़ गालों वाला चेहरा झाँकता हुआ--सा लगता है। अब तक उस सड़क से हो कर कई गाड़ियाँ गुज़र चुकी हैं मगर उस गाड़ी का कोई पता नहीं, जिसका मुझे इन्तज़ार है। किले के उस पार वाली बस्ती काफ़ी घनी हो गयी है। मेरे डेरे से कुछ ही दूर एक छोटी पहाड़ी पर बने रेस्तराँ से झिलमिलाती हुई रोशनियाँ अब साँझ के झुटपुटे में चिनार के पेड़ों की दुहरी कतारों के पीछे से आँख-मिचौली खेलती दिखायी देती हैं और रात गये तक लोगों का कोलाहल और गिलासों की खनखनाहट सुनायी देती है।

जितना सोडा और काख़ेतियन शराब यहाँ ढाली जाती है, उतनी और कहीं नहीं।

ऐसी बहुतेरी मौजों को रला-मिला कर आपस में

मौज उड़ाते लोग अनेक; मगर नहीं यह मेरे बस में

ग्रुश्नीत्स्की अपने नये-बने गिरोह के साथ रोज़ इस रेस्तराँ के शराब-घर में बैठ कर बोतलें ढालता है। मुझसे उसकी दुआ-सलाम अब शायद ही कभी होती है।

कल ही वह यहाँ आया है, मगर इस बीच तीन बुजुर्गों से झगड़ भी चुका है, क्योंकि वे उससे पहले बावड़ी में नहाना चाहते थे। बदकिस्मती निश्चित रूप से उसके स्वभाव को झगड़ालू बनाये दे रही है।

जून २२

आख़िर वे लोग भी आ गये। मैं खिड़की के पास बैठा था, जब मैंने उनकी गाड़ी के आने की आवाज़ सुनी और मेरा दिल बल्लियों उछलने लगा। इसका भला क्या मतलब है? कहीं मैं वाकई प्यार में तो नहीं पड़ गया? मेरी बनावट ही कुछ ऐसी ऊटपटाँग किस्म की है कि इस बात की भी मुझसे पूरी उम्मीद रखी जा सकती है।

मैंने खाना उनके साथ ही खाया। रानी लिगोव्स्काया बड़ी ही नर्म, स्नेहभरी निगाहों से मुझे देखती रहीं और अपनी बेटी के पास से एक मिनट के लिए भी दूर नहीं हुई यह तो बुरा लक्षण है। मगर वेरा राजकुमारी से ईर्ष्या करती है। आख़िर जैसे-तैसे करके मैंने यह मनचाही स्थिति हासिल कर ही ली। अपने विरोधी को तकलीफ़ पहुँचाने के लिए एक औरत क्या कुछ न करेगी! मुझे एक औरत अभी तक याद है, जो मुझे सिर्फ़ इसीलिए चाहने लगी थी कि मैं किसी दूसरी औरत को प्यार करता था। औरत के दिमाग़ से ज़्यादा अन्तर्विरोध-भरी और कोई चीज़ नहीं होती। औरतों को किसी बात का यकीन दिलाना बेहद मुश्किल है। उन्हें तो ऐसी स्थिति तक लाना पड़ता है, जहाँ वे ख़ुद अपने आपको उस बात का यकीन कर लेने के लिए तैयार कर लें।

जिस तर्क-प्रणाली से वे अपने पूर्वाग्रहों को ध्वस्त करती हैं, वह एकदम मौलिक होती है, और उनकी इस तर्क-विद्या को ठीक से समझने के लिए तर्क-शास्त्र के सभी जाने-माने सिद्धान्तों को दिमाग़ से निकाल फेंकना निहायत ज़रूरी है। मसलन, तर्क करने का साधारण तरीका यह है :

यह आदमी मुझे प्यार करता है, मगर मैं शादी-शुदा हूँ; इसलिए मुझे उससे प्यार नहीं करना चाहिए।

औरतों का तरीका यह है :

मुझे उससे प्यार नहीं करना चाहिए, क्योंकि मैं शादी-शुदा हूँ; मगर वह मुझे प्यार करता है इसलिए...

इसके बाद एक बड़ी मतलब-भरी ख़ामोशी आती है, क्योंकि विवेक तो अब गूँगा हो गया है, और सारी बातचीत मुख्य रूप से ज़बान, आँखों और अन्ततः दिल से (अगर वह हो तो) की जाने लगती है।

अगर यह डायरी किसी दिन एक औरत के हाथ में जा पड़े तो क्या हो? नाराज़ हो कर झुँझलाते हुए वह चीख़ उठेगी "सफ़ेद झूठ!"

जब से कवियों ने लिखना और औरतों ने उन्हें पढ़ना शुरू किया (जिसके लिए तहे-दिल से उनका शुक्रिया अदा किया जाना चाहिए) तब से औरतों को इतनी बार 'देवियाँ' कहा गया है कि अपने हृदय के भोलेपन में वे सचमुच इस प्रशंसा को सच मानने लगी हैं; इस बात को बिलकुल भूलते हुए कि चाँदी के कुछ टुकड़ों के लिए इन्हीं कवियों ने नीरो को 'देव-पुत्र' कह कर प्रतिष्ठित किया था।

थह शायद बहुत अशोभन-सा लग रहा होगा कि मैं औरतों के बारे में ऐसे द्वेष से बातें करूँ मैं, जिसने इस धरती पर उनके सिवा और किसी चीज़ को प्यार नहीं किया; मैं, जो उनके लिए अपनी मानसिक शान्ति, महत्वाकांक्षा और अपने जीवन तक की कुर्बानी देने के लिए सदा तैयार रहा... फिर भी, मैं खीझ या आहत अहं की झोंक में आ कर इस जादुई पर्दे को हटा देने की कोशिश नहीं कर रहा, जिसके पार तक सिर्फ़ अभ्यस्त आँखें ही पहुँच पाती हैं। नहीं, मैं जो कुछ भी उनके बारे में कह रहा हूँ, वह सब :

तटस्थता से अंकित मन के ख़याला‍त

हृदय की गहरी कटु अनुभूतियाँ

ही हैं।

औरतों को तो यह कामना करनी चाहिए कि सभी लोग उन्हें उतनी अच्छी तरह जानें, जितनी गहराई से मैंने उन्हें जाना है; क्योंकि जब से मैंने उनकी छोटी-छोटी कमज़ोरियों को जाना और उनके प्रति अपने भय पर विजय पायी, तब से मैं उन्हें सौ गुना ज़्यादा प्यार करने लगा हूँ।

ज़िक्र चला है तो यहीं बता दूँ कि अभी उस दिन वेर्नर औरतों की तुलना तासो के 'जेरूसलम की मुक्ति' में वर्णित 'जादुई वन' से कर रहा था।

"बस, उसके पास ज़रा पहुँचे भर नहीं," उसने बताया, "कि आप पर चारों ओर से तमाम शैतानी भयों का हमला होने लगेगा कर्तव्य, गर्व, सम्मान की भावना, लोक-लाज, उपहास, घृणा!... आपको उन सबकी रत्ती भर चिन्ता किये बिना, आगे बढ़ते जाना चाहिए। धीरे-धीरे ये सारे दैत्य ग़ायब होने लगेंगे और आपके सामने हरे-हरे मेंहदी के पौधों से लहलहाता शान्त और धूपीला गलियारा खुल जायेगा। लेकिन कहीं शुरू के कुछ कदमों ही में आपके दिल ने जवाब दे दिया और आप पीछे घूम पड़े तो फिर आप पर ख़ुदा की मार!"

जून २४

आज की शाम घटनाओं से भरपूर थी। किस्लोवोद्स्क से क़रीब तीन वर्स्ट के फ़ासले पर, उस खड्ड में जहाँ पोदकूमोक नदी बहती है एक चट्टान है, जिसका नाम 'अँगूठी' पड़ गया है और जो एक ऊँची पहाड़ी से भी बुलन्द और ऊँचे, कुदरती दरवाज़े की तरह दिखायी देती है। ढलता हुआ सूरज इस चट्टानी दरवाज़े के भीतर से अपनी आख़िरी जलती हुई नज़र दुनिया पर फेंका करता है। इस चट्टानी झरोखे से सूर्यास्त का नज़ारा करने के लिए आज शाम को घुड़सवारों का एक अच्छा-ख़ासा दल रवाना हुआ। हालाँकि, सच कहा जाय तो, इस दल में शामिल होने वाले लोगों में कोई व्यक्ति सूर्यास्त के बारे में नहीं सोच रहा था।

मैं अपने घोड़े पर राजकुमारी के साथ-साथ चल रहा था। वापसी पर हमें पोदकूमोक को पार करना पड़ा। छोटे-से-छोटे पहाड़ी नाले भी बहुत ख़तरनाक होते हैं, ख़ास तौर से इसलिए कि इनके तल बिलकुल सैरबीन की तरह होते हैं धारा की तेज़ गति से दिन-दर-दिन बदलते हुए। कल तक जहाँ चट्टान थी, हो सकता है आज वहाँ एक गड्ढा हो। मैंने राजकुमारी के घोड़े की लगाम पकड़ ली और उसे पानी में ले आया; पानी घोड़े के घुटनों से ऊपर नहीं था। हम लोग धारा के विरुद्ध तिरछे चलते हुए धीरे-धीरे नदी पार करने लगे। यह एक जानी-मानी बात है कि तेज़ धारा को पार करते समय नीचे पानी की ओर नहीं देखना चाहिए, क्योंकि इससे सिर चकराने लगता है। मैं राजकुमारी को इस बात से सावधान करना भूल गया।

जब हम ठीक बीचों-बीच पहुँचे, जहाँ धारा सबसे ज़्यादा तेज़ थी, तो वह अचानक ज़ीन पर डोलने लगी।

"मुझे चक्कर आ रहा है," वह हाँफते हुए बोली।

मैं फुर्ती से उसकी ओर झुका और मैंने उसकी लचीली कमर को अपनी एक बाँह के घेरे में ले लिया।

"ऊपर को देखिए," मैंने धीमी आवाज़ में उससे कहा, "डरने की कोई बात नहीं, सब ठीक है; मैं आपके साथ हूँ।"

वह कुछ सँभली और मेरी बाँह के घेरे से उसने ख़ुद को मुक्त करना चाहा, लेकिन मैंने उसकी नाजुक पतली कमर के चारों ओर अपनी बाँह का घेरा और कस

लिया; मेरा गाल उसके गाल से लगभग सट गया; और उसकी देह की दहक मुझे महसूस होने लगी।

"हे भगवान! आप क्या कर रहे हैं?"

मैंने उसकी कँपकँपी-भरी घबराहट पर कोई ध्यान नहीं दिया, और अपने होंठ उसके नरम-नरम गाल पर रख दिये। वह चिहुँकी, पर कुछ नहीं बोली। हम लोग घोड़ों पर सबसे पीछे थे, इसलिए किसी ने हमें नहीं देखा। जब हम दूसरे किनारे पर जा चढ़े तो सबने अपने-अपने घोड़ों को दुलकी चाल से छोड़ दिया। लेकिन राजकुमारी ने अपने घोड़े की लगाम ताने रखी और मैं भी उसी के साथ पीछे रह गया। यह ज़ाहिर था कि मेरी चुप्पी से वह परेशान हो रही थी, लेकिन मैंने भी मन-ही-मन कसम खा ली थी कि एक शब्द भी न बोलूँगा सिर्फ़ उत्सुकतावश। मैं यह देखना चाहता था कि वह कैसे अपने आप को इस पसोपेश और उलझन से निकालती है।

"या तो आप मुझसे बहुत घृणा करते हैं या प्यार," आख़िरकार उसने ऐसे स्वर में कहा, जो आँसुओं की वजह से काँप रहा था, "शायद आप मेरा मज़ाक उड़ाना चाहते हैं, मेरी भावनाओं से खिलवाड़ करना चाहते हैं और फिर मुझे छोड़ देना चाहते हैं... यह हरकत इतनी घृणित, इतनी घटिया होगी कि उसके ख़याल भर से... आह, नहीं! यकीनन," उसने चेहरे पर प्यार-भरे विश्वास का भाव लाते हुए, बड़ी नज़ाकत से आगे कहा, "मुझमें ऐसी कोई चीज़ नहीं, जो आपको मेरा सम्मान या इज़्ज़त करने से रोके; नहीं है न? और अभी-अभी की गयी आपकी यह शोख़ गुस्ताख़ी... लेकिन नहीं उसके लिए मुझे आपको क्षमा कर देना चाहिए। हाँ, क्योंकि मैंने उसे सहन किया... मुझे जवाब दीजिए, मुझसे कुछ तो कहिए, मैं आपकी आवाज़ सुनना चाहती हूँ।"

उसके अन्तिम शब्दों में कुछ ऐसी औरतों-जैसी अधीरता, शिद्दत और उतावलापन था कि मैं ख़ुद को मुस्कराने से रोक नहीं सका; सौभाग्य से अँधेरा बढ़ रहा था। मैंने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया।

"आपको कुछ नहीं कहना है?" उसने बात ज़ारी रखी, "शायद आप यह चाहते हैं, पहले मैं ही अपने मुँह से कहूँ कि मुझे आपसे प्यार है।"

मैं चुप रहा।

"क्या आप चाहते हैं कि मैं ही यह बात कहूँ?" उसने मेरी ओर तेज़ी से मुड़ते हुए पूछा। उसकी निगाहों और स्वर की गम्भीरता और चेहरे की दृढ़ता में जैसे कुछ दहशत पैदा करने वाला था।

"मैं ऐसा क्यों चाहूँगा?" मैंने कन्धे झटकाते हुए जवाब दिया।

उसने घोड़े को चाबुक लगाया और उस सँकरी ख़तरनाक सड़क पर सरपट दौड़ पड़ी। यह सब उसने इतनी फुर्सी से किया कि मेरे लिए उसे जा लेना बहुत मुश्किल हो गया, और मैं कोशिश करने पर भी तब तक उसे पकड़ नहीं पाया, जब तक वह आगे वाले लोगों की भीड़ में जा कर शामिल न हो गयी।

घर पहुँचने तक, पूरा रास्ता वह लगातार हँसती और बातें करती आयी। उसकी हरकतों में एक अजीब हरारत की-सी तेज़ी और व्यग्रता थी और एक बार भी उसने मेरी ओर आँख उठा कर नहीं देखा। उसके इस अस्वाभाविक उल्लास पर सभी का ध्यान गया। रानी लिगोव्स्काया अपनी बेटी को फिर ज़िन्दा-दिली की हालत में देख कर मन-ही-मन ख़ुश हो रही थीं, लेकिन उनकी बेटी महज़ नसों के एक दौरे से गुज़र रही थी और रात उसे उनींदे, रोते हुए काटनी थी। इस ख़याल ही से मुझे बेहद ख़ुशी हो रही है। कुछ ऐसे क्षण आते हैं, जब मैं नरपिशाच से तादात्म्य कर लेता हूँ... फिर भी मैं लोगों की निगाहों में एक शरीफ़ इन्सान हूँ, और इस पर खरा उतरने के लिए अपनी ओर से पूरी कोशिश करता हूँ।

घोड़े से उतर कर महिलाएँ रानी साहिबा की कोठी में चली गयीं। मेरे मन में बड़ी व्याकुलता-सी थी, इसलिए मैं घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ पहाड़ियों की ओर निकल गया, ताकि दिमाग़ में जो विचार भीड़ लगाये थे, उनको निकाल बाहर कर सकूँ। ओस-भीगी शाम में एक सुखद शीतलता रची-बसी थी! धुँधले, काले पर्वत-शिखरों के पीछे से चाँद उग रहा था। मेरे घोड़े के नाल-रहित सुमों की हर टाप घाटियों की चुप्पी में मन्द स्वर में गूँज रही थी। एक झरने पर रुक कर मैंने घोड़े को पानी पिलाया, और ख़ुद कुछ देर तक दक्खिनी इलाके की रात की स्फूर्तिदायक हवा को जी भर कर अपने फेफड़ों में भरता रहा; फिर उसी रास्ते पर लौट चला। वापसी पर मैं गाँव के बीच से हो कर गुज़रा। खिड़कियों में एक-एक कर बत्तियाँ बुझनी शुरू हो गयी थीं। किले की प्राचीर पर खड़े हुए सन्तरी और दूर चौकियों के कज़ाक पहरेदार आपस में एक-दूसरे को लम्बे लय-भरे स्वर में गुहार रहे थे। मैंने ग़ौर किया कि गाँव में बने मकानों में से एक मकान, जो एक छोटे-से खड्ड के किनारे खड़ा था, दूसरे मकानों की अपेक्षा कहीं ज़्यादा रोशन था और जब-तब उस मकान से कई आदमियों के साथ

बोलने और हल्ला मचाने की आवाज़ें भी सुनायी दे रही थीं, जिससे यह अन्दाज़ा लगता था कि वहाँ फ़ौजी अफ़सर पी-पिला रहे थे। मैं घोड़े से उतरा और दबे-पाँव चलता हुआ खिड़की के पास जा पहुँचा; खिड़की का एक पल्ला उढ़का हुआ था, जिसकी वजह से भीतर मौज मनाते शराबियों को देखना और चुपचाप उनकी बातें सुनना मेरे लिए सम्भव हो गया। वे लोग मेरे ही बारे में बातें कर रहे थे।

शराब की वजह से सुर्ख़ चेहरा लिये घुड़सवार सिपाहियों के कप्तान ने मेज़ पर ज़ोर से घूँसा मार कर लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा।

"दोस्तो!" उसने कहना शुरू किया, "ऐसे काम नहीं चलेगा। पेचोरिन को सबक सिखाना ही होगा। जब तक इन पीटर्सबर्गिएँ छुटभैयों को जुतिआया न जाय, ये सिर पर ही चढ़ते चले जाते हैं। महज़ इसलिए कि वह हमेशा साफ़-सुथरे दस्ताने और चमचमाते बूट पहने रहता है, वह समझता है कि आस-पास के इलाके में सिर्फ़ वही एक तहज़ीब वाला मिलनसार आदमी है।"

"और उसकी वह घमण्ड-भरी मुस्कान!" किसी दूसरे ने कहा, "फिर भी मुझे पक्का यकीन है कि वह कायर है हाँ-हाँ अव्वल दर्जे का डरपोक है!"

"मेरा भी यही विश्वास है," ग्रुश्नीत्स्की ने कहा, "वह हर बात को मज़ाक में उड़ा देता है। एक बार तो मैंने उसे ऐसा लताड़ा कि अगर कोई दूसरा होता तो मुझे वहीं, उसी दम, काट कर फेंक देता, मगर पेचोरिन सिर्फ़ हँस कर टाल गया। ख़ैर, मैंने उसे चुनौती नहीं दी, क्योंकि यह काम उसका था, इसके अलावा मुझे इस बात की परवाह नहीं थी कि...."

"ग्रुश्नीत्स्की इसलिए उससे खार खाये बैठा है कि उसने राजकुमारी को आगे लपक कर हथिया लिया," किसी ने कहा।

"बको मत! ठीक है, मैं कुछ देर यों ही राजकुमारी के पीछे लगा हुआ था, लेकिन फ़ौरन मैंने उधर से अपना ध्यान हटा लिया, क्योंकि शादी करने का तो मेरा कोई इरादा है नहीं, और मैं किसी लड़की को ग़लत स्थिति में डाल देने में विश्वास नहीं करता।"

"हाँ, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ, यह नम्बरी डरपोक है। मेरा मतलब पेचोरिन से है, ग्रुश्नीत्स्की से नहीं। ग्रुश्नीत्स्की तो बड़ा मस्त आदमी है और ऊपर से मेरा

जिगरी दोस्त है।" घुड़सवार-कप्तान ने कहा, "दोस्तो! क्या यहाँ कोई है, जो उसकी तरफ़दारी करना चाहता हो? कोई नहीं! चलो, अच्छा ही है। तो क्या आप उसके साहस की परीक्षा लेना चाहते हैं? बड़ा मज़ा रहेगा..."

"हम चाहते तो हैं, पर कैसे?"

"तो मेरी बात सुनिए, चूँकि उसके ख़िलाफ़ ग्रुश्नीत्स्की को ही सबसे ज़्यादा शिकायत है, इसलिए प्रमुख भूमिका इसे ही अदा करनी होगी। यह किसी मामूली-सी बात का बुरा मनाते हुए, हल्का-सा बहाना बना कर पेचोरिन को द्वन्द्व के लिए ललकारेगा... रुकिए, रुकिए, यही तो नुक्ता है... यह पेचोरिन को द्वन्द्व के लिए चुनौती देगा... यहाँ तक तो सब ठीक-ठाक रहा! बाकी सब कुछ चुनौती, तैयारियाँ, और लड़ाई की शर्तें, सब जितनी ज़्यादा-से-ज़्यादा गम्भीर और भयावह तरीके से रखी जा सकेंगी, रखी जायेंगी। इस सबका ज़िम्मा मेरा रहा, क्योंकि मैं ही तुम्हारा समर्थक रहूँगा, मेरे प्यारे दोस्त! बहुत ठीक। अब यही तो चाल है, हम लोग पिस्तौलों मे गोलियाँ ही नहीं भरेंगे। मैं शर्त बद सकता हूँ कि पेचोरिन पीठ दिखा देगा छह कदम के फ़ासले पर मैं इन्हें खड़ा करूँगा, ऐसी की तैसी उसकी। तो आप सब राज़ी हैं दोस्तो?"

"वाह, कमाल की सूझ है। ग़ज़ब! मज़ा आ गया। अच्छा तमाशा रहेगा।" चारों ओर से आवाज़ें आयीं!

"क्यों ग्रुश्नीत्स्की?"

मैं धड़कते दिल से ग्रुश्नीत्स्की के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। इस ख़याल ही से मेरा दिल एक भयं कर ग़ुस्से से भर उठा कि महज़ संयोग ने ही मुझे इन उल्लू के पट्ठों की दिल्लगी का शिकार होने से बाल-बाल बचा लिया था। अगर ग्रुश्नीत्स्की इस साज़िश के लिए राजी न हुआ होता, तो मैं उसी समय लपक कर उसके गले से जा लिपटता। लेकिन कुछ देर की ख़ामोशी के बाद वह अपनी जगह से उठा और कप्तान की ओर हाथ बढ़ाते हुए बड़े रोब और आडम्बर के साथ बोला : "ठीक है, मैं राज़ी हूँ।"

इस पर उन 'सम्माननीय' व्यक्तियों की पूरी मण्डली में उल्लास की जो लहर दौड़ गयी, वह बयान के बाहर है।

मैं दो परस्पर विरोधी भावनाओं का शिकार बना, घर लौट आया। एक था उदासी का एहसास। ये सब-के-सब मुझसे क्यों नफ़रत करते हैं मैंने सोचा। आख़िर क्यों? क्या मैंने किसी को नाराज़ किया है या किसी को ठेस पहुँचायी है? नहीं! तो फिर क्या मैं उन व्यक्तियों में से हूँ, जिनको देखते ही दूसरों के दिल में नफ़रत और दुश्मनी पैदा हो जाती है? और मैंने महसूस किया कि एक तीखा जहरीला ग़ुस्सा मुझ पर हावी हो रहा है।

'सावधान, श्रीमान ग्रुश्नीत्स्की, होशियार!' कमरे में इधर-से-उधर टहलते हुए मैं अपने आपसे ही बोल उठा, 'आप मेरे साथ इस तरह खिलवाड़ नहीं कर सकते। अपने बेवक़ूफ़ साथियों की इस योजना का साथ देने के लिए सम्भव है, आपको बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़े। मैं कोई मिट्टी का खिलौना नहीं हूँ, जिससे आप अपना मन बहला सकें।'

सारी रात मैं जागता रहा। सुबह मैं नींबू-सा पीला दिखायी दे रहा था।

शुरू दिन ही में झरने पर राजकुमारी से मेरी मुलाकात हो गयी।

"आप की तबियत ठीक नहीं क्या?" उसने ग़ौर से मुझे देखते हुए पूछा।

"सारी रात मैं सो नहीं पाया।"

"मैं भी नहीं सोयी... मैंने आपको दोष दिया... शायद अनुचित ही! लेकिन अगर अब भी आप स्थिति को स्पष्ट कर दें, तो मैं आपकी सारी बातें क्षमा कर दूँगी।"

"सारी बातें?"

"हाँ, सारी बातें... बस, आपको सच-सच कहना होगा... देर न करें... देखिए, मैंने ख़ुद बार-बार इस पर सोचा है, और मैंने लगातार कोशिश की है कि शायद कोई कारण खोज सकूँ, जिससे आपका वह व्यवहार उचित ठहराया जा सके। शायद आपको मेरे रिश्तेदारों के विरोध का भय है? इसके लिए ज़रा भी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं है। जब वे इसके बारे में सुनेंगे... (उसकी आवाज़ काँप उठी) मैं उन्हें राज़ी कर लूँगी। या हो सकता है, इसका कारण आपकी अपनी स्थिति है... लेकिन मैं आपको एक बात बता दूँ कि उस आदमी के लिए मैं सब कुछ कुर्बान कर सकती हूँ, जिसे मैं प्यार करती हूँ... आह, जल्दी जवाब दीजिए मुझ पर रहम कीजिए... कहिए कि आप मुझसे नफ़रत नहीं करते, नहीं करते न?"

और उसने मेरा हाथ पकड़ लिया।

रानी लिगोव्स्काया वेरा के पति के साथ हम लोगों के आगे-आगे चल रही थीं, इसलिए कुछ देख नहीं पायीं; लेकिन आस-पास चहलकदमी करते मरीज़ों की निगाह तो हम पर पड़ ही सकती थी, और ये लोग उत्सुक-से-उत्सुक टोह लेने वालों के भी उस्ताद होते हैं, इसलिए मैंने जल्दी से अपना हाथ उसकी विह्वल पकड़ से छुड़ा लिया।

"मैं आपसे सब कुछ सच-सच कहूँगा," मैंने कहा, "अपनी सफ़ाई में कुछ कहे बिना या बिना अपने व्यवहार की वजह बताये मैं आपको प्यार नहीं करता।"

उसके होंठों पर हल्की-सी सफ़ेदी छा गयी।

"जाइए, मेरे पास से चले जाइए।" उसने मुश्किल से सुनायी पड़ने वाली आवाज़ में कहा।

मैंने अपने कन्धे उचकाये, मुड़ा और चला आया।

जून २५

कभी-कभी मुझे ख़ुद अपने आप ही से नफ़रत होने लगती है; क्या इसी वजह से मैं दूसरों से भी नफ़रत करता हूँ? मैं अब ऊँची भावनाओं के काबिल नहीं रह गया; मैं ख़ुद अपनी ही निगाहों में हास्यास्पद नज़र आने से डरता हूँ! मेरी जगह कोई दूसरा होता तो राजकुमारी को अपना तन-मन-धन सौंप चुका होता, मगर मेरे लिए तो इस 'शादी' शब्द में ही अजीब-सा शाप है। मैं किसी औरत से कितना भी प्यार क्यों न करूँ, उसने शादी का हल्का-सा ज़िक्र मुझसे किया नहीं कि प्यार-व्यार सब काफ़ूर हो जाता है; मेरा दिल पत्थर बन जाता है और फिर किसी भी चीज़ से उसकी गर्मी वापस नहीं आती। शादी को छोड़ कर मैं कोई भी त्याग करने को तैयार हूँ; बीसियों बार मैं अपने प्राणों की बाज़ी लगा सकता हूँ, यहाँ तक कि अपनी इज़्ज़त की भी; लेकिन अपनी आज़ादी को मैं कभी नहीं बेच सकता। क्यों इतना महत्व देता हूँ मैं इसे? मुझे क्या मिलता है इसमें? मैं आख़िर चाहता क्या हूँ? मुझे भविष्य से आशा क्या है? कुछ नहीं, बिलकुल कुछ नहीं! यह एक सहज, स्वाभाविक भय है, जैसे किसी अनजान अनिष्ट की आशंका, जिसे समझाया न जा सके... आख़िर बहुत-से लोगों को बेवजह ही मकड़ों, कनखजूरों और चूहों से भय लगता है... तो क्या मैं भेद खोल दूँ? जब मैं बच्चा ही था, तो किसी बुढ़िया ने मेरी माँ को मेरा भाग्य बताते समय यह कहा था कि मेरी मौत एक दुष्ट बीवी की वजह से होगी। उस समय इस

बात का मेरे हृदय पर बड़ा गहरा असर पड़ा, और धीरे-धीरे मेरे अन्दर शादी के लिए एक गहरी घृणा पैदा हो गयी। फिर भी मुझे कुछ ऐसा अन्देशा-सा होता है कि उसकी भविष्यवाणी ज़रूर सही निकलेगी, लेकिन कम-से-कम मैं अपनी ओर से भरसक यही कोशिश करूँगा कि जब तक उसका होना टल सके, टालता जाऊँ।

जून २६

कस्बे में कल ऐप्फेलबॉम नामक बाज़ीगर पधारे हैं। रेस्तराँ के दरवाज़ों पर एक बड़ा-सा पोस्टर दिखायी दिया, जिसमें सम्मानित नागरिकों के लिए यह सूचना थी कि उपरोक्त आश्चर्यजनक बाज़ीगर, नट, कीमियागर और जादूगर आज रात के आठ बजे सभा-भवन (यानी कि रेस्तराँ) में एक शानदार तमाशा दिखायेंगे; प्रवेश-टिकट ढाई रूबल!

सभी का इरादा इस आश्चर्यजनक जादूगर को देखने का है। यहाँ तक कि रानी लिगोव्स्काया ने भी अपने लिए एक टिकट खरीद लिया है, हालाँकि उनकी बेटी की तबियत कुछ नासाज है।

खाने के बाद, जब मैं वेरा की खिड़कियों के नीचे से गुज़र रहा था वह अकेली बारजे पर बैठी हुई थी तो मेरे पैरों के पास काग़ज़ का एक टुकड़ा आ गिरा :

'आज रात दस बजे बड़ी सीढ़ियों से हो कर ऊपर चले आना, मेरे पति प्यातिगोर्स्क गये हुए हैं और कल सुबह से पहले नहीं लौटेंगे। नौकर-नौकरानियाँ भी घर पर नहीं होंगे; मैंने उन सबको, और साथ ही रानी साहिबा के नौकरों को तमाशे के टिकट ले दिये हैं। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। भूलना नहीं; ज़रूर आना।'

"वाह!" मैंने सोचा। "तो आख़िरकार सब कुछ मेरी मर्जी के मुताबिक ही हो रहा है..."

रात के आठ बजे मैं बाज़ीगर का तमाशा देखने रेस्तराँ पहुँचा। दर्शकों के इकट्ठा होते, और तमाशा शुरू होते-होते क़रीब नौ बज गये। पीछे की कतारों में वेरा और रानी साहिबा के नौकर-नौकरानियों को भी मैंने पहचान लिया। सब-के-सब वहाँ मौजूद थे। ग्रुश्नीत्सकी अपना लॉर्ग्येट हाथ में लिये, पहली ही पंक्ति में बैठा था। जब कभी जादूगर को रूमाल, घड़ी, अगूँठी या ऐसी ही किसी चीज़ की ज़रूरत पड़ती, तो वह उसकी ओर ही मुड़ता।

बात का मेरे हृदय पर बड़ा गहरा असर पड़ा, और धीरे-धीरे मेरे अन्दर शादी के लिए एक गहरी घृणा पैदा हो गयी। फिर भी मुझे कुछ ऐसा अन्देशा-सा होता है कि उसकी भविष्यवाणी ज़रूर सही निकलेगी, लेकिन कम-से-कम मैं अपनी ओर से भरसक यही कोशिश करूँगा कि जब तक उसका होना टल सके, टालता जाऊँ।

जून २६

कस्बे में कल ऐप्फेलबॉम नामक बाज़ीगर पधारे हैं। रेस्तराँ के दरवाज़ों पर एक बड़ा-सा पोस्टर दिखायी दिया, जिसमें सम्मानित नागरिकों के लिए यह सूचना थी कि उपरोक्त आश्चर्यजनक बाज़ीगर, नट, कीमियागर और जादूगर आज रात के आठ बजे सभा-भवन (यानी कि रेस्तराँ) में एक शानदार तमाशा दिखायेंगे; प्रवेश-टिकट ढाई रूबल!

सभी का इरादा इस आश्चर्यजनक जादूगर को देखने का है। यहाँ तक कि रानी लिगोव्स्काया ने भी अपने लिए एक टिकट खरीद लिया है, हालाँकि उनकी बेटी की तबियत कुछ नासाज है।

खाने के बाद, जब मैं वेरा की खिड़कियों के नीचे से गुज़र रहा था वह अकेली बारजे पर बैठी हुई थी तो मेरे पैरों के पास काग़ज़ का एक टुकड़ा आ गिरा :

'आज रात दस बजे बड़ी सीढ़ियों से हो कर ऊपर चले आना, मेरे पति प्यातिगोर्स्क गये हुए हैं और कल सुबह से पहले नहीं लौटेंगे। नौकर-नौकरानियाँ भी घर पर नहीं होंगे; मैंने उन सबको, और साथ ही रानी साहिबा के नौकरों को तमाशे के टिकट ले दिये हैं। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। भूलना नहीं; ज़रूर आना।'

"वाह!" मैंने सोचा। "तो आख़िरकार सब कुछ मेरी मर्जी के मुताबिक ही हो रहा है..."

रात के आठ बजे मैं बाज़ीगर का तमाशा देखने रेस्तराँ पहुँचा। दर्शकों के इकट्ठा होते, और तमाशा शुरू होते-होते क़रीब नौ बज गये। पीछे की कतारों में वेरा और रानी साहिबा के नौकर-नौकरानियों को भी मैंने पहचान लिया। सब-के-सब वहाँ मौजूद थे। ग्रुश्नीत्सकी अपना लॉर्ग्येट हाथ में लिये, पहली ही पंक्ति में बैठा था। जब कभी जादूगर को रूमाल, घड़ी, अगूँठी या ऐसी ही किसी चीज़ की ज़रूरत पड़ती, तो वह उसकी ओर ही मुड़ता।

कुछ दिनों से ग्रुश्नीत्स्की ने मुझसे दुआ-सलाम तो छोड़ ही रखी है, आज उसने दो-एक बार बड़ी गुस्ताख़ी से मुझे घूर कर देखा। जब हिसाब-किताब का वक्त आयेगा तो वह अपनी इन तमाम हरकतों के लिए बहुत पछतायेगा।

दस बजने वाले थे जब मैं उठा और हॉल से निकल आया!

बाहर घुप्प अँधेरा था। चारों ओर के पर्वत-शिखरों पर भारी, सर्द बादल टिके हुए थे और मन्द होती हुई हवा का झोंका यदा-कदा ही रेस्तराँ के चारों ओर खड़े चिनार के पेड़ों की फुनगियों में सरसराता हुआ निकल जाता था। लोग खिड़कियों के पास भीड़ लगाये खड़े थे। मैं पहाड़ी से उतर कर फाटक में घुसा और फिर तेज़-तेज़ चलने लगा। सहसा मुझे लगा, जैसे कोई मेरा पीछा कर रहा हो। मैंने रुक कर चारों ओर देखा। अँधेरे में हाथ को हाथ नहीं सूझता था, फिर भी सावधानी के ख़याल से मैंने घर के चारों ओर एक चक्कर लगाया, मानो यों ही चहलकदमी कर रहा होऊँ। राजकुमारी की खिड़कियों के नीचे से गुज़रते समय मुझे फिर अपने पीछे पैरों की चाप सुनायी दी, और लम्बे फ़ौजी कोट में लिपटा एक आदमी मेरे पास से भागता हुआ निकल गया। इससे मुझे थोड़ी चिन्ता हुई, फिर भी मैं दबे कदमों से ड्योढ़ी में दाख़िल हुआ और अँधेरे में डूबे जीने पर तेज़-तेज़ चढ़ गया! दरवाज़ा खुला और एक छोटे-से हाथ ने मेरा हाथ पकड़ लिया...

"किसी ने तुम्हें देखा तो नहीं?" वेरा मुझसे लिपट कर फुसफुसायी!

"नहीं।"

"अब तो तुम्हें यकीन हुआ कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ! आह, मैंने अब तक ख़ुद को रोके रखा, मैं अब तक ख़ुद को तकलीफ़ देती रही... लेकिन मैं तो तुम्हारे हाथ में चिकनी मिट्टी की तरह हूँ।"

उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था, और हाथ बर्फ़ की तरह सर्द थे। इसके बाद उलाहनों और शिकवे-शिकायतों की झड़ी शुरू हुई वह मुझसे सब कुछ साफ़-साफ़ स्वीकार कर लेने का आग्रह कर रही थी, यह कसम खाते हुए कि वह मेरी सारी बेवफ़ाई को चुपचाप सह लेगी, क्योंकि उसकी एकमात्र इच्छा मुझे सुखी देखने की है। मुझे इसका कतई विश्वास नहीं था, लेकिन फिर भी मैंने कसम खाते हुए, तमाम तरह के वादे करते हुए, उसे तसल्ली दे दी।

"तो तुम मेरी से शादी नहीं कर रहे हो? तुम उसे प्यार भी नहीं करते? और वह सोचती है कि... जानते हो, वह तुम्हारे प्रेम में पागल है, बेचारी, बच्ची...!"

रात के क़रीब दो बजे मैंने खिड़की खोली और दो दुपट्टों को आपस में बाँध कर, एक खम्भे के सहारे-सहारे, ऊपर से नीचे की बालकनी में उतर आया। राजकुमारी के कमरे में अभी तक रोशनी जल रही थी। जाने किस चीज़ ने मुझे उस खिड़की की ओर जाने पर विवश कर दिया। पर्दे पूरी तरह खिंचे नहीं थे, इसलिए कमरे के भीतर एक उत्सुकता-भरी निगाह डाल सकना मेरे लिए कठिन नहीं था। मेरी अपने पलँग पर बैठी हुई थी; उसकी बाँहें घुटनों के गिर्द लिपटी थीं; उसके घने बालों की लटें एक जालीदार टोपी में बँधी थीं; एक बड़ा-सा सुर्ख़ दुशाला उसके कन्धों को ढँके था और उसके नन्हे-नन्हे पाँव चटख रंग की कामदार फ़ारसी जूतियों में छिपे थे। सिर छाती पर झुकाये, वह निश्चल बैठी थी, उसके सामने मेज़ पर एक किताब खुली रखी थी, लेकिन ऐसा लगता था कि अकथनीय व्यथा से भरी उसकी एकटक ताकती दृष्टि उसी एक पृष्ठ को सैकड़ों बार पढ़े जा रही है और उसके ख़याल कहीं दूर भटक रहे हैं...

ठीक तभी नीचे झाड़ी के पीछे कोई हिला। मैं तुरन्त बालकनी से नीचे घास पर कूद पड़ा। एक अदृश्य हाथ ने मुझे कन्धे से पकड़ लिया।

"आह-हा," एक मोटी, भारी और रूखी आवाज़ ने कहा, "आख़िर पकड़ ही लिया! अभी तुम्हें राजकुमारियों के कमरों में यों रात-बिरात चोरी-छिपे जाने का मज़ा चखाता हूँ।"

"पकड़े रहो, जाने न पाये!" कोने से झपट कर आता हुआ कोई दूसरा चिल्लाया।

ये दोनों ग्रुश्नीत्स्की और वह घुड़सवार-कप्तान थे।

मैंने कप्तान के सिर पर कस कर एक घूँसा मारा और उसे नीचे गिरा दिया। फिर मैं झाड़ियों की ओर लपका। अपने घर के सामने वाली ढलान पर फैले हुए इस बगीचे के सभी रास्तों से मैं परिचित था।

"चोर! चोर! बचाओ!" वे ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाये। बन्दूक चलने का धमाका हुआ, और एक जलता हुआ पलीता मेरे पैर के पास ही आ कर गिरा।

मिनट भर बाद ही मैं अपने कमरे में कपड़े उतार कर बिस्तर पर लेटा हुआ था। मेरा नौकर दरवाज़े में ताला लगा ही चुका था कि ग्रुश्नीत्स्की और उस कप्तान ने बाहर से किवाड़ पीटने शुरू कर दिये।

"पेचोरिन! पेचोरिन! सो गये क्या? क्या तुम भीतर हो?" कप्तान ने चिल्ला

कर पूछा।

"मैं बिस्तर में हूँ," झुँझलाहट-भरे स्वर में चिड़चिड़ेपन से मैंने जवाब दिया।

"उठो, उठो! देखो, चोर! चेरकस!"

"मुझे जुकाम है," मैंने जवाब दिया, "और मुझे इसके बढ़ जाने का डर है।"

वे चले गये। अच्छा होता, मैं उन्हें कोई जवाब ही न देता; कम-से-कम एक घण्टा और वे बगीचे में मुझे खोजते-फिरते। इसी बीच बाहर भयंकर कोलाहल मच गया। किले से एक कज़ाक सैनिक घोड़े पर दौड़ा चला आया। बड़ी आपा-धापी मची थी, हर झाड़ी में चेरकस लुटेरों को खोजा जा रहा था; लेकिन ज़ाहिर है, उनके हाथ कुछ भी न आना था। बहुत-से लोग तो मन में यह पक्का यकीन लिये चले गये कि अगर किले के सिपाहियों ने कुछ अधिक फुर्ती और साहस दिखाया होता तो इस समय कम-से-कम दो-एक दर्जन चेरकस लुटेरे तो ज़रूर बिछ गये होते।

जून २७

चेरकस लुटेरों का रात वाला धावा ही आज सुबह झरने पर लोगों की चर्चा का प्रमुख विषय रहा। कायदे के मुताबिक, नरज़ान झरने के पानी के जितने गिलास पीने थे, उतने गिलास पी चुकने, और नींबू के पेड़ों से छाये लम्बे पथ पर दस बार इधर-से-उधर चहलकदमी कर चुकने के बाद मेरी मुलाकात वेरा के पति से हो गयी, जो प्यातिगोर्स्क से अभी-अभी लौटा था। उसने मेरी बाँह पकड़ी और हम लोग नाश्ते के लिए रेस्तराँ में जा घुसे। वह अपनी पत्नी के बारे में बेहद परेशान और चिन्तित था।

"कल रात वह बुरी तरह डर गयी थी," उसने मुझे बताया, "देखिए न, यह सब तभी होना था, जब मैं बाहर गया हुआ था!"

हम लोग नाश्ते के लिए उस दरवाज़े के पास ही कुर्सियों पर जम गये, जो कोने वाले कमरे को जाता था। उस कमरे में क़रीब एक दर्जन नौजवान डटे हुए थे, ग्रुश्नीत्स्की भी उन्हीं में था। और इस बार फिर किस्मत ने मुझे एक ऐसी बातचीत सुनने का मौक़ा दिया, जिससे उसकी तकदीर का फ़ैसला होने वाला था। उसने मुझे नहीं देखा था, इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि वह जान-बूझ कर मुझे ही सुनाने के लिए बातें कर रहा था या नहीं, लेकिन इस बात से उसका अपराध मेरी आँखों में और भी बढ़ गया।

"क्या वाकई वे चेरकस लुटेरे ही थे?" किसी ने पूछा, "क्या उन्हें किसी ने देखा था?"

"मैं तुम्हें सब कुछ सच-सच बताता हूँ," ग्रुश्नीत्स्की ने जवाब दिया, "सिर्फ़ यही अर्ज करता हूँ कि मेरे साथ दगा मत करना! यह मत कहना कि मैंने बताया है। हुआ यों कि पिछली रात एक आदमी, जिसका मैं नाम नहीं लूँगा, मुझे यह बताने आया कि उसने रात के क़रीब दस बजे किसी को लिगोव्स्की परिवार के घर में चुपके से दाख़िल होते देखा है। आप लोगों को इतना याद दिला दूँ कि उस समय रानी साहिबा तो यहीं पर थीं, और घर पर अकेली राजकुमारी थी। सो मैं उस आदमी के साथ चल पड़ा, ताकि राजकुमारी की खिड़की के नीचे खड़ा हो कर उस भाग्यवान प्रेमी की प्रतीक्षा करूँ।"

मैं मान लेता हूँ, मैं कुछ चौंक-सा गया कि अगर ग्रुश्नीत्स्की ने सच्ची बात ताड़ ली हो तो कहीं मेरे साथी को, जो हालाँकि नाश्ते में ही ध्यान जमाये था, कुछ अप्रिय बातें न सुननी पड़ें। लेकिन ईर्ष्या से अन्धा होने की वजह से ग्रुश्नीत्स्की को इसका कतई गुमान नहीं था कि रात दरअसल हुआ क्या था।

"तो यह हुआ जनाब," ग्रुश्नीत्स्की कहे जा रहा था, "कि चलते-चलते हमने ख़ाली कारतूस भरी एक बन्दूक भी साथ ले ली, ताकि उस मजनूँ को थोड़ा डराया जा सके। दो बजे तक हम लोग बगीचे में इन्तज़ार करते रहे। आख़िर वह दिखायी दिया; ख़ुदा जाने किधर से प्रकट हुआ, लेकिन यह ठीक है कि वह खिड़की के रास्ते नहीं आया था, क्योंकि वह तो बराबर बन्द ही रही... हो सकता है, खम्भे की आड़ वाले काँच के दरवाज़े से आया हो... हाँ तो मैं कह रहा था कि आख़िर हमने उस आदमी को बारजे से उतरते देखा... अब आप की बताइए, इस राजकुमारी के बारे में क्या सोचते हैं आप लोग, एँ? मानना पड़ेगा कि ये मॉस्कोवालियाँ समझ के बाहर हैं। इस सबके बाद आख़िर किस चीज़ पर आप विश्वास कर पायेंगे? हाँ, तो हमने उसे पकड़ने की कोशिश की, मगर वह हाथ छुड़ाकर, खरगोश की तरह दौड़ कर झाड़ियों के पीछे ग़ायब हो गया; ठीक तभी मैंने उस पर बन्दूक छोड़ी।"

ग्रुश्नीत्स्की के चारों ओर बैठे आदमियों के बीच अविश्वास-भरे स्वर फूट पड़े।

"आप लोगों को मेरी बात पर यकीन नहीं होता?" उसने बात ज़ारी रखी, "मैं कसम खा कर कहता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा है वह एकदम सच है और इसे प्रमाणित करने के लिए, मैं उन सज्जन का नाम भी बता सकता हूँ।"

"कौन था वह, कौन था वह?" चारों ओर से आवाज़ें आयीं।

"पेचोरिन," ग्रुश्नीत्स्की ने जवाब दिया।

ठीक उसी समय उसने अपनी निगाहें उठायीं, और मुझे अपने सामने दरवाज़े में खड़े पाया। उसका चेहरा बुरी तरह लाल हो उठा। मैंने उसके निकट जा कर बहुत धीरे-धीरे, लेकिन स्पष्ट आवाज़ में कहा :

"मुझे इस बात का अफ़सोस है कि मैं तब दाख़िल हुआ, जब तुम इस अत्यन्त घृणित और झूठी तोहमत की तस्दीक के लिए कसम खा चुके थे। मेरी मौजूदगी ने शायद ज़िन्दगी में एक बार तुम्हें इस अतिरिक्त नीचता से बचा लिया होता।"

ग्रुश्नीत्स्की ग़ुस्से में भड़क उठने के लिए तैयार, उछल कर खड़ा हो गया।

"मैं तुमसे अनुरोध करता हूँ," मैंने उसी आवाज़ में बात ज़ारी रखी, "हाँ, अनुरोध करता हूँ कि जो कुछ तुमने अभी-अभी फ़रमाया है, उसे तुरन्त वापस ले लो। तुम अच्छी तरह जानते हो कि यह सरासर झूठ है। मुझे विश्वास नहीं होता कि तुम्हारे 'महान' गुणों के प्रति एक औरत की उपेक्षा, इतने कठोर बदले के काबिल है। अच्छी तरह इस पर दोबारा सोच लो, अगर तुम अपनी बात पर अड़े रहे तो तुम्हें एक इज़्ज़तदार आदमी कहलाने का अधिकार खो देना होगा और अपनी ज़िन्दगी को भी दाँव पर लगाना पड़ेगा।"

ग्रुश्नीत्स्की कुछ देर तक मेरे सामने खड़ा रहा आँखें नीची किये, बुरी तरह उद्विग्न! लेकिन उसके विवेक और अहंकार के बीच संघर्ष संक्षिप्त था। उसकी बग़ल में बैठे हुए घुड़सवार-कप्तान ने उसे कुहनी से कोंचा; वह चौंका और मुझसे निगाहें मिलाये बिना, उसने जल्दी से जवाब दिया :

"श्रीमान, जब मैं कोई बात कहता हूँ तो मेरा मतलब वही होता है, और उसे दुहराने के लिए भी मैं तैयार रहता हूँ... आपकी धमकियाँ मुझे डरा नहीं सकतीं और अपनी बात कहने के लिए कोई सीमा मुझे नहीं रोक सकती..."

"अपनी इस आख़िरी बात का सबूत तो तुम दे ही चुके हो," मैंने सर्द लहजे में जवाब दिया, और घुड़सवार-कप्तान की बाँह पकड़ कर उसे कमरे से बाहर ले आया।

"मुझसे क्या चाहते हैं आप?" कप्तान ने पूछा।

"आप ग्रुश्नीत्स्की के दोस्त हैं, और शायद उसके समर्थक भी आप ही रहेंगे?"

कप्तान ने बड़े रोब और आडम्बर से ज़रा आगे झुक कर हामी भरी।

"आप ने ठीक अन्दाज़ा लगाया," उसने जवाब दिया, "इस के अलावा मैं एक और वजह से भी उसका समर्थक बनने के लिए मजबूर हूँ : आपने उसका जो अपमान किया है, उसका सम्बन्ध मुझसे भी है... पिछली रात मैं उसके साथ था," उसने अपने झुके कन्धों को तानते हुए वाक्य पूरा किया।

"अच्छा, तो वह आप ही थे, जिसके सिर पर मैंने बेढंगेपन से इस बुरी तरह घूँसा जमाया था?"

उसका रंग पहले कुछ पीला पड़ा, फिर काला। मन मार कर दबाये गये ग़ुस्से की झलक उसके चेहरे पर उभर आयी।

"मेरा समर्थक शीघ्र ही आपकी सेवा में हाज़िर होगा," मैंने बेहद नम्रता से झुकते हुए कहा और ऐसा भाव दर्शाया, मानो उसके ग़ुस्से को मैंने देखा ही न हो।

रेस्तराँ की सीढ़ियों पर मुझे वेरा का पति मिला। प्रकट ही वह मेरा इन्तज़ार कर रहा था।

विह्वल-सा होते हुए उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया।

"ओ शरीफ़ और बुलन्द हौसले वाले युवक!" उसने आँसुओं से छलछलायी आँखें लिये मुझसे कहा, "मैंने सब कुछ सुन लिया है। कैसा नीच है वह! कृतघ्न कहीं का? सोचो तो सही, इस सबके बाद किसी सम्भ्रान्त घर के दरवाज़े इनके लिए खुले रहेंगे भला? ख़ुदा का शुक्र है कि मेरे कोई बेटी नहीं? मगर जिसके लिए तुम अपनी ज़िन्दगी जोखिम में डाल रहे हो, वह ज़रूर तुम्हें इसका इनाम देगी। तब तक के लिए तुम मुझ पर भरोसा कर सकते हो," वह कहता रहा, "मैं ख़ुद कभी जवान और फ़ौज में था; मैं जानता हूँ कि इस तरह के मामलों में दख़ल नहीं देना चाहिए। अच्छा, मैं चलता हूँ।"

बेचारा! बड़ा ख़ुश है कि उसके कोई बेटी नहीं...

मैं सीधा वेर्नर के पास पहुँचा। वह घर पर ही मिला। मैंने उसे सारा क़िस्सा खोल कर बता दिया वेरा और राजकुमारी से अपने सम्बन्ध और छिप कर सुनी हुई उस बातचीत के बारे में भी, जिससे मुझे पता लगा था कि किस प्रकार ये बदमाश, ख़ाली कारतूसों से भरी पिस्तौलों से हमें आपस में लड़ाकर, मुझे बेवकूफ़ बनाना चाहते थे। अब, लेकिन, मामला मज़ाक की सीमा लाँघ चुका था, उन्हें शायद सपने में भी ख़याल नहीं होगा कि इसका अन्त इस तरह होगा।

डॉक्टर मेरा समर्थक बनने के लिए तैयार हो गया। मैंने उसे द्वन्द्व की शर्तों के बारे में कुछ ज़रूरी बातें समझायीं; उसे हिदायत दी कि वह उन लोगों से इस बात को अत्यन्त गुप्त रखने का आग्रह करे, क्योंकि यद्यपि मैं अपने जीवन को जोखिम में डालने के लिए हरदम तैयार रहता हूँ, लेकिन इस बात के लिए मैं कतई राज़ी नहीं हूँ कि इस दुनिया में ज़िन्दा बचे रहने की दशा में अपने भविष्य को मैं हमेशा-हमेशा के लिए चौपट कर लूँ।

इसके बाद मैं घर चला आया। क़रीब एक घण्टे बाद डॉक्टर भी अपनी मुहिम से लौटा।

"सचमुच तुम्हारे ख़िलाफ़ साज़िश हो रही है," उसने बताया, "मैंने घुड़सवार-कप्तान और एक दूसरे सज्जन को, जिन का नाम मुझे याद नहीं, ग्रुश्नीत्स्की के यहाँ ही पाया। मैं अपने बरसाती जूतों को खोलने के लिए हॉल के बाहर क्षण भर को रुक गया था; भीतर बड़ा हल्ला और हाय-तोबा मची हुई थी; उनमें बड़ी बहस और चख-चख हो रही थी। 'मैं किसी शर्त पर नहीं मानूँगा।' ग्रुश्नीत्स्की कह रहा था, 'उसने सबके सामने मेरा अपमान किया है। उस बार की तो बात ही दूसरी थी...'। 'तुम्हें इससे क्या लेना-देना है?' कप्तान ने जवाब दिया, 'सारी ज़िम्मेदारी तो मैं अपने ऊपर ले रहा हूँ। मैं अब तक पाँच द्वन्द्व-युद्धों में समर्थक रह चुका हूँ और ख़ूब अच्छी तरह जानता हूँ कि इन सारी चीज़ों का इन्तज़ाम किस तरह किया जाता है। मैंने इसे पूरे ब्योरों के साथ सोच लिया है। बस, मेहरबानी करके मेरे काम में दखल मत दो। उसे ज़रा डराना ही काफ़ी होगा। जब तुम आसानी से टाल सकते हो तो क्यों अपने सिर ख़तरा मोल लेते हो?' ठीक उसी समय मैंने भीतर कदम रखा। वे फ़ौरन चुप हो गये। हमारी बातचीत और बहस काफ़ी देर तक चलती रही और आख़िरकार हम इस फैसले पर पहुँचे कि : यहाँ से क़रीब पाँच वर्स्ट की दूरी पर एक सुनसान घाटी है, वे लोग कल सुबह चार बजे वहाँ पहुँच जायेंगे, और हम लोग आध घण्टे बाद रवाना होंगे। तुम लोग छह कदम की दूरी से एक-दूसरे पर गोली चलाओगे इस दूरी का आग्रह

ग्रुश्नीत्स्की ने ख़ुद किया। जो मरेगा, उसकी मौत का कारण चेरकसों के मत्थे मढ़ दिया जायेगा : अब मुझे जो शक है, वह भी सुन लो उन लोगों ने, मतलब उसके सहयोगियों ने, प्रकट ही अपनी पहले वाली योजना में कुछ हेर-फेर कर दी है, और अब उनका इरादा सिर्फ़ ग्रुश्नीत्स्की की पिस्तौल में ही गोली भरने का है। यह तो बहुत कुछ हत्या जैसा ही लगता है, मगर लड़ाई में धूर्त्तता की छूट तो होती ही है, ख़ास कर इन एशियाई लड़ाइयों में । ख़ैर, जो भी हो, इतना मैं ज़रूर कहूँगा कि ग्रुश्नीत्स्की अपने साथियों की अपेक्षा कुछ भला है। क्या ख़याल है तुम्हारा? क्या हम उन्हें यह जता दें कि हमें उनकी चाल का पता लग गया है?"

"किसी कीमत पर नहीं, डॉक्टर! इतना तुम निश्चय जानो कि मैं उनके आगे घुटने नहीं टेकने वाला।"

"तो फिर क्या करने का इरादा है तुम्हारा?"

"यह मेरा निजी भेद है।"

"ध्यान रखना, कहीं तुम उनके जाल में न फँस जाना... यह भी याद रखना कि दूरी सिर्फ़ छह कदमों की है।"

"डॉक्टर, कल सुबह चार बजे मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। घोड़े कसे-कसाये तैयार रहेंगे। नमस्कार!"

मैं शाम तक अपने घर पर ही कमरे में बन्द बैठा रहा। रानी लिगोव्स्काया का नौकर एक न्योता ले कर मुझे बुलाने आया, मगर मैंने कहला दिया कि मेरी तबियत ठीक नहीं है।

रात के दो बज चुके हैं, मगर मैं सो नहीं पा रहा हूँ। जानता हूँ कि मुझे आराम करना चाहिए, ताकि कल मेरा हाथ थिर और दृढ़ रहे। हालाँकि छह कदमों के फ़ासले पर निशाने का चूकना ज़रा मुश्किल ही होगा। आह, मेरे दोस्त ग्रुश्नीत्स्की, तुम्हारी चाल काम नहीं आयेगी। हम आपस में भूमिकाएँ बदल लेंगे, और अब तुम्हारे पीले चेहरे पर भय के छिपे हुए चिह्नों को देखने की बारी मेरी होगी। क्यों तुमने इन घातक छह कदमों पर हठ किया? तुम सोचते हो कि मैं निशाने के तौर पर अपना माथा दब्बूपन

से तुम्हारे आगे पेश कर दूँगा... मगर नहीं, हम लोग लौटरी से निर्णय करेंगे! और तब... तब... लेकिन अगर कहीं भाग्य ने उसी का साथ दिया, तो? अगर मेरे सितारों ने मुझे धोखा दे दिया तो? और कोई आश्चर्य नहीं अगर इस बार ऐसा ही हो। काफ़ी दिनों तक उन्होंने वफ़ादारी से मेरा साथ दिया है।

आह, ख़ैर! अगर मौत ही लिखी हो, तो मौत ही सही! दुनिया का इससे कोई ज़्यादा नुकसान नहीं होगा, और मैं भी अब दुनिया से बुरी तरह ऊब चुका हूँ। मैं उस आदमी की तरह हूँ, जो नाच में बैठा जमुहाइयाँ लेता रहता है, मगर सोने के लिए सिर्फ़ इसलिए अपने घर नहीं जाता कि उसकी गाड़ी अभी नहीं आयी है।

मगर मेरी गाड़ी आ चुकी है अलविदा!

मैं अपने दिमाग़ में जीवन के बीते हुए समय से हो कर गुज़रता हूँ और अनायास ख़ुद से पूछता हूँ मैं क्यों कर ज़िन्दा रहा? मेरे जन्म लेने का उद्देश्य क्या था? इतना तो मैं ज़रूर कहूँगा कि कोई-न-कोई उद्देश्य था ज़रूर, और यह भी कहूँगा कि तकदीर ने मेरे लिए कोई बड़ी चीज़ सँजो कर रखी थी, क्योंकि मैं अपने भीतर की अदम्य, अप्रयुक्त शक्तियों से अच्छी तरह परिचित हूँ... मगर मैं अपनी पहले से तयशुदा मंजिल को भाँप नहीं सका, मैंने अपने आपको खोखले और घटिया आवेगों की बहिया में बह जाने दिया, और उनकी कुठाली से मैं लोहे की तरह कड़ा और सर्द बन कर बाहर निकला। लेकिन ज़िन्दगी का सुन्दरतम फल ऊँची आकांक्षाओं की वह जोश-भरी गर्मी सदा के लिए जा चुकी थी। तब से न जाने कितनी बार मैं भाग्य के हाथों में कुठार का काम कर चुका हूँ। दण्ड देने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले इस हथियार की तरह, मैं मुजरिमों के मस्तकों पर गिरा हूँ, अक्सर बिना किसी दुर्भावना के और हमेशा बग़ैर किसी खेद या पश्चाताप के... मेरे प्यार ने कभी किसी को इसीलिए सुखी नहीं बनाया, क्योंकि जिन्हें मैं प्यार करता था, उनके लिए मैंने कभी कोई त्याग नहीं किया। मैंने केवल अपने लिए ही प्यार किया है, सिर्फ़ अपनी ख़ुशी के लिए। लोभ और बेसब्री से उनकी भावनाओं, उनके स्नेह, उनकी खुशियों और तकलीफ़ों को जज्ब करता हुआ, मैं हमेशा अपने हृदय की एक विचित्र चाह को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करता रहा हूँ, लेकिन कभी तृप्त नहीं हुआ। मैं भूख से मरते उस आदमी के समान रहा हूँ, जो बेहद थकान से बेहोशी की हद तक पहुँच कर बढ़िया पकवानों तथा चमकीली शराबों के सपने देखता है; हुलास से भर कर, ख़ुशी

से फूला न समाता हुआ, वह कल्पना के इन क्षण-भंगुर उपहारों से खुद को ठूँस कर भर लेता है और मानो मन-ही-मन स्वस्थ महसूस करने लगता है, मगर तन्द्रा से जागने पर देखता है कि सपना ग़ायब हो चुका है... और पहले से दुगुनी भूख और निराशा बची रह गयी है!

शायद कल मैं मर जाऊँगा और इस धरती पर एक भी ऐसा प्राणी नहीं होगा, जो मुझे पूरी तरह समझता हो। जैसा मैं सचमुच हूँ, कुछ लोग मुझे उससे बुरा समझते हैं, जबकि दूसरे लोग उससे अच्छा। कुछ कहेंगे : बड़ा भला आदमी था; दूसरे कहेंगे : पक्का बदमाश था! और दोनों ही ग़लत होंगे। क्या इसके बाद भी जीने की ज़हमत उठाने का कोई फ़ायदा है? लेकिन फिर भी हम जीते चले जाते हैं उत्सुकतावश, किसी नयी चीज़ की आशा में... कितना हास्यास्पद और कितना तकलीफ़देह है!

मुझे न के किले में आये, डेढ़ महीना गुज़र चुका है। मैक्सिम मैक्सिमिच शिकार को गया हुआ है... और मैं बिलकुल अकेला खिड़की के पास बैठा हुआ हूँ। बाहर सलेटी बादलों ने पहाड़ों को ऊपर से ले कर क़रीब-क़रीब उनकी तलहटी तक ढँक लिया है, धुन्ध के बीच से सूरज एक पीले चकत्ते-सा दीखता है। बड़ी ठण्ड है, और साँय-साँय करती हवा, खिड़कियों और दरवाज़ों के पल्लों को खड़खड़ा रही है... कितना ऊबाऊ है यह सब! मैं अपनी डायरी फिर से लिखना शुरू करूँगा, जिसमें इस बीच कई विचित्र घटनाओं के कारण बाधा आ गयी थी।

पिछला पृष्ठ दोबारा पढ़ने पर मुझे हास्यास्पद लगता है। मैंने सोचा था कि मैं मर जाऊँगा, लेकिन इसका कोई सवाल ही नहीं उठा, क्योंकि मैंने अभी अपने दुखों के प्याले को तलछट तक ख़ाली नहीं किया था, और अब तो ऐसा लगता है कि मुझे अभी बहुत जीना है।

जो कुछ घट चुका है, वह मेरी स्मृति में कितनी स्पष्टता और गहराई से अंकित है! समय ने उसकी एक भी रेखा या रंगत नहीं मिटायी है।

मुझे याद है कि द्वन्द्व-युद्ध के पहले वाली रात, मैं एक पल नहीं सोया था। एक अजीब-सी बेचैनी ने मुझे जकड़ लिया था और मैं देर तक लिख नहीं पाया था। लगभग एक घण्टा मैं कमरे में घूमता रहा, फिर बैठ कर मेज़ पर पड़ा हुआ वॉल्टर

स्कॉट का उपन्यास उठा कर पढ़ने लगा। उपन्यास था 'प्राचीन नश्वरता।' शुरू में तो मुझे पढ़ने में प्रयास करना पड़ा, फिर उसकी रोचक कथा के प्रवाह में बह कर मैं शेष सब कुछ भूल गया। आख़िरकार पौ फटी। मेरी नसें सुस्थिर हो चुकी थीं। मैंने शीशे में अपना चेहरा ग़ौर से देखा : एक मन्द-सा पीलापन मेरे चेहरे पर छाया हुआ था, जिस पर रतजगे के निशान साफ़ दिखायी दे रहे थे, लेकिन मेरी आँखें, काले सायों से घिरी होने पर भी, गर्वीलेपन और निष्ठुरता से चमक रही थीं। मैं अपने आप से पूरी तरह सन्तुष्ट था।

घोड़ों पर ज़ीन कसने का हुक्म दे कर मैंने कपड़े पहने और तेज़-तेज़ झरने की ओर चल दिया। जैसे ही मैंने झरने के ठण्डे पानी में डुबकी लगायी, मुझे लगा, मेरी सारी शारीरिक और मानसिक शक्ति फिर लौट आयी है। नहाने के बाद जब मैं चला तो इतना तरो-ताज़ा और उत्साहित था, मानो नाच में हिस्सा लेने जा रहा हूँ। इसके बाद कोई मुझसे यह नहीं कह सकता कि आत्मा शरीर पर निर्भर नहीं है।

घर वापस आने पर मैंने डॉक्टर को वहाँ मौजूद पाया! उसने सफ़ेद बिरजिस, कमर पर पेटी से बँधा हलका चेरकस कोट और चेरकस टोपी पहन रखी थी। उस भारी-भरकम रोएँदार टोपी के नीचे उसकी दुबली-पतली काया को देख कर मैं ज़ोर से हँस पड़ा। उसका चेहरा-मोहरा कतई बहादुराना नहीं लगता और उस समय तो वह आम तौर से ज़्यादा उदास दिख रहा था।

"इतने उदास क्यों हो डॉक्टर?" मैंने उससे कहा, "क्या तुमने सैंकड़ों बार लोगों को अत्यन्त तटस्थता से परलोक के लिए विदा नहीं किया? क्षण भर के लिए यही सोच लो कि मुझे जिगर का बुख़ार है और मेरे बचने या ख़त्म हो जाने की उम्मीद बराबर-बराबर है। दोनों ही अंजाम सिलसिले के मुताबिक हो सकते हैं; मुझे ऐसा मरीज़ समझो, जिसके मर्ज़ का निदान तुम अभी कर नहीं पाये हो इससे तुम्हारी उत्सुकता पूरी तरह जाग जायेगी। अब तुम मेरे बारे में शरीर-विज्ञान सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण फ़तवे दे सकते हो... क्या मौत की प्रतीक्षा करना, उसकी अपेक्षा रखना, सचमुच अपने आप में एक बीमारी नहीं है?"

इस विचार ने डॉक्टर को काफ़ी प्रभावित किया और उसकी बुझी-बुझी तबियत खिल उठी।

हम घोड़ों पर सवार हुए। लगाम को दोनों हाथों से कस कर पकड़े, वेर्नर घोड़े पर चिपक कर बैठ गया और हम चल पड़े। बिजली की तरह हम लोगों ने बस्ती के बीच से होते हुए किले को पार किया और उस घाटी में दाख़िल हुए, जिसके बीच से

एक सड़क बल खाती हुई चली गयी थी। सड़क की आधी चौड़ाई लम्बी-लम्बी घास से ढँकी थी और थोड़ी-थोड़ी दूर पर शोर मचाते नाले उसे बीच से काटते हुए निकल रहे थे, जिन्हें पार करते समय डॉक्टर को बड़ी दिक्कत होती, क्योंकि उसका घोड़ा हर बार पानी के बीच पहुँच कर अड़ जाता था।

इससे अधिक साफ़, खुली और ताज़ा सुबह की मुझे याद नहीं है। हरे-हरे पर्वत-शिखरों के पार सूरज ने बस झाँका ही था और रात की ख़त्म होती ठण्ड के साथ घुलती-मिलती उसकी किरणों की हल्की-हल्की गर्माहट, इन्द्रियों को एक मीठी-मीठी अलसाहट से भरे दे रही थी। युवा दिवस की उत्फुल्ल किरण अभी घाटी के भीतर तक नहीं पहुँची थी, इस समय तो वह हमारे दोनों ओर सिर उठाये झूमती, ऊँची चट्टानों की चोटियों को ही सुनहरा बना रही थी। चट्टानों और पत्थर के बड़े-बड़े ढोंकों की गहरी सन्धों और दरारों में उगी हुई घने पत्तों वाली झाड़ियाँ, हवा का हल्का-सा झोंका आते ही, हम पर चाँदी-से चमकते तुहिन कणों की वर्षा कर देतीं। मुझे याद है कि उस क्षण मेरे हृदय में प्रकृति के लिए जितना प्यार उमड़ा, उतना पहले कभी नहीं उमड़ा था। कैसी उत्सुकता से मैं लताओं के चौड़े-चौड़े पत्तों पर थरथराती ओस की हर बूँद को निहार रहा था, जो अनगिनत सतरंगी किरणों को प्रतिबिम्बित कर रही थी। कितनी व्यग्रता से मेरी आँखें धुँधली दूरियों को चीरने की कोशिश कर रही थीं। यहाँ रास्ता और भी सँकरा होता चला गया था; चट्टानें और भी ज़्यादा नीली और भयावनी होती हुईं, अन्त में एक अलंघ्य दीवार में विलीन हो रही थीं। हम लोग ख़ामोश साथ-साथ बढ़ते रहे।

"तुमने अपनी वसीयत लिख दी है क्या?" हठात वेर्नर ने पूछा।

"नहीं।"

"कहीं मारे गये, तो क्या होगा?"

"उत्तराधिकारी अपने आप प्रकट हो जायेंगे।"

"क्या तुम्हारा ऐसे कोई दोस्त नहीं हैं, जिन्हें तुम आख़िरी सलाम भेजना चाहो?"

मैंने सिर हिला दिया।

"क्या दुनिया में ऐसी कोई औरत भी नहीं है, जिसके लिए तुम कोई निशानी छोड़ना चाहो?"

"डॉक्टर, क्या तुम चाहते हो कि मैं अपना दिल खोल कर तुम्हारे सामने रख दूँ?" मैंने जवाब दिया, "तुम देख ही रहे हो कि उस उम्र को पार कर आया हूँ, जब

मरते समय लोगों के होंठों पर अपनी प्रेयसी का नाम होता है, और वसीयत के रूप में वे अपने किसी दोस्त के नाम बालों की रूखी या तेल-लगी लट छोड़ जाते हैं। जब मुझे सिर पर नाचती और ऐन मुमकिन मौत के बारे में ख़याल आता है, तब मैं सिर्फ़ अपने ही बारे में सोचता हूँ; कुछ लोग तो इतना भी नहीं करते। ये दोस्त, जो कल मुझे भूल जायेंगे या इससे भी बदतर, जो मेरे बारे में भगवान जाने कैसी-कैसी ऊट-पटाँग कहानियाँ बुनेंगे और ये औरतें, जो किसी दूसरे की बाँहों से बँधी, सिर्फ़ इसलिए मुझ पर हँसेंगी, ताकि उस आदमी को मुझसे ईर्ष्या न हो ऐसों की भला मैं क्या परवाह करता हूँ? ज़िन्दगी की उथल-पुथल और हलचल से मैंने कुछ विचार ज़रूर ग्रहण किये हैं लेकिन भावना एक भी नहीं। एक अर्से से मैं अपनी बुद्धि से ज़िन्दगी जीता रहा हूँ, हृदय से नहीं। मैं ख़ुद अपनी भावनाओं और कर्मों को निहायत बारीकी और उत्सुकता से तोलता और विश्लेषित करता हूँ, लेकिन बिना किसी हमदर्दी के। मेरे भीतर दो आदमी हैं एक जीने के पूरे अर्थों में ज़िन्दगी जीता है; दूसरा विचार करता है और पहले आदमी के बारे में फ़ैसला देता है। यह पहला शायद एक घण्टे में ही तुमसे और दुनिया से हमेशा-हमेशा के लिए विदा ले लेगा, और दूसरा... दूसरा?... वह देखो, डॉक्टर, क्या तुम दाहिनी ओर उस सीधी खड़ी पहाड़ी पर उन तीन धुँधली आकृतियों को देख सकते हो? मेरा ख़याल है, वे हमारे प्रतिद्वन्द्वी ही हैं।"

हमने घोड़ों को एड़ लगायी और तेज़ी से बढ़ चले।

पहाड़ी पर एक सीधी खड़ी चट्टान के किनारे, झाड़ियों से तीन घोड़े बँधे हुए थे। हमने भी वहीं अपने घोड़ों के पगहे बाँधे और एक सँकरे रास्ते से होकर, पैदल ही उस कगार पर चढ़ गये, जहाँ घुड़सवार-कप्तान और इवान इग्नात्येविच नामक अपने एक और समर्थक के साथ ग्रुश्नीत्स्की हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। इन दूसरे साहब का पूरा नाम मैंने कभी नहीं सुना था।

"हम लोग काफ़ी देर से आपका इन्तज़ार कर रहे हैं," घुड़सवार-कप्तान ने एक व्यंग्य-भरी तीखी मुस्कान के साथ कहा।

मैंने अपनी घड़ी निकाल कर उसके आगे कर दी।

उसने यह कह कर क्षमा माँगी कि उसकी घड़ी तेज़ है।

कुछ मिनटों तक बड़ी मनहूस-सी ख़ामोशी छायी रही। आख़िर डॉक्टर ने ही, ग्रुश्नीत्स्की की ओर घूम कर, उस ख़ामोशी को तोड़ा :

"मेरा विश्वास है," उसने कहा, "कि आप दोनों ही द्वन्द्व-युद्ध के लिए जी-जान से अपनी तैयारी दिखा कर पूरी तरह अपने-अपने सम्मान की रक्षा कर चुके हैं; अब अगर आप चाहें तो आपस में समझौता करके इस मामले को शान्ति-पूर्वक रफ़ा-दफ़ा कर सकते हैं।"

"मैं ऐसा करने को तैयार हूँ," मैंने कहा।

कप्तान ने ग्रुश्नीत्स्की को आँख मारी, जिसने यह सोच कर कि मैंने हथियार डाल दिये हैं, बड़ी ही दम्भपूर्ण मुद्रा बना ली थी, हालाँकि क्षण भर पहले तक उसके चेहरे पर मुर्दनी छायी हुई थी। हमारे वहाँ पहुँचने के बाद अब पहली बार उसने मेरी ओर देखा। उसकी निगाह में बेचैनी थी और उसके अन्दर चल रहे संघर्ष की चुग़ली खाती थी।

"मुझे अपनी शर्तें बताइए," वह बोला, "और ख़ातिर जमा रखिए कि जो कुछ मुझसे हो सकेगा मैं आपके लिए करूँगा..."

"मेरी शर्तें ये हैं : तुम आज ही सब के सामने सार्वजनिक रूप से अपना मिथ्या आरोप वापस लोगे और मुझसे खेद प्रकट करोगे..." मैंने कहा।

"श्रीमान, मुझे ताज्जुब है कि आप को इस तरह की बात सुझाने की हिम्मत कैसे हुई..."

"मैं भला और सुझा ही क्या सकता हूँ?"

"हम इसका फ़ैसला पिस्तौल की गोलियों से करेंगे।"

मैंने अपने कन्धे उचका दिये, "ऐसा ही सही! सिर्फ़ इतना याद रखना कि हममें से एक की मौत निश्चित है।"

"मुझे उम्मीद है, वह 'एक' आप ही होंगे।" वह बोला।

"और मुझे पूरा यकीन है कि इसका ठीक उलट होगा।"

वह चौंका और उसका चेहरा सुर्ख़ हो उठा; फिर वह अपने पर ज़ोर दे कर हँसा।

कप्तान ने उसकी बाँह पकड़ी और उसे एक तरफ़ को ले गया, वे कुछ देर तक खुस-फुस करते रहे। यहाँ पहुँचने तक तो मेरा दिमाग़ काफ़ी शान्त था, मगर अब ये सब कार्रवाइयाँ मुझे बेचैन किये दे रही थीं।

डॉक्टर मेरे निकट आया।

"देखो," उसने प्रकट ही चिन्तित स्वर में कहा, "क्या तुम इनकी साज़िश भूल गये हो? मुझे तो पिस्तौल में गोली भरनी नहीं आती, लेकिन अगर मामला यही है तो... वैसे तुम हो बड़े अजीब। उनसे साफ़ कह दो कि तुम्हें उनके इरादों का पता चल गया है, फिर उनकी हिम्मत नहीं पड़ेगी... आख़िर इसमें क्या तुक है? ये लोग तुम्हें चिड़िया की तरह गोली मार कर गिरा देंगे..."

"डॉक्टर, मेरे दोस्त, घबराओ मत! ज़रा-सा इन्तज़ार तो करो... मैं वह चाल चलूँगा कि उन्हें फ़ायदा उठाने का कोई मौक़ा ही नहीं मिलेगा। उन्हें जी भर कर खुस-फुस कर लेने दो..."

"सुनिए महाशय, अब यह मामला थकान और ऊब पैदा कर रहा है!" मैंने ऊँची आवाज़ में उनसे कहा, "अगर हमें लड़ना ही है, तो फिर आइए, इसे ख़त्म किया जाय; इस पर बातचीत करके के लिए तो आपके पास कल भी काफ़ी समय था..."

"हम तैयार हैं," कप्तान ने जवाब दिया, "सज्जनो, अपनी-अपनी जगह पर खड़े हो जाइए! डॉक्टर, क्या आप छह कदमों की दूरी नाप लेंगे!"

"अपनी-अपनी जगह पर खड़े हो जाइए!" इवान इग्नात्येविच ने चिचियाती आवाज़ में दुहराया।

"माफ़ कीजिए!" मैंने कहा, "एक शर्त और है। चूँकि हम लोगों का इरादा मौत तक लड़ने का है, इसलिए हमें इस बात की पूरी सावधानी बरतनी होगी कि यह लड़ाई गुप्त रहे और हमारे सहयोगियों-समर्थकों पर इसकी कोई ज़िम्मेदारी न आ पड़े। आप मेरी बात से सहमत हैं?"

"हाँ, हम लोग पूरी तरह सहमत हैं!"

"अभी-अभी मेरे दिमाग़ में एक विचार आया है। दाहिनी ओर उस सीधी-खड़ी चट्टान के सिरे पर वह छोटा-सा कगार आप देख रहे हैं न? वहाँ से नीचे की ज़मीन यदि ज़्यादा नहीं तो कम-से-कम तीस सेजीन तो ज़रूर है। नीचे ऊबड़-खाबड़ नुकीली चट्टानें हैं। हम दोनों उस कगार के एकदम सिरे पर खड़े हो जायेंगे, जिससे हल्की-सी चोट भी जान-लेवा बन जायेगी, मेरी यह बात आपकी इच्छा के अनुकूल भी है, क्योंकि ख़ुद आप लोगों ने ही दूरी सिर्फ़ छह कदमों की रखी है। हममें से जो भी घायल होगा, वह निश्चित रूप से नीचे जा गिरेगा और उसकी हड्डी-पसली एक हो जायेगी। घाव में से डॉक्टर गोली निकाल देगा और इस आकस्मिक मौत को आसानी

से किसी दुर्घटना के मत्थे मढ़ दिया जायेगा। पहली गोली कौन चलाये, इसका फ़ैसला हम सिक्का उछाल कर करेंगे। मैं अन्त में यह साफ़-साफ़ बता देना चाहता हूँ कि इनके सिवा और किन्हीं शर्तों पर मैं लड़ने के लिए तैयार नहीं हूँ।"

"यही सही!" कप्तान ने ग्रुश्नीत्स्की की ओर एक अर्थ-भरी दृष्टि डाल कर कहा, जिसके जवाब में ग्रुश्नीत्स्की ने सहमति में सिर हिला दिया। उसके चेहरे के भाव पल-पल पर बदल रहे थे। मैंने उसे मुश्किल में डाल दिया था। साधारण दशा में वह मेरे पैर पर निशाना लगा कर मुझे हल्का-सा घायल कर देता, और इस तरह अपनी आत्मा पर बिना ज़्यादा बोझ डाले, अपना बदला ले लेता। लेकिन अब उसके सामने तीन ही रास्ते थे, या तो वह हवा में गोली छोड़े या हत्यारा बने या फिर अपनी कुटिल और कायर योजना को छोड़कर, मेरे जितना ही जोखिम उठाये। उस समय मैं उसकी स्थिति में होना कतई पसन्द न करता। वह कप्तान को अलग ले जा कर बड़ी तेज़ और गर्मागर्म बहस करने लगा। मैंने ध्यान दिया कि उसके होंठ, जो अब नीचे पड़ गये थे, बुरी तरह थरथरा रहे थे। लेकिन कप्तान एक नफ़रत-भरी मुस्कान के साथ उसकी ओर से घूम पड़ा।

"तुम बेवकूफ़ हो," उसने ज़रा ऊँची आवाज़ में ग्रुश्नीत्स्की से कहा, "तुम कुछ नहीं समझते! आइए महाशय, हम लोग चलें!"

एक सँकरी पगडण्डी, झाड़ियों के बीच में मँडराती हुई, उस चढ़ाई के ऊपर चली गयी थी; चट्टानों के टूटे हुए हिस्से ही इस कुदरती जीने की ख़तरनाक सीढ़ियों का काम दे रहे थे। झाड़ियों को पकड़-पकड़ कर हमने ऊपर चढ़ना शुरू किया। ग्रुश्नीत्स्की आगे-आगे चला, फिर उसके साथी, उनके बाद डॉक्टर और सबसे पीछे मैं।

"तुम मुझे चकित कर रहे हो," डॉक्टर ने आवेश से मेरा हाथ पकड़ कर कहा, "ज़रा अपनी नब्ज़ तो दिखाना। आख़्खाह, जैसे बुख़ार की तेज़ी से धड़क रही है! मगर तुम्हारे चेहरे से कुछ पता नहीं चलता, सिर्फ़ तुम्हारी आँखें हमेशा से ज़्यादा तेज़ी से चमक रही हैं।"

सहसा छोटे-छोटे पत्थर आवाज़ करते हुए लुढ़क कर हमारे पैरों के पास आ गिरे। क्या हुआ था? ग्रुश्नीत्स्की ठोकर खा गया था। जिस टहनी को उसने पकड़ रखा था, वह चटाक से टूट गयी थी और अगर उसके साथियों ने सहारा न दिया होता तो वह ज़रूर नीचे जा गिरता।

"ज़रा सँभल कर!" मैंने उसे पुकार कर कहा, "इतनी जल्दी मत गिरो, यह अपशकुन है। जूलियस सीज़र की याद है न?"

आख़िरकार हम लोग, बाहर को उभरी हुई, उस चट्टान पर पहुँच गये। उस कगार पर बारीक रेत यूँ बिछी हुई थी, मानो ख़ास द्वन्द्व-युद्ध के लिए ही वहाँ बिछायी गयी हो। हमारे चारों ओर सुबह की सुनहरी धुन्ध में लिपटे पर्वत-शिखर, अनगिनत पशुओं के झुण्ड की तरह इकट्ठे थे, जबकि दक्षिण में सफ़ेद एल्ब्रुस पर्वत उन बर्फ़ीली चोटियों की श्रृंखला की पिछाड़ी में सिर ताने खड़ा था, जिनके बीच पूरब से हवाओं पर उड़ कर आये पंख-जैसे बादल मटर-गश्ती कर रहे थे। कगार के किनारे तक जा कर मैंने नीचे झाँका, मेरा सिर लगभग चक्कर खा गया। नीचे की तलहटी कब्र जैसी अँधेरी और ठण्डी थी, और तूफ़ानों और समय द्वारा नीचे फेंकी गयी काईदार नुकीली चट्टानें अपने शिकार की प्रतीक्षा कर रही थीं।

जिस कगार पर हमारा द्वन्द्व होने वाला था, धरती का वह टुकड़ा तिकोने आकार का था। बाहर को निकले कोने से छह कदम नापे गये, और यह फ़ैसला किया गया कि जो आदमी अपने विरोधी की गोली का पहले सामना करेगा, वह खड्ड की ओर पीठ करके बिलकुल कगार के सिरे पर खड़ा हो जायेगा; अगर वह मारा नहीं गया, तो दोनों प्रतिद्वन्द्वी एक-दूसरे से जगह बदल लेंगे।

मैंने ग्रुश्नीत्स्की को सब तरह का फ़ायदा देने का निश्चय किया, क्योंकि मैं उसे परखना चाहता था; शायद कहीं उसकी आत्मा में उदारता की एक हल्की-सी किरण जाग उठी हो, जिससे सब कुछ अपने-आप ही ठीक-ठाक हो जाय, लेकिन अहंकार और चरित्र की दुर्बलता को आख़िरकार जीतना ही था... अगर कहीं मौत ने मुझे छोड़ दिया तो फिर उस पर किसी तरह का रहम न दिखाने के लिए मैं अपने आपको पूरी तसल्ली देना चाहता था। ऐसा कौन है, जिसने अपनी आत्मा के साथ इस तरह का सौदा न किया हो?

"हाँ तो डॉक्टर, अब सिक्का उछालो!" कप्तान ने कहा।

डॉक्टर ने अपनी जेब से चाँदी का एक सिक्का निकाला और उसे ले कर हाथ ऊपर उठाया।

"पट!" सहसा ग्रुश्नीत्स्की उस आदमी की तरह चिल्लाया, जिसे किसी ने हल्के-से कोंच कर जगा दिया हो।

"चित!" मैंने कहा।

सिक्का हवा में उछला और फिर खनखनाहट की आवाज़ के साथ नीचे आ गिरा। हम सभी लोग उसे देखने के लिए तेज़ी से उसकी ओर झपटे।

"तुम्हारा सितारा बुलन्द है," मैंने ग्रुश्नीत्स्की से कहा, "पहले तुम्हें गोली चलानी है। मगर इतना याद रखना कि अगर तुम मुझे नहीं मार सके तो मैं कसम खा कर कहता हूँ, मैं तुम्हें किसी हालत में नहीं छोड़ूँगा।"

उसका चेहरा तमतमा उठा, एक निहत्थे आदमी को जान से मार डालने के विचार ने उसे शर्मिन्दा कर दिया। मैंने ग़ौर से उसकी ओर देखा, और क्षण भर के लिए मुझे लगा कि वह अभी मेरे पैरों पर गिर कर माफ़ी माँग लेगा, मगर ऐसी नीच साज़िश को वह कैसे कबूल करता? अब उसके लिए सिर्फ़ एक ही रास्ता बचा था : वह था हवा में गोली चलाना! मुझे पक्का यकीन था कि वह ऐसा ही करेगा। सिर्फ़ एक ही बात उसे ऐसा करने से रोक सकती थी यह ख़याल कि मैं कहीं दूसरे द्वन्द्व की माँग न कर बैठूँ।

"अब वक्त आ गया है।" डॉक्टर ने मेरी आस्तीन खींचते हुए दबी ज़बान में कहा, "अगर अब तुम उनसे यह नहीं कहोगे कि हम उनके इरादों को जानते हैं, तो सब गुड़-गोबर हो जायेगा। देखो, वह पिस्तौल में गोलियाँ भरने लगा है! अगर तुम नहीं कहोगे तो मैं उनसे कह दूँगा..."

"नहीं डॉक्टर, कतई नहीं!" मैंने उसकी बाँह पकड़ कर उसे रोकते हुए कहा, "तुम सारा खेल ख़राब कर दोगे, तुमने तो मुझे ज़बान दी थी कि तुम दख़ल नहीं दोगे... और फिर इससे तुम्हारा सम्बन्ध ही क्या है? शायद मैं मरना ही चाहता हूँ..."

उसने हैरत से मेरी ओर देखा।

"ख़ैर, तब तो बात ही दूसरी है! हाँ, अगली दुनिया में मुझे दोष मत देना..."

इस बीच कप्तान पिस्तौलें भर चुका था। उसने मुस्करा कर ग्रुश्नीत्स्की के कान में कुछ फुसफुसाते हुए एक पिस्तौल उसे दी, दूसरी मुझे।

मैंने उस कगार के परले कोने पर अपनी जगह ले ली, बायें पैर को मज़बूती के साथ चट्टान से अड़ाते और थोड़ा आगे की ओर झुकते हुए, ताकि अगर हल्की-सी चोट लगे तो कहीं पीछे न जा गिरूँ।

ग्रुश्नीत्स्की मेरे सामने खड़ा हो गया, और इशारा पाते ही उसने अपनी पिस्तौल

ऊँची करनी शुरू की। उसके घुटने काँप रहे थे। उसने ठीक मेरे माथे का निशाना लिया...

उत्कट क्रोध का एक ज्वार मेरे हृदय में उबल पड़ा।

सहसा उसने पिस्तौल की नली नीचे झुका ली। उसका चेहरा काग़ज़ की तरह सफ़ेद हो गया था, वह अपने साथी की ओर मुड़ा।

"मैं यह नहीं कर सकता," उसने भर्राई आवाज़ में कहा।

"कायर कहीं के!" कप्तान ने जवाब में कहा।

पिस्तौल छूटने की आवाज़ हुई। गोली मेरे घुटने को छीलती हुई निकल गयी। मैं अनायास कुछ कदम आगे बढ़ आया, ताकि जितनी जल्दी हो सके, किनारे से दूर हट आऊँ।

"ग्रुश्नीत्स्की, मेरे भाई, बड़ा अफ़सोस है कि तुम्हारा निशाना चूक गया!" कप्तान ने कहा, "अब तुम्हारी बारी है। चलो, अपनी जगह पर खड़े हो जाओ! जाने के पहले एक बार गले तो मिल लो, क्योंकि अब हम लोग कभी नहीं मिल सकेंगे।" वे दोनों गले मिले, कप्तान बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोके हुए था।

"डरने की कोई बात नहीं," उसने कुटिलता से ग्रुश्नीत्सकी की ओर देख कर आगे जोड़ा, "इस दुनिया की हर चीज़ निरर्थक और व्यर्थ है! कुदरत, तकदीर और ज़िन्दगी सब बिलकुल अर्थहीन चीज़ें हैं!"

इन करुण उद्‌गारों को पूरी गम्भीरता से प्रकट करके कप्तान अपनी जगह पर लौट आया। आँखों में आँसू भर कर इवान इग्नात्येविच ने भी ग्रुश्नीत्स्की को गले लगाया और अब मेरे सामने अकेला ग्रुश्नीत्स्की रह गया। आज तक मैं ख़ुद अपने आप को वह जज़्बा समझाने की कोशिश कर रहा हूँ, जो उस समय मेरे दिल में उमड़ रहा था। यह चोट खाये अहं की खीझ और नफ़रत और इस जानकारी से उपजा ग़ुस्सा था कि मेरे सामने खड़ा हुआ यह आदमी, जो इस समय मुझे सर्द रुखाई और शान्त गुस्ताख़ी से ताक रहा है, सिर्फ़ दो मिनट पहले ही, अपने आपको ज़रा भी ख़तरे में डाले बिना, मुझे कुत्ते की तरह मार डालने के लिए तैयार था, क्योंकि मेरा पैर अगर ज़रा-सा और जख़्मी हो गया होता तो मैं निश्चय ही लुढ़क कर कगार के नीचे जा पड़ता।

कुछ मिनट तक मैं उसके चेहरे को ग़ौर से एकटक घूरता रहा कि शायद उसके चेहरे पर पछतावे का ज़रा-सा भी चिह्न नज़र आ जाय। उल्टा मुझे लगा, जैसे वह

अन्दर से उठती मुस्कुराहट को दबा रहा हो।

तब मैंने उससे कहा, "मेरी सलाह है, तुम मरने से पहले भगवान को याद कर लो।"

"तुम्हें अपनी आत्मा से ज़्यादा मेरी आत्मा की चिन्ता करने की कोई ज़रूरत नहीं। मेरी सिर्फ यही प्रार्थना है कि अब बिना एक क्षण देर किये, तुम गोली चलाओ।"

"और तुम अपना झूठा आरोप वापस नहीं लोगे? या मुझसे क्षमा नहीं माँगोगे? ख़ूब अच्छी तरह सोच लो, क्या तुम्हारी आत्मा तुमसे कुछ नहीं कहती?"

"मिस्टर पेचोरिन!" घुड़सवार-कप्तान चिल्लाया, "अगर मुझे बोलने दें तो... आप यहाँ उपदेश देने नहीं आये हैं, अब इस झंझट को जितनी जल्दी हो सके, ख़त्म कीजिए। न जाने कब घाटी में आता-जाता कोई सवार हमें देख ले।"

"अच्छी बात है! डॉक्टर, ज़रा मेरे पास आओगे?"

डॉक्टर मेरे निकट आया। बेचारा डॉक्टर! ग्रुश्नीत्स्की दस मिनट पहले जितना पीला पड़ गया था, उससे भी ज़्यादा मुर्दनी डॉक्टर के चेहरे पर दिख रही थी।

मैंने नीचे लिखे शब्दों को जान-बूझ कर ख़ूब साफ़ और ऊँची आवाज़ में कहा, जैसे मौत की सज़ाएँ सुनायी जाती हैं :

"डॉक्टर, ये साहबान, बेशक अपनी जल्दी में, मेरी पिस्तौल में गोली भरना भूल गये हैं; मेरी प्रार्थना है कि इसे फिर से और ख़ूब होशियारी से भर दो।"

"यह नहीं हो सकता।" कप्तान चिल्लाया। "यह नहीं हो सकता! मैंने ख़ुद दोनों पिस्तौलें भरी थीं; आपकी पिस्तौल में से गोली गिर गयी होगी... यह मेरा दोष नहीं! और इसे दुबारा भरने का आपको कोई अधिकार नहीं... कोई भी अधिकार नहीं... यह हर हालत में नियम के बिलकुल ख़िलाफ़ है। ऐसा मैं कभी नहीं होने दूँगा..."

"अच्छी बात है!" मैंने कप्तान से कहा। "अगर ऐसा ही है तो आइए, आप और मैं इन्हीं शर्तों पर एक-दूसरे को आज़मा लेते हैं..."

अब उसकी समझ में न आया कि क्या कहे।

ग्रुश्नीत्स्की छाती पर सिर लटकाये, झेंपा और उदास, वहीं खड़ा रहा।

"जैसा ये चाहें इन्हें करने दो," आख़िर उसने कप्तान से कहा, जो डॉक्टर के हाथ से मेरी पिस्तौल छीनने की कोशिश कर रहा था, "तुम ख़ुद जानते हो कि ये ठीक कह रहे हैं।"

कप्तान उसकी ओर इशारे करता रह गया, लेकिन बेकार। ग्रुश्नीत्स्की ने निगाह तक ऊपर नहीं उठायी।

इसी बीच डॉक्टर ने गोली भर कर पिस्तौल मुझे पकड़ा दी।

यह देख कर कप्तान ने ज़मीन पर थूका और ज़ोर से पैर पटका।

"दोस्त, तुम मूर्ख हो," वह बोला, "वज्र मूर्ख! जब एक बार तुमने यह सब मेरे ऊपर छोड़ दिया, तब फिर हर बात में तुम्हें मेरा ही कहना मानना चाहिए था... तुम्हें वही फल मिल रहा है, जिसके तुम काबिल हो। अब जाओ, चींटी की मौत मरो!" फिर वह बड़बड़ाते हुए दूसरी ओर चला गया, "लेकिन फिर भी यह नियमों के सरासर ख़िलाफ़ है... हाँ, सरसरा ख़िलाफ़..."

"ग्रुश्नीत्स्की!" मैंने कहा, "अब भी वक्त है, अपना झूठा आरोप वापस ले लो और मैं तुम्हारी सब बातें माफ़ कर दूँगा। मुझे बेवकूफ़ बनाने में तुम कामयाब नहीं हुए, यही मेरे अहं की तसल्ली के लिए काफ़ी है। याद करो कि हम कभी दोस्त थे..."

तीव्र आवेश से उसका मुख विकुंचित हो उठा और आँखें कौंधने लगीं!

"गोली चलाओ!" उसने जवाब दिया। "मुझे अपने आपसे नफ़रत और तुमसे घृणा है। अगर तुम मुझे नहीं मारते, तो मैं ही किसी रात तुम्हारी पीठ में छुरा भोंक दूँगा। यह दुनिया इतनी बड़ी नहीं कि हम दोनों इसमें एक साथ रह सकें..."

मैंने गोली दाग़ दी।

धुआँ छँटने पर वहाँ ग्रुश्नीत्स्की का कोई नाम-निशान न था। कगार के किनारे पर गर्द का सिर्फ़ एक झीना गुबार, मीनार की तरह ऊपर उठ रहा था।

सब एक साथ चीख़ उठे।

"फ़िनिता ला कामेदिया," मैंने डॉक्टर से कहा।

उसने कुछ जवाब नहीं दिया, बल्कि दहशत में दूसरी ओर घूम गया।

मैंने अपने कन्धे उचकाये और ग्रुश्नीत्स्की के समर्थकों की ओर अभिवादन के लिए ज़रा झुका।

रास्ते पर नीचे उतरते समय मुझे चट्टानों की फाँक के बीच पड़ी ग्रुश्नीत्स्की की

खून-सनी लाश दिखायी दी। अनायास मेरी आँखें बन्द हो गयीं।

अपना घोड़ा खोलकर, मैं धीमी और हल्की चाल से घर की ओर लौट पड़ा। मेरा दिल जैसे भारी-भारी-सा हो उठा था। सूरज की चमक खो-सी गयी लगती थी और उसकी किरणों में मुझे कोई गर्मी नहीं महसूस हो रही थी। बस्ती में पहुँचने के पहले मैं दाहिनी ओर को एक घाटी में मुड़ गया। उस समय किसी को भी देखना मुझे गवारा नहीं था, मैं बिलकुल एकान्त चाहता था! लगामें ढीली छोड़ कर और सिर को सीने पर झुकाये, मैं कुछ देर यों ही आगे बढ़ता रहा। आख़िरकार मैंने अपने आपको एक बिलकुल अपरिचित जगह पर पाया। फिर मैंने लगामें मोड़ीं और रास्ते को ढूँढने की कोशिश की। सूरज डूब रहा था, जब मैं किस्लोवोद्स्क पहुँचा थके-टूटे घोड़े पर सवार, एक थका-टूटा आदमी!

मेरे नौकर ने बताया कि डॉक्टर वेर्नर आये थे; फिर उसने दो ख़त मेरे हाथ में पकड़ा दिये; एक ख़ुद वेर्नर का था और दूसरा वेरा का।

मैंने पहला खत खोला, लिखा था :

'जितनी अच्छी तरह सम्भव था, हर चीज़ का इन्तजाम हो गया है; लाश को वहाँ से ला कर छाती में से गोली निकाल दी गयी है। सबको यकीन है कि उसकी मौत की वजह कोई दुर्घटना ही है; सिर्फ़ कमाण्डेण्ट ने, जो शायद तुम दोनों के झगड़े को जानता है, अपना सिर हिला दिया, पर बोला वह भी कुछ नहीं। तुम्हारे ख़िलाफ़ कोई सबूत नहीं है और अब तुम सुख की नींद सो सकते हो... अगर सो सको तो... अच्छा... अलविदा....'

दूसरे ख़त को खोलने के पहले मैं काफ़ी देर तक शशोपंज में पड़ा रहा। उसके पास मुझे लिखने के लिए भला क्या रहा होगा? एक अशुभ-सी आशंका मेरी आत्मा को कचोटने लगी।

यही है वह ख़त, जिसका हर शब्द जैसे जलती हुई सलाख़ों से मेरी याददाश्त में दाग़ दिया गया है :

'मैं इस यकीन के साथ तुम्हें यह ख़त लिख रही हूँ कि अब हम फिर कभी नहीं मिलेंगे। जब कुछ वर्ष पहले हम विदा हुए थे, तब भी मैंने यही सोचा था; लेकिन ईश्वर की इच्छा मुझे एक बार और आज़माने की थी। मैं इस परीक्षा में खरी नहीं उतरी, और अपना कमज़ोर दिल फिर तुम्हारी चिर-परिचित आवाज़ को सुन कर हार बैठी... लेकिन इसके लिए तुम मुझसे घृणा तो नहीं करोगे, नहीं करोगे न? यह ख़त

विदा के साथ-साथ एक आत्म-स्वीकृति भी है : जब से मेरे दिल ने पहली बार तुम्हें प्यार करना सीखा, तब से ले कर आज तक मेरे दिल में जो कुछ भी इकट्ठा हुआ है, वह सब मैं आज तुम्हें बता देना चाहती हूँ। मैं तुम्हें कोई दोष नहीं दूँगी तुमने मेरे साथ वैसा ही बर्ताव किया, जैसा कोई भी दूसरा आदमी करता; तुमने अपनी सम्पत्ति की तरह मुझे चाहा उन आपसी सुख-दुख और चिन्ताओं के स्रोत की तरह, जिनके बिना जीवन नीरस, थकाऊ और एकरस बन जाता है। इस बात को मैं शुरू में ही समझ गयी थी... मगर तुम दुखी थे और मैंने इस आशा से अपने आपको निछावर कर दिया कि शायद तुम किसी दिन मेरी कुर्बानी की कदर करोगे। कभी तो मेरे अन्तहीन स्नेह को समझोगे, जिसे दुनिया की कोई ताकत प्रभावित नहीं कर सकती थी। तब से काफ़ी समय बीत चुका है, मैंने तुम्हारी आत्मा के सारे रहस्यों की थाह ले ली है... और मैंने पाया है कि मेरी आशा दुराशा थी। कितनी गहरी चोट पहुँची इससे मुझे! मगर मेरा प्यार और मेरी आत्मा घुलमिल कर एक हो गयी है लौ मद्धिम ज़रूर पड़ गयी है, पर एकदम बुझी नहीं!

'हम सदा के लिए विदा हो रहे हैं, फिर भी तुम इतना यकीन रख सकते हो कि मैं अब किसी दूसरे को प्यार नहीं करूँगी। मेरी आत्मा अपना सारा ख़ज़ाना, अपने आँसू और अपनी आशाएँ, तुम पर लुटा चुकी है। जिसने एक बार तुम्हें प्यार कर लिया, वह दूसरे आदमियों को किसी कदर उपेक्षा से देखे बिना नहीं रह सकती, इसलिए नहीं कि तुम उनसे बेहतर हो न, न! बल्कि इसलिए कि तुम्हारे स्वभाव में कुछ ऐसा अनोखापन है, कुछ ऐसी ख़ासियत, जो सिर्फ़ तुम्हारी अपनी है, ऐसी ही कोई गर्वीली और अगाध चीज़! तुम चाहे कुछ भी कह रहे होते हो, तुम्हारी आवाज़ में कुछ अजीब-सी अजेय शक्ति है; प्यार पाने की इच्छा तुममें जितनी स्थिर, सतत और निरन्तर है, उतनी और किसी में नहीं; न किसी और में बुराई इतनी आकर्षक, जितनी तुम में। किसी और की निगाह में सुख का ऐसा आश्वासन नहीं होता। अपने गुणों का लाभ उठाना तुम से अधिक बेहतर तौर पर शायद ही कोई जानता हो, और फिर भी तुम्हारे जितना सचमुच दुखी और उदास कोई दूसरा नहीं होगा, क्योंकि तुम्हारे बराबर शायद ही कोई और ख़ुद को निरन्तर इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश करता रहता हो कि वह सुखी है।

अब मुझे इस तरह जल्दबाज़ी में अपने रुख़सत होने का कारण भर बताना रह गया है, शायद यह कारण तुम्हें बड़ा महत्वहीन-सा लगे, क्योंकि इसका सम्बन्ध सिर्फ़ मुझी से है।

'आज सुबह मेरे पति ने आ कर ग्रुश्नीत्स्की से तुम्हारे झगड़े के बारे में बताया। ज़रूर मेरे चेहरे ने राज खोल दिया होगा, क्योंकि वे काफ़ी देर तक, कुछ खोजते-से, मेरी आँखों में देखते रहे; यह सोच कर मैं ग़श खाते-खाते बची कि तुम्हें द्वन्द्व-युद्ध लड़ना होगा और वह भी मेरे कारण। मुझे लगा, जैसे मैं पागल हो जाऊँगी... अब हालाँकि, जब मैं उस पर शान्ति से विचार करने के काबिल हुई हूँ, मुझे पूरा विश्वास है कि तुम बच जाओगे; मेरे बिना तुम्हारा मरना असम्भव है बिलकुल असम्भव! मेरे पति काफ़ी देर तक कमरे में टहलते रहे। मुझे कुछ नहीं मालूम, उन्होंने मुझसे क्या पूछा और न मुझे यही याद है कि मैंने उन्हें क्या जवाब दिया... शायद मैंने उन्हें यह बता दिया कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ... मुझे सिर्फ़ इतना याद है कि बातचीत ख़त्म होने पर उन्होंने मुझे एक भद्दी-सी गाली दे कर मेरा अपमान किया और कमरे से बाहर चले गये। मैंने उन्हें गाड़ी तैयार करने का हुक्म देते सुना... पूरे तीन घण्टों से मैं खिड़की पर बैठी हुई तुम्हारे लौटने का इन्तज़ार कर रही हूँ... लेकिन तुम ज़िन्दा हो, तुम मर नहीं सकते! गाड़ी लगभग तैयार है... विदा... विदा...! मेरा सब कुछ लुट गया है लेकिन इससे क्या? काश, मुझे सिर्फ़ इतना यकीन हो सकता कि तुम मुझे हमेशा याद रखोगे मैं प्यार करने की बाबत कुछ नहीं कहती, नहीं सिर्फ़ याद भर रखोगे... अच्छा विदा! वे आ रहे हैं... मुझे यह ख़त छिपाना है...

'तुम मेरी से प्यार नहीं करते न? उससे शादी भी नहीं करोगे न? आह, मेरे लिए सिर्फ़ इतनी कुर्बानी तो तुम्हें करनी ही चाहिए; मैंने तुम्हारे लिए दुनिया की हर चीज़ कुर्बान कर दी है...'

मैं पागल की तरह झपट कर बाहर निकला; घोड़े पर, जिसे आँगन के उस पार ले जाया जा रहा था, उछल कर सवार हुआ और प्यातिगोर्स्क को जाने वाली सड़क पर पूरी तेज़ी से सरपट दौड़ पड़ा। मैं निर्दयता से उस थके-टूटे जानवर को एड़ लगाये जा रहा था, जो हाँफता और मुँह से झाग उगलता, मुझे पथरीली सड़क पर उड़ाये लिये जा रहा था।

सूरज, पश्चिम दिशा की पर्वत-श्रेणी पर अड्डा जमाये आराम करते, एक काले बादल के पीछे ग़ायब हो चुका था और घाटी में अँधेरा और सीलन भर गयी थी। पोदकूमोक नदी एक मन्द और एकरस गरज के साथ, चट्टानों के बीच रास्ता खोजती, बही चली जा रही थी। अधीरता और व्यग्रता से बेदम, मैं घोड़े को दौड़ाये चला जा रहा था। यह ख़याल कि शायद प्यातिगोर्स्क में भी उससे मेरी मुलाकात न हो पाये,

मेरे दिल पर घनमार हथौड़े की तरह बज रहा था। आह, सिर्फ़ एक मिनट के लिए उसे देख सकना, बस एक मिनट और! उससे विदा के दो शब्द कह पाना, प्यार से उसका हाथ दबा पाना... मैंने प्रार्थना की, मैंने लानतें भेजीं, मैं रोया, मैं हँसा... नहीं, शब्द उस वक्त की मेरी व्यग्रता और निराशा को व्यक्त नहीं कर सकते। उस समय, जब मुझे यह यकीन हो गया कि मैं वेरा को हमेशा-हमेशा के लिए खो दूँगा, तो वह मेरे लिए दुनिया की सबसे कीमती चीज़ बन उठी ज़िन्दगी, इज़्ज़त या सुख से भी ज़्यादा कीमती। भगवान ही जानता है मेरे दिमाग़ में कैसे अजीब, बेलगाम और वहशी ख़याल चक्कर लगा रहे थे... और इस सबके दौरान मैं लगातार घोड़े को भगाये चला जा रहा था, बेदर्दी से उसे एड़ लगाता हुआ। आख़िरकार मैंने ग़ौर किया कि वह मुश्किल से साँस ले पा रहा है और दो-एक बार वह सपाट ज़मीन पर भी लड़खड़ाया। अभी कज़ाकों का पुरवा एस्सेन्तुकी जहाँ मुझे दूसरी सवारी मिल सकती थी, पाँच वर्स्ट की दूरी पर था।

सब कुछ दोबारा हासिल किया जा सकता था, छुड़ा कर वापस लाया जा सकता था, अगर मेरे घोड़े में दस मिनट और इसी तरह दौड़ते रहने की ताकत बची होती। लेकिन अचानक, जब हम पहाड़ियों से निकल रहे थे तो एक छोटे-से खड्ड पर चढ़ती सड़क में एक तीखे मोड़ पर वह भहरा कर गिर पड़ा। मैं फुर्ती से ज़ीन छोड़, उछल कर अलग खड़ा हो गया; उसे खड़ा करने की कितनी ही कोशिश मैंने क्यों न की, कितनी ही बार लगामें क्यों न खींचीं पर मेरे सारे प्रयत्न बेकार गये। उसके भिंचे हुए दाँतों के बीच से एक नामालूम-सी कराह निकली और कुछ ही मिनट बाद वह चल बसा। उस बीहड़ मैदान में अब मैं अकेला रह गया था, आशा की अन्तिम डोर भी टूट चुकी थी। मैंने पैदल ही सफ़र को ज़ारी रखने की कोशिश की, लेकिन मेरे घुटनों ने जवाब दे दिया, और दिन भर की चिन्ताओं और रात भर के जागरण से थका-टूटा, मैं गीली घास पर गिर पड़ा और बच्चों की तरह बिलख-बिलख कर रो पड़ा।

बहुत देर तक मैं वैसे ही निश्चल पड़ा रहा और दुखी दिल से, आँसुओं और सिसकियों को रोके बिना, फूट-फूट कर रोता रहा। मुझे लगा, जैसे मेरी छाती फट जायेगी, टुकड़े-टुकड़े हो जायेगी। मेरे सारे इरादे, सारा संयम और धैर्य धुएँ की तरह उड़ गया। मेरे प्राण अशक्त हो गये थे, दिमाग़ को जैसे लकवा मार गया था और अगर उस समय किसी ने मुझे देखा होता तो वह नफ़रत से मुँह फेर कर चल देता।

रात की ओस और पहाड़ी हवा ने जब मेरे जलते हुए माथे को ठण्डा कर दिया

और मेरे विचार फिर से सुव्यवस्थित हो गये, तब मैंने अनुभव किया कि एक ऐसे सुख के पीछे दौड़ना बेकार और अर्थहीन है, जो खो चुका है। मैं आख़िर चाहता क्या था? उसे देखना? क्यों? क्या हम दोनों के बीच सब कुछ समाप्त नहीं हो चुका था? विदाई का एक अन्तिम तीखा चुम्बन मेरी यादों को और अधिक मीठा न कर देता; उल्टा फिर से अलग होना और अधिक कष्ट कर ही साबित होता।

ख़ैर, मुझे यह जान कर ख़ुशी हुई कि मैं अब भी रो सकता हूँ! हालाँकि इसका असली कारण शायद थकान से उघड़ी हुई नसें, रात भर जागना, दो–तीन मिनट तक पिस्तौल की नली के सामने खड़े रहना और पेट का ख़ाली होना ही था।

सब कुछ अच्छे के लिए ही होता है। अगर फ़ौजी शब्दावली का सहारा लें तो तकलीफ़ का यह नया एहसास, एक सुखद दिशा–परिवर्तन के काम आया। कभी–कभी रोना भी फ़ायदेमन्द होता है। अगर मैंने अपने घोड़े को दौड़ा–दौड़ा कर मार न डाला होता, और उसके बाद मजबूर हो कर वापस पन्द्रह वर्स्ट का रास्ता पैदल न तय किया होता, तो शायद उस रात मेरी आँखें ज़रा भी न झपतीं।

मैं सुबह के पाँच बजे किस्लोवोद्स्क लौटा और बिस्तर पर पड़ कर इस तरह सो गया, जैसे वॉटरलू के बाद नेपोलियन सोया था।

जब मेरी नींद खुली तो बाहर अँधेरा हो चुका था। अपनी मिरजई के बटन खोल कर मैं खुली खिड़की के सामने जा बैठा और पहाड़ों से हो कर आती हुई हवा मेरी छाती को ठण्डा करने लगी, जो थकावट के बाद की इस गहरी नींद के बावजूद शान्त नहीं हुई थी। दूर नदी के उस पार किले और गाँव की रोशनियाँ, तट पर छाये हुए नींबू के पेड़ों की घनी पत्तियों से छन कर, टिम–टिमा रही थीं। आँगन में मौत का–सा सन्नाटा छाया हुआ था और रानी साहिबा का घर अँधेरे में डूबा था।

तभी डॉक्टर भीतर आया। उसके माथे पर बल पड़े हुए थे और आदत के ख़िलाफ़ उसने अपना हाथ मेरी ओर नहीं बढ़ाया।

"कहाँ से आ रहे हो, डॉक्टर?"

"रानी लिगोव्स्काया के यहाँ से। उनकी लड़की बीमार है नसों की कमज़ोरी का दौरा... लेकिन मेरे यहाँ आने की वजह यह नहीं है; मुश्किल यह आ पड़ी है कि अधिकारियों को शक होने लगा है। वैसे तुम्हारे ख़िलाफ़ कोई पक्का सबूत नहीं है,

और कोई बात निश्चित रूप से सिद्ध नहीं हो सकती; फिर भी मैं तुम्हें और भी ज़्यादा होशियार रहने की सलाह दूँगा। रानी साहिबा ने अभी-अभी मुझे बताया कि उन्हें इस बात का पता है तुम उसकी बेटी के कारण द्वन्द्व लड़ चुके हो। उसी बुड्ढे ने उन्हें यह बात बतायी, जाने क्या नाम है उसका? वह रेस्तराँ में ग्रुश्नीत्स्की और तुम्हारे झगड़े का गवाह भी था। मैं तुम्हें ख़बरदार करने आया था। तो अब चलता हूँ शायद हम लोग फिर कभी न मिल पायें ऐन मुमकिन है, तुम्हें यहाँ से कहीं और भेज दिया जाय।"

वह दहलीज़ पर ठिठका; उसकी इच्छा मुझसे हाथ मिलाने की थी। और अगर मैंने ज़रा-सा भी उत्साह दिखाया होता, तो वह निश्चय ही मेरे गले आ लगता, मगर मैं पत्थर की तरह सर्द बना रहा और वह चला गया।

यही है मनुष्यों का तरीका! सब एक-से होते हैं! हालाँकि वे किसी भी काम के सभी बुरे पहलुओं को पहले से ख़ूब अच्छी तरह जानते हैं, फिर भी उसके लिए उकसाते हैं, मदद देते हैं, यहाँ तक कि जब देखते हैं कि और कोई चारा नहीं है तो हर तरह से उसका समर्थन भी करते हैं लेकिन उसके बाद हाथ झाड़ कर अलग खड़े हो जाते हैं और जिस आदमी ने उस काम की ज़िम्मेदारी का पूरा भार उठाने की हिम्मत की होती है, उसे अनुचित करार देते हुए नापसन्दगी से मुँह फेर लेते हैं। सब एक-से ही होते हैं, यहाँ तक कि उनमें जो सबसे ज़्यादा अक्लमन्द और सबसे ज़्यादा सदय होते हैं, वे भी!

दूसरे दिन सुबह जब मुझे अफ़सरों से न के किले में हाज़िर होने का आदेश मिला, तो मैं चलते-चलते आख़िरी दुआ-सलाम के लिए रानी साहिबा के यहाँ रुक गया।

रानी साहिबा को बड़ा धक्का लगा, जब उनके यह पूछने पर कि मेरे पास उनके लिए कोई महत्वपूर्ण ख़बर है, मैंने महज़ यही कहा कि मैं विदा लेने आया था।

"ख़ैर, मुझे आपसे कुछ बहुत ही ज़रूरी और ख़ास बातें करनी हैं।"

मैं बिना कुछ बोले बैठ गया।

यह ज़ाहिर था कि वे इस पसोपेश में पड़ी हुई थीं कि बात कैसे शुरू करें। उनका चेहरा लाल हो आया और अपनी मोटी उँगलियों से वे मेज़ पर ताल देती रहीं। आख़िर उन्होंने अटक-अटक कर बोलना शुरू किया :

"मोसिये पेचोरिन, मेरा ख़याल है कि आप एक शरीफ़ और इज़्ज़तदार आदमी हैं।"

मैंने ज़रा झुक कर कृतज्ञता प्रकट की।

"ख़याल ही नहीं, मुझे इसका पक्का यकीन भी है," उन्होंने बोलना ज़ारी रखा, "हालाँकि इधर आपका आचरण किसी कदर आपत्तिजनक रहा है। ख़ैर, हो सकता है, आपके पास इसके उचित कारण हों, जिन्हें मैं नहीं जानती; अगर सचमुच ऐसा हो तो आपको अब मुझे उनके बारे में बता देना चाहिए। आपने मेरी बेटी को एक लाँछन से बचाया है, जान हथेली पर रख कर उसके लिए द्वन्द्व लड़ा है और ऐसा करते वक्त अपनी ज़िन्दगी का जोखिम उठाया है... मेहरबानी करके जवाब में कुछ न बोलें, मैं जानती हूँ, आप इसे स्वीकार नहीं करेंगे, क्योंकि ग्रुश्नीत्स्की तो अब रहा नहीं।" (उन्होंने अपने सीने पर सलीब का निशान बनाया।) "आशा है ईश्वर उसे, और आपको भी क्षमा करेगा। उस सबसे मेरा कोई वास्ता नहीं... न ही आपको दोष देने का मुझे कोई अधिकार है, क्योंकि बिलकुल निर्दोष होते हुए भी इसका कारण मेरी बेटी थी। उसने मुझे सब कुछ बता दिया है... मेरे ख़याल से सब कुछ। आपने ज़ाहिर कर दिया है कि आप उससे प्यार करते हैं, और उसने भी आपके प्रति अपना प्रेम स्वीकार कर लिया है।" (यहाँ रानी साहिबा ने एक ठण्डी साँस खींची।) "लेकिन वह बीमार है, और मेरा ऐसा विश्वास है कि यह कोई साधारण बीमारी नहीं है। कोई भीतरी दुख उसे खाये जा रहा है। वह मुँह से तो कबूल नहीं करती, पर मुझे यकीन है कि इसका कारण आप ही हैं... मेरी पूरी बात सुन लीजिए : आप शायद यह सोचते हों कि मैं ओहदे और धन की खोज में हूँ... अगर ऐसी बात है, तो आप को ग़लत-फ़हमी है, मैं तो सिर्फ़ अपनी बेटी की ख़ुशी चाहती हूँ। यह ठीक है कि आपकी वर्तमान स्थिति ईर्ष्या के काबिल नहीं है, मगर कुछ दिनों बाद सब सुधर सकता है। आप अमीर हैं, मेरी बेटी आपसे प्यार करती है, और उसकी शिक्षा-दीक्षा ऐसी है कि वह अपने पति को सुखी रख सकती है। मेरे पास भी काफ़ी धन है, और वह मेरी इकलौती बच्ची है... अब बताइए, कौन-सी चीज़ आपको रोक रही है? मुझे शायद आपको यह सब न कहना चाहिए था, लेकिन मैं आपके दिल और ईमान पर भरोसा रखती हूँ... याद रखिए कि मेरी एक ही बेटी है... सिर्फ़ एक ही..."

वह सिसकने लगी।

"रानी साहिबा," मैंने कहा, "इसका उत्तर मैं आपको नहीं दे पाऊँगा; क्या आप मुझे अपनी बेटी से अकेले में बात करने की इजाज़त देंगी?"

"कभी नहीं!" अत्यधिक उत्तेजित हो कर कुर्सी से उठते हुए, वे ज़ोर से बोलीं।

"जैसी आपकी मर्ज़ी," मैंने चलने की तैयारी करते हुए जवाब दिया।

उन्होंने कुछ देर विचार किया, फिर मुझे ठहरने का इशारा करके कमरे से बाहर चली गयीं।

क़रीब पाँच मिनट गुज़र गये। मेरा दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था, लेकिन मेरे विचार व्यवस्थित और दिमाग़ बिलकुल शान्त था। मैंने सीने को राजकुमारी के प्रति प्यार की हल्की-सी चिनगारी के लिए कितना ही क्यों न टटोला, लेकिन मेरे सारे प्रयास असफल रहे।

दरवाज़ा खुला और वह भीतर आयी। हे भगवान! जब मैंने पिछली बार उसे देखा था, तब से वह कितनी बदल गयी थी और वह भी सिर्फ़ कुछ ही समय पहले की तो बात थी!

जब वह कमरे के बीचों-बीच आ गयी तो सहसा झूम उठी, मैं लपक कर उसकी बग़ल में जा पहुँचा, और बाँह का सहारा दे कर उसे एक आराम-कुर्सी तक ले गया।

फिर मैं उसके सामने खड़ा हो गया। काफ़ी देर तक हममें से कोई भी एक शब्द नहीं बोला। अकथनीय व्यथा से भरी उसकी बड़ी-बड़ी आँखें जैसे आशा से मेरी आँखों में कुछ खोज रही थीं, उसके विवर्ण होंठों ने मुस्कराने की असफल चेष्टा की, घुटनों के चारों ओर लिपटे उसके नाजुक हाथ इतने दुबले-पतले और पारदर्शक-से लग रहे थे कि मुझे सचमुच उस पर तरस आने लगा।

"राजकुमारी," मैंने कहा, "आप तो जानती हैं कि मैंने आपके साथ खिलवाड़ किया है, जानती हैं न? आपको तो मुझसे नफ़रत करनी चाहिए।"

उसके गाल जैसे ज्वर की लाली से तमतमा उठे।

"इसलिए, प्यार तो आप मुझसे कर ही नहीं सकतीं..." मैं बोलता रहा।

उसने मुँह दूसरी ओर फेर लिया, कुहनियाँ मेज़ पर टिका लीं और आँखों को हाथ से ढाँप लिया। मुझे लगा कि उसकी आँखों में आँसू छलछला आये हैं।

"हे भगवान!" उसने बहुत ही मन्द स्वर में कहा।

हालत बरदाश्त के बाहर होती जा रही थी, एक मिनट और गुज़रता तो मैंने ख़ुद को उसके पैरों पर फेंक दिया होता।

"इसलिए आप ख़ुद यह देख सकती हैं," मैं जितनी स्थिर और संयत आवाज़ में कह सकता था, होंठों पर जबरन मुस्कान लाते हुए मैंने कहा, "ख़ुद जानती हैं कि मैं आपसे शादी नहीं कर सकता। अगर फ़िलहाल आप ऐसा चाहती भी हों, तो अपने इस फ़ैसले पर आप बहुत जल्द पछताने लगेंगी। अभी आपकी माताजी के साथ मेरी जो बातचीत हुई है, उसकी वजह से ही मैं इतनी स्पष्टता और बेदर्दी से बात करने के लिए मजबूर हो रहा हूँ। मेरा ख़याल है, वे ग़लत-फ़हमी में हैं, मगर आप आसानी से उनका भ्रम दूर कर सकती हैं। आप ख़ुद ही देख सकती हैं कि मैं आपकी नज़रों में कैसी घृणित और नीच भूमिका अदा कर रहा हूँ, और मैं इसे स्वीकार भी करता हूँ। बस यही अधिक-के-अधिक मैं आप के लिए कर भी सकता हूँ। मेरे बारे में आप की धारणा कितनी ही ख़राब क्यों न हो, मैं उसे सर-माथे स्वीकार कर लूँगा। देखिए, मैं आपके सामने ख़ुद अपने आपको किस कदर गिरा रहा हूँ... अगर आप मुझे कभी प्यार भी करती रही होंगी, तो इस क्षण से आप मुझ से नफ़रत करने लगेंगी बताइए, करने लगेंगी न?"

उसने मेरी ओर अपना चेहरा घुमाया, जो संगमरमर-सा सफ़ेद हो गया था, लेकिन उसकी आँखें अद्भुत ढंग से चमक रही थीं।

"हाँ, मुझे आपसे नफ़रत है..." उसने कहा।

मैंने उसका शुक्रिया अदा किया, आदरपूर्वक झुका और बाहर चला आया।

घण्टे भर बाद तीन घोड़ों वाली एक डाक-गाड़ी मुझे ले कर किस्लोवोद्स्क से दूर तेज़ी से भागी जा रही थी। एस्सेन्तुकी गाँव से कुछ ही वर्स्ट पहले, सड़क के किनारे, मुझे अपने बहादुर घोड़े की लाश पड़ी दिखायी दी; ज़ीन ग़ायब हो चुकी थी शायद उधर से गुज़रते हुए किसी कज़ाक की हरकत थी और ज़ीन की जगह घोड़े की पीठ पर अब दो पहाड़ी कौए बैठे हुए थे। मैंने एक गहरी साँस खींच कर मुँह फेर लिया...

और अब, इस मनहूस और उदास किले में बैठे हुए, जब कभी मेरा दिमाग़ बीते हुए वक्त पर जा टिकता है तो मैं अक्सर ख़ुद से यह सवाल करता हूँ : मैंने उस राह पर चलना क्यों पसन्द नहीं किया, जिसे तकदीर ने मानसिक शान्ति और सुख-चैन-भरी खुशियों के वादों के साथ मेरे लिए खोल दिया था? मगर नहीं, मैं कभी उस ज़िन्दगी से समझौता न कर पाता, ऐसी ज़िन्दगी से मेल न बैठा पाता! मैं तो जैसे किसी लुटेरे

जहाज़ पर ही जन्मे और पले उस मल्लाह की तरह हूँ, जिसकी रग-रग तूफ़ानों और लड़ाइयों की इतनी आदी हो चुकी होती है कि अगर उसे कभी तट पर छोड़ दिया जाए तो वह ऊब जायेगा, कुम्हला जायेगा, भले ही तट के छायादार उपवन कितने आकर्षक और सूर्य की किरणें कितनी सुखद और सुनहली क्यों न हों। दिन-दिन भर वह विशाल तरंगों की एकरस गरज को सुनता हुआ, सुनसान, रेतीले तट पर भटकता रहेगा और धुँधली दूरियों को टकटकी लगाये ताकता रहेगा, ताकि नीली गहराइयों को सलेटी बादलों से अलग करती क्षितिज की फीकी-सी पट्टी में उसे उस चिर-प्रतीक्षित पाल की कौंधती हुई झलक मिल सके, जो पहले-पहल तो सागर-हंस के पंख सरीखा लगता है, फिर धीरे-धीरे लहरों के फेन से अलग उभर कर साफ़ नज़र आने लगता है ज्यों-ज्यों वह अपनी धीमी अनवरत गति से सूने एकाकी घाट की ओर बढ़ता है...

भाग्यवादी

एक बार मुझे बायें मोर्चे पर एक कज़ाक गाँव में लगभग दो हफ़्ते गुज़ारने का मौक़ा मिला। पैदल सिपाहियों की एक टुकड़ी ने वहाँ पड़ाव डाला हुआ था और फ़ौजी अफ़सर रोज़ शाम को ताश खेलने के लिए बारी-बारी से एक-दूसरे के क्वार्टरों में जमा होते।

एक बार मेजर के यहाँ बोस्टन से ऊब कर, हम लोगों ने पत्ते मेज़ के नीचे फेंक दिये और गयी रात तक बैठे बातें करते रहे, क्योंकि इस बार बातचीत काफ़ी दिलचस्प थी। हम मुसलमानों के इस विश्वास पर बहस कर रहे थे कि मनुष्य का भाग्य उसके जन्म से पहले ही स्वर्ग में निश्चित कर दिया जाता है, और ऐसा कहा जाता था कि हम ईसाइयों के बीच भी इस सिद्धान्त को मानने वाले काफ़ी तादाद में थे। हम में से हरेक के पास इसके पक्ष-विपक्ष में सुनाने के लिए कुछ अजीबो-ग़रीब घटनाएँ थीं।

"दोस्तो, जो कुछ भी आप लोगों ने अब तक कहा है, उससे कोई बात सिद्ध नहीं होती," बूढ़े मेज़र साहब बोले, "क्योंकि कुल मिलाकर, अपने नज़रिये के समर्थन में जिन अजीबो-ग़रीब घटनाओं का ज़िक्र आप कर रहे हैं, उन में से एक भी घटना आप में से किसी ने ख़ुद अपनी आँखों नहीं देखी, ठीक है न?"

"ख़ुद न देखी सही," कई लोग एक साथ बोल उठे, "मगर हमने इन्हें विश्वस्त अधिकारियों से ही सुना है।"

"बकवास!" किसी ने कहा, "कहाँ है वह विश्वस्त अधिकारी, जिसने उस कुण्डली को पढ़ा है, जिस पर हमारी मौत का क्षण लिखा हुआ है? और अगर प्रारब्ध नाम की कोई चीज़ सचमुच है तो फिर हमें यह इच्छा-शक्ति और विवेक क्यों दिये गये हैं? अपने कार्यों के लिए हमें ज़िम्मेदार क्यों ठहराया जाता है?"

इस बहसा-बहसी के दौरान, एक अफ़सर, जो कमरे के एक कोने में चुपचाप बैठा

हुआ था, उठा और धीरे-धीरे चलता हुआ मेज़ के पास आया, फिर उसने बड़ी ही शान्त और गम्भीर नज़र से हम सब का जायज़ा लिया। उसके नाम से ही पता चलता था कि उसकी पैदाइश सर्बिया की है।

लेफ़्टिनेण्ट वूलिच का चेहरा-मोहरा उसके चरित्र से मिलता-जुलता था लम्बा-चौड़ा कद; साँवला रंग; काले बाल; काली, भेदती हुई-सी आँखें; बड़ी-सी, लेकिन सुडौल नाक, जो उसके देश की विशेषता थी, और वह सर्द और उदास मुस्कान, जो हमेशा उसके होंठों पर खेलती रहती थी इन सबने मिल कर उसे एक असाधारण आदमी की सूरत-शक्ल प्रदान कर दी थी, जो अपने विचारों और भावनाओं में उन लोगों को हिस्सेदार बनाने के सर्वथा अयोग्य हो, जिन्हें किस्मत ने उसका साथी बना दिया था।

आदमी बहादुर था, बहुत कम बोलता था, पर था रूखा और मुँह-फट! वह किसी को भी अपने निजी और पारिवारिक रहस्यों का राजदाँ नहीं बनाता था, शायद ही कभी शराब पीता था और उन कज़ाक युवतियों से कभी इश्क नहीं जताता था, जिनकी ख़ूबसूरती और कशिश की तारीफ़ करने के लिए उन्हें देखना ज़रूरी है। फिर भी अफ़वाह यह थी कि कर्नल की बीवी उसकी काली, भाव-प्रवण आँखों का शिकार हो चुकी थी; लेकिन इस बात की तरफ़ इशारा करने पर वह हमेशा भड़क उठता था।

सिर्फ़ एक ही लत्त ऐसी थी, जिसे उसने कभी नहीं छिपाया था। और वह थी जुआ खेलने की लत! हरे रंग की मेज़ पर बैठते ही वह दीन-दुनिया सब भूल जाता था। वह अक्सर हारता था, मगर यह निरन्तर बदकिस्मती उसकी ज़िद के लिए ईंधन का काम करती थी। कहा जाता है, किसी मुहिम के दौरान एक रात उसका सितारा बेहद बुलन्द था और वह दाँव की रकम तकिये पर रखता जा रहा था। सहसा गोलियों की दनदनाहट सुनायी दी, ख़तरे का बिगुल बज उठा और हर आदमी उछल कर अपने-अपने हथियारों के लिए दौड़ पड़ा। लेकिन वूलिच के कान पर जूँ तक न रेंगी।

"दाँव लगाओ!" अपनी जगह से ज़रा भी हिले बिना, वूलिच ने एक अत्यन्त उत्साही जुआरी से चीख़ कर कहा।

"मेरे पास सत्ती है!" उस जुआरी ने झपट कर बाहर जाते हुए कहा। उस सारे हो-हल्ले और हंगामे के बावजूद वूलिच अन्त तक पत्ते बाँटता रहा, और हार गया।

जब वह लड़ाई के मैदान में पहुँचा, तो गोलियाँ ज़ोर-शोर से चल रही थीं। लेकिन वूलिच ने न तो गोलियों की परवाह की, न चेचेन तलवारों की; वह तो उस ख़ुश-किस्मत जुआरी को खोज रहा था।

आख़िरकार लड़ाकों की एक कतार में, जिसने शत्रु को जंगल के एक हिस्से से

खदेड़ना शुरू कर दिया था, वूलिच को वह जुआरी दिखायी दे ही गया। वूलिच ने उसे जा लिया।

"सत्ती ही निकली थी," मुठभेड़ के शोर-गुल के ऊपर वह चिल्लाया, और उसके पास पहुँच कर उसने अपनी थैली और बटुआ उस जुआरी को सौंप दिया; वह बेचारा इस असमय भुगतान के लिए मना करता ही रह गया, पर वूलिच ने उसकी एक न सुनी। उसकी आपत्तियों को नज़र-अन्दाज़ करते हुए, इस अप्रिय ज़िम्मेदारी को निभाकर, वूलिच सैनिकों की एक अगली कतार की ओर झपटा और लड़ाई के अन्त तक बड़े इतमीनान और शान्ति के साथ चेचेन दुश्मनों से लड़ता रहा।

जब लेफ़्टिनेण्ट वूलिच मेज़ के निकट आया तो सब लोग, हमेशा की तरह, इस बार भी किसी अनोखी और दिलचस्प बात की प्रतीक्षा में बिलकुल ख़ामोश हो गये।

"दोस्तो!" उसने कहा (हमेशा से कुछ धीमी होते हुए भी उसकी आवाज़ शान्त थी)। "दोस्तो, यह बेकार की बहस क्यों? आप लोग सबूत चाहते हैं न? मेरा प्रस्ताव है कि हम इस बात को ख़ुद अपने ऊपर आज़मा लें कि कोई आदमी अपनी मर्ज़ी के मुताबिक अपनी ज़िन्दगी को ख़त्म कर सकता है या वह होनी मुकद्दर ने पहले ही से तय कर दी है... कौन आज़माना चाहता है?"

"मैं नहीं, मैं नहीं!" चारों ओर से केवल यही एक उत्तर आया। "कैसा अजीब आदमी है! यही एक बात सूझी इसे।"

"मैं एक बाज़ी लगा सकता हूँ," मैंने मज़ाक में कहा।

"कैसी बाज़ी?"

"मेरा यह दावा है कि दुनिया में प्रारब्ध नाम की कोई चीज़ नहीं है।" मैंने अपनी जेबों से सोने की बीस मोहरें निकाल कर मेज़ पर उलटते हुए कहा उस समय संयोग से इतनी ही रकम मेरे पास थी।

"मंजूर है।" वूलिच ने धीमी आवाज़ में जवाब दिया, "मेज़र साहब, आप पंच बनेंगे। ये रहीं सोने की पन्द्रह मोहरें। पाँच मोहरें आपने मुझे पहले से देनी हैं। सो क्या आप कृपा करके इस कमी को अभी पूरा कर देंगे?"

"ज़रूर," मेज़र ने कहा, "हालाँकि मुझे इस बात का ज़रा भी अन्दाज़ा नहीं कि यह सब हो क्या रहा है, या आप लोग कैसे इस मामले को तय करने वाले हैं।"

बिना कुछ बोले, वूलिच मेज़र साहब के सोने के कमरे में चला गया; हम उसके पीछे-पीछे थे। एक दीवार के पास जाकर, जिस पर तरह-तरह के हथियार सजे हुए थे,

उसने वहाँ लटकी हुई भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार की कई पिस्तौलों में से यों ही एक पिस्तौल उतार ली। पहले तो हम लोग यह समझ ही नहीं पाये कि वह करने क्या जा रहा है; लेकिन जब उसने पिस्तौल का घोड़ा चढ़ाया और उसमें रंजक डाला, तो हम में से कइयों ने अनायास ही चीख़ कर उसकी बाँहें पकड़ लीं।

"अरे, यह क्या करने जा रहे हो? पागल हो गये हो क्या?" हम में से कुछेक ने चिल्ला कर उससे पूछा।

"दोस्तो!" अपनी बाँहें छुड़ाते हुए उसने बड़े धीर-गम्भीर स्वर में कहा, "आप में से कौन मेरी ओर से सोने की बीस मोहरें अदा करने के लिए तैयार है?"

सब ख़ामोश हो कर पीछे हट गये।

वूलिच दूसरे कमरे में जा कर मेज़ के पास रखी कुर्सी पर बैठ गया; हम सभी उसके पीछे-पीछे दूसरे कमरे में चले आये थे। उसने हम को मेज़ के चारों ओर बैठ जाने का इशारा किया। हम लोगों ने चुपचाप उसकी आज्ञा का पालन किया, क्योंकि उस समय हम पर न जाने कैसी रहस्यमय शक्ति उसे प्राप्त हो गयी थी। मैंने ग़ौर से उसकी आँखों में देखा, मगर उसकी आँखों ने मेरी खोजती हुई-सी नज़र का सामना बिलकुल शान्ति और दृढ़ता के साथ किया, और उसके सफ़ेद होंठों पर एक मुस्कान दौड़ गयी। लेकिन उसकी संजीदगी और ठहराव के बावजूद मुझे ऐसा लगा कि उसके पीले चेहरे पर मैं मौत की मुहर साफ़ पढ़ सकता था। मैंने अक्सर यह देखा है, और बहुत-से तपे हुए फ़ौजियों ने मेरी इस धारणा की पुष्टि भी की है, कि उस आदमी के चेहरे पर, जिसे कुछ ही घण्टों के अन्दर मर जाना हो, उसके न टलने वाले काल का कोई-न-कोई अजीब-सा चिह्न अक्सर उभर आता है, जो अनुभवी आँखों से छिपा नहीं रहता।

"तुम्हारी मौत निश्चय ही आज हो जायेगी," मैंने उससे कहा। वह तेज़ी से मेरी ओर घूमा, मगर उसी धीर-गम्भीर स्वर में उसने जवाब दिया :

"हो भी सकता है, और नहीं भी हो सकता..."

फिर मेज़र साहब की ओर मुड़ कर उसने पूछा कि क्या पिस्तौल में गोली भरी हुई है? अपनी व्यग्रता और उलझन में मेज़र साहब ठीक से याद नहीं कर पाये।

"बस, अब बहुत हो गया वूलिच!" हम में से कोई चिल्लाया, "जब पिस्तौल बिस्तर के सिरहाने लटकी थी तो भरी ही होगी। यह भला किस तरह का मज़ाक है?"

"बेहूदा मज़ाक है!" कोई दूसरा बोला।

"मैं पाँच के बदले पचास की शर्त लगाता हूँ, पिस्तौल भरी हुई नहीं है।" कोई

तीसरा चीख़ कर बोला।

दनादन कई नये दाँव लगाये जाने लगे।

इस अन्तहीन आयोजन से मुझे बेहद अरुचि होने लगी।

"देखो वूलिच," मैंने कहा, "या तो गोली चलाओ या फिर पिस्तौल को उसकी जगह पर जहाँ-का-तहाँ लटका दो और हमें जा कर सोने दो।"

"ठीक है," कई लोग एक साथ बोल उठे, "आओ, अब सोने चलें।"

"दोस्तो, मैं अनुरोध करता हूँ कि आप अपनी जगह से न हिलें!" वूलिच ने पिस्तौल की नली अपनी कनपटी से लगाते हुए कहा। हम जैसे पथरा कर खड़े रह गये।

"मिस्टर पेचोरिन," उसने कहना ज़ारी रखा, "क्या आप ताश का एक पत्ता उठा कर हवा में उछालेंगे।"

अब मुझे याद आता है, मैंने मेज़ से पान का इक्का उठा कर हवा में उछाला था। साँस रोके और आँखों में आतंक तथा एक अस्पष्ट-सी उत्सुकता लिये, हम कभी पिस्तौल और कभी उस घातक इक्के की ओर देख रहे थे, जो अब फड़फड़ाता हुआ धीरे-धीरे नीचे गिर रहा था। जैसे ही पत्ता मेज़ पर गिरा, वूलिच ने पिस्तौल की लिबलिबी दबा दी गोली नहीं चली।

"ख़ुदा का शुक्र है!" एक साथ कई आवाज़ें आयीं, "पिस्तौल में गोली नहीं भरी थी..."

"यह भी अभी देखे लेते हैं," वूलिच ने कहा। उसने फिर पिस्तौल का घोड़ा चढ़ाया और खिड़की के ऊपर लटकती हुई एक फ़ौजी टोपी का निशाना साधा। धमाके की आवाज़ हुई और कमरा धुएँ से भर गया। धुआँ छँटने पर वह टोपी नीचे उतारी गयी उसके ठीक बीचों-बीच एक छेद था और गोली दीवार के भीतर दूर तक धँस गयी थी।

पूरे तीन मिनट तक हम में से किसी के मुँह से एक शब्द नहीं निकला; वूलिच ने बड़े आराम से मेरी मोहरें अपने बटुए के हवाले कीं।

अब लोगों ने पिस्तौल के पहली बार न छूटने के बारे में अटकलें लगानी शुरू कीं; कुछ ने कहा कि नली रुकी हुई थी; दूसरों ने दबी ज़बान से यह आशंका प्रकट की कि शुरू में बारूद सीला था, पर बाद में वूलिच ने ताज़ा बारूद छिड़क दिया था; लेकिन मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि उनका यह दूसरा अनुमान न्याय-संगत नहीं था, क्योंकि मैंने पल भर के लिए भी पिस्तौल से अपनी आँखें नहीं हटायी थीं।

"तुम्हें सचमुच जुआरी की तकदीर मिली है!" मैंने वूलिच से कहा।

"ज़िन्दगी में पहली बार," वह सन्तोष से मुस्कराता हुआ बोला, "फ़ारो या श्तॉस से तो यही खेल अच्छा है।"

"लेकिन कुछ ज़्यादा ख़तरनाक भी!"

"अरे? क्या आप भाग्य में विश्वास करने लगे?"

"मैं भाग्य में ज़रूर विश्वास करता हूँ। मैं सिर्फ़ यह समझ नहीं पा रहा कि मुझे ऐसा क्यों लगा, तुम आज ही मरने वाले हो..."

वही आदमी, जिसने कुछ ही देर पहले इतनी लापरवाही और बेफ़िक्री के साथ पिस्तौल की नली अपने माथे से लगा ली थी, अब अचानक भड़क गया और हड़बड़ा कर अस्त-व्यस्त-सा हो उठा।

"बस करिए!" उसने उठते हुए कहा, "हमारी बाज़ी ख़त्म हो चुकी है और अब आपके ये फ़िकरे मुझे बेमौक़ा लगते हैं..." उसने अपनी टोपी उठायी और बाहर चला गया। उसका यह व्यवहार मुझे बड़ा अजीब-सा लगा उचित ही!

जल्द ही सब चले गये। रास्ते में हर आदमी वूलिच के इस पागलपन पर टीका-टिप्पणी करता जा रहा था, और शायद सर्व-सम्मति से मुझे अहंकारी करार दे रहा था कि मैंने ऐसे आदमी से बाज़ी लगायी, जो ख़ुद अपने आपको गोली मारने के लिए तैयार हो गया; मानो वह इस काम के लिए मेरी मदद के बिना कोई दूसरा उपयुक्त मौक़ा ही न ढूँढ़ पाता!

बस्ती की सुनसान गलियों से हो कर मैं घर लौट आया, अँगीठी की आँच की तरह लाल-सुर्ख़ पूर्णिमा का चाँद, मकानों की छतों की टेढ़ी-मेढ़ी किंग्रीदार कतार के पीछे से बस ऊपर उठ ही रहा था। गहरे नीले आसमान में तारे चुप-चुप झिलमिला रहे थे और यह सोच कर मन-ही-मन मुझे हँसी आयी कि किसी ज़माने में ऐसे ऋषि-मुनि भी थे, जिनका विश्वास था कि ज़मीन के ज़रा-से टुकड़े या किन्हीं दूसरे काल्पनिक अधिकारों को ले कर होने वाले क्षुद्र झगड़ों में इन आसमानी ग्रहों की गहरी हिस्सेदारी है। फिर भी ये चिराग़, जो वे सोचते थे सिर्फ़ उन्हीं की लड़ाइयों और विजयों को रोशन करने के लिए जलाये गये थे, आज भी उसी चमक-दमक और सतत आलोक के साथ रोशन हैं, जबकि उन लोगों के आवेग और आशाएँ-आकांक्षाएँ उन्हीं के साथ-साथ कभी की बुझ चुकी हैं, जैसे किसी लापरवाह राही द्वारा जंगल के छोर पर जला कर छोड़ दिया गया अलाव बुझ जाता है। लेकिन इस आस्था और

विश्वास से वे कितनी आन्तरिक शक्ति प्राप्त करते थे कि ये सारे स्वर्गीय लोक अपने अगणित निवासियों के साथ उनकी ओर निरन्तर, लेकिन मूक सहानुभूति से, निहार रहे हैं! जबकि हम, उन्हीं के अभागे वंशज जो किसी भी आस्था या गर्व के बिना; उस अनिवार्य अन्त के ख़याल से हृदय को विकुंचित करने वाले बेनाम-से आतंक के सिवा और किसी भी भय अथवा उल्लास के बिना इस पृथ्वी पर भटकते-फिरते हैं, हम अब इन्सानियत की भलाई के लिए या अपने निजी सुखों ही के लिए महान कुर्बानियों या बलिदानों के काबिल नहीं रह गये, क्योंकि हम जानते हैं कि सुख-चैन असम्भव है। और जिस तरह हमारे पुरखे एक भ्रान्ति से दूसरी भ्रान्ति में भटका करते थे, ठीक वैसे ही हमलोग भी एक अविश्वास से दूसरे अविश्वास में उदासीनता से भटकते हैं बिना उन उम्मीदों के, जो हमारे उन पुरखों में थीं और बिना उस अस्पष्ट, लेकिन प्रबल, उल्लास की अनुभूति के, जो तकदीर अथवा मनुष्यों से किसी भी किस्म का संघर्ष करते वक्त आत्मा प्राप्त करती है...

इन्हीं से मिलते-जुलते अनेक विचार मेरे दिमाग़ में आ-जा रहे थे। मैंने उनके आवागमन पर कोई रोक नहीं लगायी, क्योंकि अमूर्त विचारों की उधेड़बुन करते रहना मुझे पसन्द नहीं इसलिए भी कि उनसे हासिल ही क्या होगा? अपनी जवानी के शुरू में मैं सपने देखा करता था। कभी उदास, कभी चमकती हुई उन रंग-बिरंगी तस्वीरों से खिलवाड़ करना मुझे पसन्द था, जो मेरी बेचैन, उत्सुक कल्पना मेरे लिए अंकित करती थी। लेकिन उस सबसे आख़िर मैंने क्या हासिल किया? सिर्फ़ थकान, जैसे किसी छाया के साथ रात भर लड़ने का नतीजा, और पछतावे से भरी धुँधली यादें! इस निष्फल संघर्ष में मैंने आत्मा की वह ऊष्मा और इच्छा-शक्ति की वह दृढ़ता खपा दी, जो सक्रिय जीवन के लिए आवश्यक है। और जब मैंने उस जीवन की यात्रा शुरू की तो मैं अपने ख़यालों में ही उसे पूरी तरह जी चुका था और इसीलिए वह मेरे लिए उतनी ही ऊबाऊ और अरुचिकर बन गयी है, जितनी एक जानी-पढ़ी, चिरपरिचित किताब की फूहड़ नकल।

उस शाम की घटनाओं ने मेरे ऊपर बहुत गहरा प्रभाव डाला था, और मेरी नसें उत्तेजित थीं। मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि मैं आज प्रारब्ध में विश्वास करता हूँ या नहीं, लेकिन उस रात उसमें मेरा दृढ़ विश्वास था। सबूत ज़ोरदार था, और इस बात के बावजूद कि मैंने अपने पुरखों और उनके उपकारी ज्योतिष का मज़ाक उड़ाया था, मैं उस समय अनायास उन्हीं के मुताबिक सोचने लगा था। लेकिन इस ख़तरनाक रास्ते पर मैंने अपने आपको ठीक समय पर ही रोक लिया, और चूँकि मैंने किसी बात को बिना विचारे कभी अस्वीकार न करने और किसी चीज़ में अन्धा यकीन न करने का नियम बना रखा था, इसलिए मैंने दर्शन और अध्यात्म को तो एक किनारे लगाया

और अपने पैरों के नीचे की ज़मीन की ओर ध्यान से देखता हुआ चलने लगा। मेरी यह सावधानी बड़ी बामौक़ा थी, क्योंकि उसी समय मैं किसी भारी और नरम, लेकिन साथ ही निर्जीव-सी चीज़ से ठोकर खा कर गिरते-गिरते बचा। मैं नीचे झुका चाँद अब सड़क पर अपनी रोशनी बिखेर रहा था और मैंने अपने सामने ज़मीन पर एक सुअर को तलवार से दो टुकड़े हुआ पड़ा पाया। ...अभी मैं उसे पूरी तरह देख भी न पाया था कि पैरों की आहट सुनायी दी और बग़ल की एक गली से दो कज़ाक बगटुट दौड़ते आये। उनमें से एक ने मेरे पास आ कर पूछा कि मैंने शराब में धुत्त किसी कज़ाक को एक सुअर का पीछा करते हुए तो नहीं देखा? मैंने उन्हें बताया कि मैंने उस कज़ाक को तो नहीं देखा, लेकिन उसके भीषण पराक्रम के अभागे शिकार उस सुअर की तरफ़ मैंने उनका ध्यान दिलाया।

"जंगली कहीं का!" दूसरा कज़ाक बोला। "जहाँ उसने जी भर कर चिख़िर चढ़ायी नहीं कि रास्ते की हर चीज़ को मारने-काटने बाहर दौड़ जाता है। आओ येरेमेइच, जल्दी से उसको पकड़ें, उसे बाँधना ही पड़ेगा, वरना..."

वे दौड़ते हुए चले गये, और मैंने पहले से अधिक सावधानी के साथ अपना रास्ता तय करना शुरू कर दिया। आख़िरकार मैं सही-सलामत अपने क्वार्टर तक पहुँच गया।

मैं एक बूढ़े कज़ाक हवलदार के साथ ठहरा हुआ था, जिसे मैं उसके सहृदय स्वभाव और विशेष कर उसकी ख़ूबसूरत लड़की नास्त्या के कारण बहुत पसन्द करता था।

समूर के कोट में लिपटी हुई, वह सदा की तरह अपने घर के फाटक पर मेरी राह देख रही थी, रात की सर्दी के नीले पड़े उसके नाज़ुक, रसीले होंठ चाँदनी में चमक रहे थे। मुझे देखते ही वह मुस्कुरा दी, मगर मेरा दिमाग़ तो दूसरी ही बातों में उलझा हुआ था। "नमस्कार, नास्त्या," मैंने उसके पास से गुज़रते हुए कहा। वह जवाब में कुछ कहने वाली थी, लेकिन सिर्फ़ एक ठण्डी साँस भर कर रह गयी।

मैंने दरवाज़ा भीतर से बन्द किया, एक मोमबत्ती जलायी और बिस्तर पर जा पड़ा, लेकिन मुझे आज रात नींद आम तौर की निस्बत और भी देर से आयी। जब आख़िरकार मैं सोया तो पूरब की ओर हल्का-सा उजाला होना शुरू हो चुका था। सचमुच विधाता ने उस रात नींद मेरी किस्मत में लिखी ही नहीं थी। सुबह चार बजे के क़रीब मेरी खिड़की पर कोई ज़ोर-ज़ोर से दस्तक देने लगा। मैं उछल कर खड़ा हो गया। क्या माज़रा था?

"जल्दी उठ कर कपड़े पहनो!" एक साथ कई आवाज़ें सुनायी दीं। मैं फुर्ती से कपड़े पहन कर बाहर निकल आया।

"कुछ ख़बर भी है, क्या हो गया है?" मेरे पास आये हुए तीनों अफ़सरों ने एक साथ मुझसे कहा, उनके चेहरों पर मुर्दनी छायी हुई थी।

"क्या हुआ?"

"वूलिच मार दिया गया है!"

मैं स्तब्ध खड़ा रह गया।

"हाँ, मार दिया गया है!" वे बोलते गये! "आओ, जल्दी चलें।"

"कहाँ?"

"रास्ते में सब बता देंगे।"

हम रवाना हो गये। जो कुछ हो गुज़रा था, उन्होंने सब मुझे कह सुनाया, साथ-साथ वे क़िस्से में वूलिच की उस अजीब-सी किस्मत के बारे में अपने विभिन्न विचार भी जोड़ते रहे, जिसने मौत से आध घण्टा पहले ही वूलिच को निश्चित रूप से काल के मुँह में जाने से बचा लिया था। बेचारा सरबियन एक अँधेरी सड़क पर अकेला चलता जा रहा था, तभी शराबी कज़ाक जिसने उस सुअर के दो टुकड़े कर दिये थे, उससे जा टकराया, और शायद उसकी ओर ज़रा-सा भी ध्यान दिये बिना अपने रास्ते चला भी गया होता, अगर वूलिच ने ही अचानक उसे रोक कर यह पूछा न होता :

"किसकी तलाश कर रहे हो, भाई?"

"तुम्हारी!" कज़ाक ने उसे अपनी तलवार के एक ही वार से कन्धे से ले कर लगभग दिल तक चीरते हुए जवाब दिया... इसके बाद वे दोनों कज़ाक जो मुझे मिले थे, हत्यारे का पीछा करते हुए उस जगह पर आ पहुँचे। उन्होंने घायल सरबियन को उठाया, लेकिन वह अन्तिम साँसें ले रहा था और केवल इतना ही बोल सका : "उसने ठीक ही कहा था।" सिर्फ़ मैंने ही इन शब्दों के अशुभ अमंगल शकुन को समझा, ये शब्द दरअसल मेरे ही लिए कहे गये थे। मैंने अनजाने ही उस बेचारे आदमी की मौत के बारे में पेशगोई कर डाली थी। मेरे सहज ज्ञान ने मुझे धोखा नहीं दिया था और मैंने सचमुच उसके चेहरे के बदले हुए नाक-नक्शे पर मौत की न टलने वाली मुहर को पढ़ लिया था।

हत्यारे ने बस्ती के परले छोर के एक ख़ाली बँगले में जा कर अपने को बन्द कर लिया था। हम लोग सीधे वहीं गये। औरतों की एक अच्छी-ख़ासी भीड़ भी, रोती-चिल्लाती और हाय-तोबा मचाती, उसी दिशा में दौड़ी जा रही थी। इतनी देर के बाद भी रह-रह कर इर्द-गिर्द की किसी झोंपड़ी से कोई कज़ाक हड़बड़ाता हुआ उछल कर

निकलता और कटार या तलवार का पट्टा कमर से कसता-बाँधता, हमारी बग़ल से दौड़ता हुआ आगे भाग जाता। चारों ओर एक भयानक शोर-गुल और अफ़रा-तफ़री का आलम था।

आख़िरकार हम लोग मौके पर पहुँच ही गये और हमने पाया कि एक अच्छी-ख़ासी भीड़ उस झोंपड़ी के पास जमा हो चुकी थी, जिसके दरवाज़े और खिड़कियाँ भीतर से बन्द कर लिये गये थे। अफ़सरों और कज़ाकों में गरमागरम बहस चल रही थी; औरतें हाय-हल्ला मचाती हुईं, चीख़-चीख़ कर रो रही थीं। उन्हीं में से एक बूढ़ी औरत की तरफ़ मेरा ध्यान गया, जिसके चेहरे से बेपनाह व्यग्रता, हताशा और मायूसी टपक रही थी। वह लकड़ी के एक भारी से कुन्दे पर बैठी हुई थी, उसकी कुहनियाँ घुटनों पर टिकी थीं और उसने सिर को हाथों से सहारा दे रखा था। वह उस हत्यारे की माँ थी। रह-रह कर उसके होंठ फड़क उठते... जाने प्रार्थना में या कोसनों में?

इस बीच कोई-न-कोई फ़ैसला करना और अपराधी को गिरफ़्तार करना ज़रूरी था। लेकिन आगे बढ़ कर भीतर घुसने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

मैंने खिड़की के पास जा कर उसके पल्ले की झिरी में से भीतर झाँका। वह आदमी अपने दाहिने हाथ में एक पिस्तौल पकड़े, फ़र्श पर पसरा हुआ था, उसके बग़ल में ही एक ख़ून-सनी तलवार पड़ी थी। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया था, और भावपूर्ण आँखों की पुतलियाँ भय से इधर-उधर नाच रही थी; रह-रह कर एक कँपकँपी उसके शरीर में दौड़ जाती और वह हाथों से अपना सिर भींच लेता, मानो बीते हुए दिन की घटनाओं को अस्पष्टता से याद करने की कोशिश कर रहा हो। उसकी व्याकुल और बेचैन निगाहों में ज़रा भी दृढ़ता और संकल्प नहीं दिखता था और मैंने मेजर साहब से कहा कि कज़ाकों को दरवाज़ा तोड़ कर भीतर धावा बोलने का हुक्म न देने का कोई कारण नहीं था, क्योंकि बाद में, जब वह आदमी अपने होश-हवास फिर हासिल कर लेगा, तब ऐसा करने की अपेक्षा अभी यह कर डालना बेहतर था।

तभी कज़ाकों के एक बूढ़े कप्तान ने दरवाज़े के पास जा कर भीतर बन्द आदमी को नाम ले कर पुकारा; भीतर से उसने जवाब भी दिया!

"तुमने पाप कर डाला है, भाई येफेमिच," कज़ाक कप्तान ने कहा, "और अब इसके सिवा कोई चारा नहीं कि तुम ख़ुद को न्याय के हवाले कर दो।"

"मैं समर्पण नहीं करूँगा!" कज़ाक ने जवाब दिया।

"ख़ुदा का खौफ़ करो! तुम कोई काफ़िर चेचेन तो हो नहीं, ईमानदार ईसाई हो। भटक गये हो और तुमने ग़लत काम किया है और अब कोई दूसरा रास्ता नहीं बचा है।

तुम अपने कर्मों के फल से बच नहीं सकते!"

"मैं समर्पण नहीं करूँगा!" कज़ाक ने कड़क कर धमकी-भरे अन्दाज़ में कहा, और हमने सुना, उसने 'खट' से पिस्तौल का घोड़ा चढ़ाया।

"ओ अम्मा!" कज़ाक कप्तान ने उस बूढ़ी औरत को पुकार कर कहा। "तुम्हीं अपने बेटे से बात करो। उसे समझाओ। शायद वह तुम्हारी ही बात मान ले... आख़िरकार, इस तरह का काम तो भगवान की अवज्ञा करना ही है। देखो, ये भलेमानस दो घण्टे से यहाँ खड़े इन्तज़ार कर रहे हैं।"

बुढ़िया ने ग़ौर से उसकी ओर देखा और सिर हिला दिया।

"वासिली पेत्रोविच," कज़ाक कप्तान ने मेज़र साहब के निकट जा कर कहा, "मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ, वह समर्पण नहीं करेगा। और अगर हम दरवाज़ा तोड़ते हैं तो वह हमारे बहुत-से आदमियों को मार डालेगा। क्या यह बेहतर न होगा कि आप उसे गोली से उड़ा देने का हुक्म दे दें? खिड़की के पल्ले में एक बड़ा-सा छेद है।"

उसी क्षण एक अजीबोग़रीब ख़याल मेरे दिमाग़ में बिजली की तरह कौंध गया। वूलिच की तरह मैंने भी अपनी तकदीर को आज़माने की सोची।

"ठहरिए," मैंने मेज़र साहब से कहा, "मैं उसे ज़िन्दा ही पकड़ लूँगा।"

कज़ाक कप्तान को यह कहते हुए कि वह उसे बातों में लगाये और तीन कज़ाकों को झोंपड़ी के दरवाज़े पर यह हिदायत दे कर खड़ा करते हुए कि जैसे ही संकेत मिले, वे फ़ौरन दरवाज़ा तोड़ कर मेरी मदद को भीतर घुस पड़ें, मैं झोंपड़ी का एक चक्कर लगा कर, तेज़ी से धड़कता दिल लिये, उस घातक खिड़की के पास जा पहुँचा।

"अरे ओ, नालायक!" कज़ाक कप्तान ने ज़ोर से चिल्ला कर कहा, "तू हमारी खिल्ली उड़ा रहा है या और कोई इरादा है? या शायद तू सोच रहा है कि हम तुझे पकड़ नहीं पायेंगे?" वह पूरी ताक़त से दरवाज़े को ठोंकने लगा। उधर मैं छेद से आँख लगा कर, भीतर बन्द उस कज़ाक की हरकतों को देखने लगा, जिसे इस तरफ़ से हमले का कोई अन्देशा नहीं था; फिर मैंने सहसा खिड़की के पल्ले को ज़ोर का धक्का लगा कर अलग कर दिया और सिर के बल खिड़की के भीतर कूद पड़ा। मेरे कान के ठीक पास ही से पिस्तौल छूटने की आवाज़ हुई और गोली मेरे एक झब्बे को चीर कर अलग करती चली गयी। कमरे में धुआँ भर गया, जिससे मेरे विरोधी को वह तलवार नहीं मिल पायी, जो उसकी बग़ल में पड़ी हुई थी। मैंने उसे बाँहों से कस कर पकड़ लिया; तीनों कज़ाक भी दरवाज़ा तोड़ कर भीतर घुस आये और तीन मिनट के अन्दर ही अपराधी बाँध-बूँध कर पहरे में वहाँ से ले जाया जा चुका था। लोग छँट गये और अफ़सरों ने मेरा शुक्रिया

अदा करते हुए मुझे बधाइयाँ दीं... और सचमुच ऐसा करने का उनके पास पर्याप्त कारण भी था।

इस सबके बाद कोई आदमी भाग्यवादी होने से कैसे बच सकता है? लेकिन यही कौन पक्की तरह जानता है कि वह किसी चीज़ का कायल है अथवा नहीं? और जाने कितनी बार हम होश-हवास की भूल-चूक को या विवेक की भ्रान्ति को दृढ़ धारणा या विश्वास समझने की ग़लती कर बैठते हैं।

मैं हर चीज़ पर सन्देह करना पसन्द करता हूँ; स्वभाव की ऐसी बनावट चरित्र की दृढ़ता में पहले ही से कतई रुकावट पैदा नहीं करती; इसके विपरीत, जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, जब मुझे यह नहीं मालूम होता कि आगे क्या होने वाला है, तब मैं और भी ज़्यादा दिलेरी से आगे बढ़ता हूँ। आख़िर मौत से बुरा तो कुछ होगा नहीं... और मौत से हम बच नहीं सकते!

जब मैं किले में वापस आया तो मैंने मैक्सिम मैक्सिमिच को उस सबके बारे में बताया, जो मैंने देखा था और जिसका तजुर्बा मुझे हुआ था, और प्रारब्ध के बारे में उसकी राय जाननी चाही। पहले-पहल तो वह इस शब्द का अर्थ ही नहीं समझा, लेकिन जब मैंने यथा-शक्ति इस शब्द की व्याख्या करके, इसका अर्थ उसे समझाया, तब उसने बड़े ही अर्थ-भरे, महत्वपूर्ण अन्दाज़ में सिर हिला कर कहा :

"हाँ, जनाब! कुछ अजीब ही मामला है यह। और कुल-मिला कर यह भी सच है कि ये एशियाई पिस्तौलें अक्सर धोखा दे जाती हैं अगर इनकी तेल-सफ़ाई ठीक से न की गयी हो या अगर घोड़े को पूरी ताकत से न दबाया गया हो। और सच्ची बात तो यह है कि मुझे ये चेरकस बन्दूकें भी पसन्द नहीं हैं; हम जैसों के लिए ये कतई सुविधाजनक और उपयुक्त नहीं होतीं; कुन्दा इतना छोटा होता है कि अगर आप ध्यान न रखें तो आपकी नाक ही झुलस जाय... हाँ, उनकी तलवारों की बात दूसरी है... उनकी मैं पूरी कदर करता हूँ।"

फिर थोड़ी देर सोच कर उसने आगे जोड़ा :

"उस बेचारे अभागे के लिए अलबत्ता मुझे दुख है... उसे भी आधी रात के वक्त उस शराबी को टोकने की क्या सूझी? लेकिन मेरा ख़याल है, उसके नसीब में यही लिखा था!"

इससे ज़्यादा और कुछ मैं उससे कहलवा नहीं सका। आम तौर से आध्यात्मिक बातचीत में वह किसी किस्म की दिलचस्पी नहीं रखता।

••

नीलाभ

।म : 16 अगस्त 1945, बम्बई। शिक्षा : एम.ए. तक
ाहाबाद में। पढ़ाई के दौरान ही लेखन की शुरुआत।
ाजीविका के लिए आरम्भ में प्रकाशन। फिर 1980 में
र वर्ष बी.बी.सी. की विदेश प्रसारण सेवा में प्रोड्यूसर।
)84 में भारत वापसी के बाद लेखन पर निर्भर।

'स्मरणारम्भ,' 'अपने आप से लम्बी बातचीत,' 'जंगल
ामोश है,' 'उत्तराधिकार,' 'चीज़ें उपस्थित हैं,' 'शब्दों से
ता अटूट है,' 'शोक का सुख,' 'ख़तरा अगले मोड़ की
त तरफ़ है,' 'ईश्वर को मोक्ष' और 'जहाँ मैं साँस ले रहा
अभी' (कविता-पुस्तकें) 'हिचकी' (उपन्यास)
ानरंजन के बहाने' (संस्मरण) 'प्रतिमानों की पुरोहिती'
ार 'पूरा घर है कविता' (आलोचना)

वनानन्द दास, सुकान्त, भट्टाचार्य, एज़रा पाउण्ड,
ट, तादेउष रोज़ेविच, नाज़िम हिकमत, अरनेस्तो
दिनाल, निकानोर पार्रा और पाब्लो नेरूदा की
विताओं; अरुन्धती राय के उपन्यास 'गॉड ऑफ़ स्मॉल
ग्स' और लेर्मोन्तोव के उपन्यास 'हमारे युग का एक
यक,' सलमान रश्दी के उपन्यास 'फ़्लोरेन्स की
ादूगरनी' और वी.एस. नायपॉल के उपन्यास 'मि.
स्वास का मकान' के अलावा मुख़्तारन माई की
ापबीती 'इज़्ज़त के नाम पर' के अनुवाद। मंटो की
हानियों के प्रतिनिधि चयन 'मंटो की तीस कहानियाँ'
ा सम्पादन। महात्मा गाधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी
श्वविद्यालय के लिए चार खण्डों में 'हिन्दी साहित्य का
खिक इतिहास।'

नेक नाटकों के रूपान्तर। रंगमंच के अलावा
ीविज़न, रेडियो, पत्रकारिता, फ़िल्म, ध्वनि-प्रकाश
र्यक्रमों तथा नृत्य-नाटिकाओं के लिए पटकथाएँ और
लेख। फ़िल्म, चित्रकला, जैज़ तथा भारतीय संगीत में
स दिलचस्पी।